MAHN201CCT

आधुनिक हिंदी काव्य

(भाग -2, 1936 के बाद)

एम.ए.
(द्वितीय सेमेस्टर के लिए)
पेपर-5

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय
मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी
हैदराबाद-32, तेलंगाना, भारत

© Maulana Azad National Urdu University, Hyderabad
Course : Adhunik Hindi Kavya
ISBN: 978-93-95203-XX-X
First Edition: October, 2023

Publisher	:	Registrar, Maulana Azad National Urdu University
Edition	:	2023
Copies	:	1000
Copy Editing	:	Dr. Wajada Isharat, MANUU, Hyderabad Dr. L. Anil, DDE, MANUU, Hyderabad
Cover Designing	:	Dr. Mohd. Akmal Khan, DDE, MANUU, Hyderabad
Printing	:	Print Times & Business Enterprises, Hyderabad

Adhunik Hindi Kavya

For

M.A. Hindi

2nd Semester

On behalf of the Registrar, Published by:

Directorate of Distance Education

Maulana Azad National Urdu University

Gachibowli, Hyderabad-500032 (TS), Bharat

*Director:*dir.dde@manuu.edu.in *Publication:* ddepublication@manuu.edu.in

Phone number: 040-23008314 Website: manuu.edu.in

© All rights reserved. No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronically or mechanically, including photocopying, recording or any information storage or retrieval system, without prior permission in writing from the publisher (registrar@manuu.edu.in)



संपादक

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Editor

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar
DDE, MANUU

संपादक-मंडल
(Editorial Board)

प्रो. ऋषभदेव शर्मा
पूर्व अध्यक्ष, उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, हैदराबाद
परामर्शी (हिंदी), दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Prof. Rishabhadeo Sharma
Former Head, Higher Education and Research Centre, Dakshin Bharat Hindi Prachar Sabha, Hyderabad
Consultant (Hindi), DDE, MANUU

प्रो. श्याम राव राठोड़
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
अंग्रेज़ी और विदेशी भाषा वि.वि.,हैदराबाद

Prof. Shyamrao Rathod
Head, Department of Hindi
EFL University, Hyderabad

डॉ. गंगाधर वानोडे
क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान, सिकंदराबाद, हैदराबाद

Dr. Gangadhar Wanode
Regional Director
Central Institute of Hindi
Hyderabad Centre, Secunderabad, Hyd

डॉ. आफताब आलम बेग
सहायक कुल सचिव,
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Aftab Alam Baig
Assistant Registrar, DDE, MANUU

डॉ. वाजदा इशरत
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. Wajada Ishrat
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

डॉ. एल. अनिल
अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा)
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, मानू

Dr. L. Anil
Guest Faculty/Assistant Professor (Cont.)
DDE, MANUU

विषयानुक्रमणिका

संदेश	:	कुलपति	7
संदेश	:	निदेशक	9
भूमिका	:	पाठ्यक्रम–समन्वयक	10

खंड इकाई /		विषय	पृष्ठ संख्या
खंड 1	:	.....	
इकाई 1	:	आधुनिक हिंदी काव्य का परिचय	13
इकाई 2	:	अज्ञेय : एक परिचय	26
इकाई 3	:	अज्ञेय की दो प्रतिनिधि कविताएँ	40
इकाई 4	:	केदारनाथ अग्रवाल : एक परिचय	58
खंड 2	:	.....	
इकाई 5	:	केदारनाथ अग्रवाल की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)	71
इकाई 6	:	नागार्जुन : एक परिचय	90
इकाई 7	:	नागार्जुन की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)	107
इकाई 8	:	रघुवीर सहाय : एक परिचय	125
खंड 3	:	.....	
इकाई 9	:	रघुवीर सहाय की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ और व्याख्या)	136
इकाई 10	:	आलोचना अवधारणा और स्वरूप (काव्यालोचन का विशेष संदर्भ)	150
इकाई 11	:	सर्वेश्वर दयाल सक्सेना : एक परिचय	174
इकाई 12	:	जंगल का दर्द : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना	187
खंड 4	:	.....	

इकाई 13 : धूमिल : एक परिचय 205
इकाई 14 : संसद से सड़क तक (धूमिल) आलोचना 221
इकाई 15 : मुक्तिबोध : एक परिचय 243
इकाई 16 : अंधेरे में (आलोचना)

प्रूफ रीडर:

प्रथम : डॉ. वाजदा इशरत, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर(संविदा)
दू. शि. नि., मानू

द्वितीय : डॉ. एल. अनिल, अतिथि प्राध्यापक/असिस्टेंट प्रोफ़ेसर (संविदा),
दू. शि. नि., मानू

अंतिम : डॉ. आफताब आलम बेग, सहायक कुल सचिव, दू. शि. नि., मानू

संदेश

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटीकी स्थापना 1998 में संसद के एक अधिनियम द्वारा की गई थी। यह NAAC मान्यत प्राप्त एक केंद्रीय विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालय का अधिदेश है: (1) उर्दू भाषा का प्रचार-प्रसार और विकास (2) उर्दू माध्यम से व्यावसायिक और तकनीकी शिक्षा (3) पारंपरिक और दूरस्थ शिक्षा के माध्यम से शिक्षा प्रदान करना, और (4) महिला शिक्षा पर विशेष ध्यान देना। यही वे बिंदु हैं जो इस केंद्रीय विश्वविद्यालय को अन्य सभी केंद्रीय विश्वविद्यालयों से अलग करते हैं और इसे एक अनूठी विशेषता प्रदान करते हैं, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा और क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा के प्रावधान पर जोर दिया गया है।

उर्दू माध्यम से ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार का एकमात्र उद्देश्य उर्दू भाषी समुदाय के लिए समकालीन ज्ञान और विषयों की पहुंच को सुविधाजनक बनाना है। लंबे समय से उर्दू में पाठ्यक्रम सामग्री का अभाव रहा है। इस लिए उर्दू भाषा में पुस्तकों की अनुपलब्धता चिंता का विषय रहा है। नई शिक्षा नीति 2020 के दृष्टिकोण के अनुसार उर्दू विश्वविद्यालय मातृभाषा / घरेलू भाषा में पाठ्यक्रम सामग्री प्रदान करने की राष्ट्रीय प्रक्रिया का हिस्सा बनने का सौभाग्य मानता है। इसके अतिरिक्त उर्दू में पठन सामग्री की अनुपलब्धता के कारण उभरते क्षेत्रों में अद्यतन ज्ञान और जानकारी प्राप्त करने या मौजूदा क्षेत्रों में नए ज्ञान प्राप्त करने में उर्दू भाषी समुदाय सुविधाहीन रहा है। ज्ञान के उपरोक्त कार्य-क्षेत्र से संबंधित सामग्री की अनुपलब्धता ने ज्ञान प्राप्त करने के प्रति उदासीनता का वातावरण बनाया है जो उर्दू भाषी समुदाय की बौद्धिक क्षमताओं को मुख्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ये वह चुनौतियां है जिनका सामना उर्दू विश्वविद्यालय कर रहा है। स्व-अध्ययन सामग्री का परिदृश्य भी बहुत अलग नहीं है। प्रत्येक शैक्षणिक वर्ष के प्रारंभ में स्कूल/कॉलेज स्तर पर भी उर्दू में पाठ्य पुस्तकों की अनुपलब्धता पर चर्चा होती है। चूंकि उर्दू विश्वविद्यालय की शिक्षा का माध्यम केवल उर्दू है और यह विश्वविद्यालय लगभग सभी महत्वपूर्ण विषयों के पाठ्यक्रम प्रदान करता है, इसलिए इन सभी विषयों की पुस्तकों को उर्दू में तैयार करना विश्वविद्यालय की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय अपनेदूरस्थ शिक्षा के छात्रों को स्व-अध्ययन सामग्री अथवा सेल्फ लर्निंग मैटेरियल (SLM) के रूप में पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। वहीं उर्दू माध्यम से ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक किसी भी व्यक्ति के लिए भी यह सामग्री उपलब्ध है। अधिकाधिक लोग इससे लाभान्वित हो सकें, इसके लिए उर्दू में इलेक्ट्रॉनिक पाठ्य सामग्री अथवा eSLM विश्वविद्यालय की वेबसाइट से मुफ्त डाउनलोड के लिए उपलब्ध है।

मुझे अत्यंत प्रसन्नता है कि संबंधित शिक्षकों की कड़ी मेहनत और लेखकों के पूर्ण सहयोग के कारण पुस्तकों के प्रकाशन का कार्य उच्च-स्तर पर प्रारंभ हो चुका है। दूरस्थ शिक्षा के छात्रों

की सुविधा के लिए, स्व-अध्ययन सामग्री की तैयारी और प्रकाशन की प्रक्रिया विश्वविद्यालय के लिए सर्वोपरि है। मुझे विश्वास है कि हम अपनी स्व-शिक्षण सामग्री के माध्यम से एक बड़े उर्दू भाषी समुदाय की आवश्यकताओं को पूरा करने में सक्षम होंगे और इस विश्वविद्यालय के अधिदेश को पूरा कर सकेंगे।

एक ऐसे समय जब हमारा विश्वविद्यालय अपनी स्थापना की 25वीं वर्षगांठ मना रहा है, मुझे इस बात का उल्लेख करते हुए हर्ष हो रहा है कि विश्वविद्यालय का दूरस्थ शिक्षा निदेशालय कम समय में स्व-अध्ययन सामग्री तथा पुस्तकें तैयार कर विद्यार्थियों को पहुंचा रहा है। देश के कोने कोने में छात्र विभिन्न दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों से लाभान्वित हो रहे हैं। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान कोविड-19 की विनाशकारी स्थिति के कारण प्रशासनिक मामले और संचारचलन भी काफी कठिन रहे हैं लेकिन विश्वविद्यालय द्वारा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिए सर्वोत्तम प्रयास किया जा रहा है। मैं विश्वविद्यालय से जुड़े सभी विद्यार्थियों को इस विश्वविद्यालय का अंग बनने के लिए हृदय से बधाई देता हूं और यह विश्वास दिलाता हूँ कि मौलाना आज़ाद राष्ट्रीय उर्दू विश्वविद्यालय का शैक्षिक मिशन सदैव उनके के लिए ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता रहेगा। शुभकामनाओं सहित!

प्रो. सैयद ऐनुल हसन

कुलपति

संदेश

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली को पूरी दुनिया में अत्यधिक कारगर और लाभप्रद शिक्षा प्रणाली की हैसियत से स्वीकार किया जा चुका है और इस शिक्षा प्रणाली से बड़ी संख्या में लोग लाभान्वित हो रहे हैं। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी ने भी अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही उर्दू तबके की शिक्षा की स्थिति को महसूस करते हुए इस शिक्षा प्रणाली को अपनाया है। मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी का बाकायदा प्रारम्भ 1998 में दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और ट्रांसलेशन डिविजन से हुआ था और इस के बाद 2004 में बाकायदा पारंपरिक शिक्षा का आगाज़ हुआ। पारंपरिक शिक्षा के विभिन्न विभाग स्थापित किए गए। नए स्थापित विभागों और ट्रांसलेशन डिविजन में नियुक्तियाँ हुईं। उस वक़्त के शिक्षा प्रेमियों के भरपूर सहयोग से स्व-अधिगम सामग्री को अनुवाद व लेखन के द्वारा तैयार कराया गया।
पिछले कई वर्षों से यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) इस बात पर ज़ोर देता रहा है किदूरस्थ शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था को पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम व व्यवस्था से लगभग जोड़कर दूरस्थ शिक्षा प्रणाली के मयार को बुलंद किया जाय। चूंकि मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी दूरस्थ शिक्षा और पारंपरिक शिक्षा का विश्वविद्यालय है, अतः इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूजीसी-डीईबी (UGC-DEB) के दिशा निर्देशों के मुताबिक दूरस्थ शिक्षा प्रणाली और पारंपरिक शिक्षा प्रणाली के पाठ्यक्रम को जोड़कर और गुणवततापूर्ण करके स्व-अधिगम सामग्री को पुनः क्रमवार यू.जी. और पी.जी. के विद्यार्थियों के लिए क्रमशः 6 खंड-24 इकाइयों और 4 खंड – 16 इकाइयों पर आधारित नए तर्ज़ की रूपरेखा पर तैयार कराया जा रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय यू.जी., पी.जी., बी.एड., डिप्लोमा और सर्टिफिकेट कोर्सेज पर आधारित कुल 15 पाठ्यक्रम चला रहा है। बहुत जल्द ही तकनीकी हुनर पर आधारित पाठ्यक्रम शुरू किए जाएंगे। अधिगमकर्ताओं की सरलता के लिए 9 क्षेत्रीय केंद्र (बंगलुरु, भोपाल, दरभंगा, दिल्ली, कोलकाता, मुंबई, पटना, रांची और श्रीनगर) और 5 उपक्षेत्रीय केंद्र (हैदराबाद, लखनऊ, जम्मू, नूह और अमरावती) का एक बहुत बड़ा नेटवर्क तैयार किया है। इन केन्द्रों के अंतर्गत एक साथ 155 अधिगम सहायक केंद्र (लर्निंग सपोर्ट सेंटर) काम कर रहे हैं। जो अधिगमकर्ताओं को शैक्षिक और प्रशासनिक सहयोग उपलब्ध कराते हैं। दूरस्थ शिक्षा निदेशालय (डी. डी. ई.) ने अपनी शैक्षिक और व्यवस्था से संबन्धित कार्यों में आई.सी.टी. का इस्तेमाल शुरू कर दिया है। इसके अलावा अपने सभी पाठ्यक्रमों में प्रवेश सिर्फ ऑनलाइन तरीके से ही दे रहा है।

दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की वेबसाइट पर अधिगमकर्ता को स्व-अधिगम सामग्री की सॉफ्ट कॉपियाँ भी उपलब्ध कराई जा रही हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग का लिंक भी वैबसाइट पर उपलब्ध कराया जाएगा। इसके साथ-साथ अध्ययन व अधिगम के बीच एसएमएस (SMS) की सुविधा उपलब्ध की जा रही है। जिसके द्वारा अधिगमकर्ताओं को पाठ्यक्रमों के विभिन्न पहलुओं जैसे- कोर्स के रजिस्ट्रेशन, दत्तकार्य, काउंसलिंग, परीक्षा के बारे में सूचित किया जाता है।

आशा है कि देश में शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुई उर्दू आबादी को मुख्यधारा में शामिल करने में दूरस्थ शिक्षा निदेशालय की भी मुख्य भूमिका होगी।

प्रो. मो. रज़ाउल्लाह ख़ान
निदेशक, दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

भूमिका

'**आधुनिक हिंदी काव्य'** (भाग-2, 1936 के बाद) शीर्षक यह पुस्तक मौलाना आजाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी, हैदराबाद के एम.ए. (हिंदी) द्वितीय सत्र (पंचम प्रश्न पत्र) के दूरस्थ शिक्षा माध्यम के छात्रों के लिए तैयार की गई है। इसकी संपूर्ण योजना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के निर्देशों के अनुसार नियमित माध्यम के पाठ्यक्रम के अनुरूप रखी गई है।

हिंदी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल 1936 के बाद का महत्वपूर्ण काल है । इस काल में मानव जीवन में कविता का विशेष महत्त्व रहा है। आधुनिक हिंदी कविता का प्रारंभ 1900 से माना जाता है। इस काल में सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं सामाजिक आंदोलन के फलस्वरुप हिंदी काव्य में नई चेतना तथा विचारों ने जन्म लिया और साहित्य बहुआयामी क्षेत्रों को स्पर्श करने लगा । इस काल में धर्म दर्शन, कला एवं साहित्य आदि के प्रति नए-नए दृष्टिकोण का आविर्भाव हुआ। इस नवजागरण काल में नई चेतना उत्पन्न हो रही है। इस समय कविता का विकास कई चरणों में हुआ जैसे प्रारंभिक कविता, छायावादी कविता, प्रगतिवादी कविता, प्रयोगवादी कविता, स्वातंत्र्योत्तर कविता। इस प्रकार आधुनिक हिंदी काव्य साहित्य विकास के पड़ावों से गुजरा। 'आधुनिक हिंदी काव्य' का यह पाठ्यक्रम विद्यार्थियों को हिंदी काव्य के इन विविध रूपों के विकास के साथ-साथ उनके स्वरूप से भी परिचित कराएगा।

यह पुस्तक पाठ्यचर्या के अनुरूप चार खंडों में विभाजित है। हर खंड में चार-चार इकाइयाँ शामिल हैं। पहले खंड में संक्षेप में आधुनिक बोध की व्याख्या करते हुए अज्ञेय और केदारनाथ अग्रवाल का परिचय तथा उनकी रचनाओं पर प्रकाश डाला गया है। दूसरे खंड में नागार्जुन और रघुवीर सहाय की रचनाओं की व्याख्या की गई है। तीसरे खंड मेमिन काव्यालोचन तथा सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की रचनाओं पर प्रकाश डाला गया है। और अंत में चौथे खंड में धूमिल और मुक्तिबोध की रचनाओं का अध्ययन और विवेचन किया गया है ।

इस पुस्तक के अध्ययन से विद्यार्थी आधुनिक हिंदी काव्य की विविधता, विषयगत प्रौढ़ता, भाषागत यात्रा और शैलीगत परिधि के विस्तार को आत्मसात कर सकेंगे। अध्येय पाठों का चयन इस प्रकार किया गया है कि उनके अध्ययन से छात्रों का वैयक्तिक और मानसिक विकास हो सके, उनके भीतर राष्ट्रीय चेतना और लोकतांत्रिक मूल्यों की समझ विकसित हो सके तथा हिंदी के माध्यम से सामाजिक समरसता का संस्कार निर्मित हो सके।

इस समस्त पाठ सामग्री को तैयार करने में हमें जिन विद्वान इकाई लेखकों, ग्रंथों, ग्रंथकारों और पत्र-पत्रिकाओं से सहायता मिली है, उन सबके प्रति हम कृतज्ञ हैं।

-डॉ. आफताब आलम बेग

पाठ्यक्रम समन्वयक

आधुनिक हिंदी काव्य

(भाग -2, 1936 के बाद)

इकाई 1 : आधुनिक हिंदी काव्य का परिचय

रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मूल पाठ : आधुनिक हिंदी काव्य का परिचय

1.3.1 काव्य का सामान्य परिचय

1.3.2 काव्य का अर्थ एवं परिभाषाएँ

1.3.3 आधुनिक हिंदी काव्य का उद्भव और विकास

1.3.4 काव्य कला

1.3.5 काव्य के तत्व एवं प्रकार

1.3.6 काव्य की विशेषताएँ एवं महत्व

1.4 पाठ सार

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

1.6 शब्द संपदा

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

1.8 पठनीय पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

कविता को कवि की मानस पुत्री कहा जाता है। मानव जीवन में कविता का विशेष महत्व रहा है। आधुनिक हिंदी कविता का प्रारंभ सन 1900 से माना जाता है। इस काल में सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं सामाजिक आंदोलनों के फलस्वरूप हिंदी काव्य में नई चेतना तथा विचारों ने जन्म लिया और साहित्य बहुआयामी क्षेत्रों को स्पर्श करने लगा। इस काल में धर्म, दर्शन, कला एवं साहित्य आदि के प्रति नए-नए दृष्टिकोणों का आविर्भाव हुआ। इस नवजागरण काल में नई चेतना उत्पन्न हो रही थी। इस समय कविता का विकास कई चरणों में हुआ जैसे प्रारंभिक कविता, छायावादी कविता, प्रगतिवादी कविता, प्रयोगवादी कविता, स्वातंत्र्योत्तर कविता। इस प्रकार आधुनिक काल का हिंदी काव्य साहित्य विकास के अनेक पड़ावों से गुजरा। काव्य कला के विविध आयामों से परिचित होकर विद्यार्थियों को काव्य साहित्य के संप्रेषण और सौंदर्य को समझने में आसानी होती है। यह काल एक ऐसा काल है जिस समय जनसंचार के विभिन्न साधनों का विकास हुआ। शिक्षा हर व्यक्ति का मौलिक अधिकार बनी। इन सब परिस्थितियों का प्रभाव हिंदी साहित्य पर अनिवार्य रूप से पड़ा। आधुनिक काल का हिंदी पद्य

साहित्य पिछली सदी में विकास के अनेक पड़ावों से गुजरा जिसमें अनेक विचारधाराओं का बहुत तेजी से विकास हुआ।

1.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- 'काव्य' का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- 'काव्य' के अर्थ एवं परिभाषा से अवगत हो सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी काव्य के उदय की परिस्थितियों को जान सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी काव्य के विकास के विभिन्न चरणों से अवगत हो सकेंगे।
- आधुनिक हिंदी काव्य के परिवर्तनशील स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।

1.3 मूल पाठ : आधुनिक हिंदी काव्य का परिचय

1.3.1 काव्य का सामान्य परिचय

वास्तव में काव्य ऐसी पद्य रचना है जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी एक विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता और सजगता के साथ किया जाता है। 19वीं सदी में आधुनिक काव्य का विकास हुआ। मनुष्य के जन्म के साथ ही साथ कविता का भी जन्म हो जाता है। कविता का लक्ष्य मात्र मनोरंजन करना नहीं अपितु मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं और संवेदनाओं को व्यक्त करना रहा है। काव्य वह वाक्य रचना है जिससे चित्त किसी रस से पूर्ण हो अर्थात वह जिसमें चुने हुए शब्दों के द्वारा कल्पना और मनोवेगों का प्रभाव डाला जाता है। 'रसगंगाधर' में रमणीय अर्थ के प्रतिपादक शब्द को काव्य कहा गया है। कविता मन के आस्वादन का विषय है। वह अपने आसपास के अनुभवों को कवि शब्दों के द्वारा काव्यमयी शैली में अभिव्यक्ति देता है। अंग्रेजी में कविता को पोएट्री कहा जाता है यह शब्द पोएट शब्द से ही बना है। इस तरह पोएट वह है जो निर्माण करता है, रचना करता है, सर्जन करता है। इस प्रकार काव्य शब्द के अर्थ के बारे में दोनों वर्गों भारतीय एवं पाश्चात्य चिंतन में एकता देखी जा सकती है। वास्तव में देखा जाए तो काव्य के जो लक्षण होते हैं उन्हीं लक्षणों के आधार पर उनकी परिभाषा तय होती है। यही कारण है कि कुछ विद्वान काव्य को परिभाषित करते हैं तो कुछ विद्वान केवल कार्य के लक्षणों को ही व्यक्त करते हैं। संस्कृत आचार्य, रीतिकालीन आचार्य तथा आधुनिक कवियों तथा आलोचकों ने अपने ढंग से काव्य की अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं। पहले छंदबद्ध रचना को ही काव्य माना जाता था। उस समय वाल्मीकि, वेदव्यास को कवि कहा गया तो शुक्राचार्य को भी कवि माना गया जो कि एक राजनीतिज्ञ और नीतिकार थे। इसी प्रकार चिकित्सा संबंधी ग्रंथों तथा ज्योतिष संबंधी ग्रंथों को भी काव्य कहा गया किंतु आगे चलकर यह स्पष्ट हो गया कि जो रचनाएँ आनंददायक होती हैं उन्हें ही काव्य की श्रेणी में रखा जा सकता है। इस प्रकार यह कहा गया कि "वह रचना 'काव्य' शब्द से अभिहित की जा सकती है जो पाठकों और श्रोताओं को भावानंद प्रदान करने की क्षमता

रखती हो।" बाद में काफी कुछ साहित्य का पर्याय मान लिया गया और नाटक को भी काव्य में सम्मिलित कर लिया गया अतः विशेष प्रकार की गद्य पद्य मई रचनाओं से हो गया जो भावा आनंददायक हो संस्कृत साहित्य के आरंभिक विवेचन में कार्य शब्द का ही प्रयोग होता रहा लेकिन 8वीं 9वीं सदी में राजशेखर तथा कुंतक ने साहित्य शब्द का प्रयोग करके काव्य के अर्थ को व्यापकता प्रदान की लेकिन आज काव्य शब्द का अर्थ संस्कृत हो गया है और साहित्य शब्द का अर्थ व्यापक हो गया है काव्य शब्द अंग्रेजी के पोएट्री शब्द का पर्यायवाची है तथा साहित्य अंग्रेजी के लिटरेचर का पर्याय है काव्य के अंतर्गत केवल पद्य रचनाएँ समाहित होती हैं लेकिन साहित्य के अंतर्गत गद्य पद्य मई सभी आनंद देने वाली रचनाएँ समाहित की जा सकती हैं।

बोध प्रश्न

- आधुनिक काव्य का विकास कब हुआ?
- कविता कैसी विधा है?
- क्या कविता का लक्ष्य मात्र मनोरंजन करना है?
- कविता का कवि से क्या सम्बन्ध है?

1.3.2 काव्य का अर्थ एवं परिभाषाएँ

कविता में एक विशेष प्रकार की चेतना और जीवंतता होती है। इसमें भावना के साथ विचारों को एक साथ संकलित किया जाता है। कविता का शाब्दिक अर्थ है काव्यात्मक रचना या कवि की कृति जो छंदों की श्रृंखलाओं में विधिवत बांधी जाती है। काव्य वह रचना है जिसमें चित्त किसी रस से परिपूर्ण हो। कविता छंद और मुक्त छंद दोनों में होती है। छंदबद्ध कविता के लिए छंद के बारे में बुनियादी जानकारी आवश्यक है। मुक्त छंद में लिखने के लिए भी इसका ज्ञान आवश्यक है। कविता समय विशेष की उपज होती है जिसका स्वरूप समय के साथ-साथ बदलता रहता है। यदि कविता में शब्दों का महत्व ना होता तो कविता ही ना होती अर्थात कविता लेखन का पहला महत्वपूर्ण उपकरण शब्द है। शब्दों के मेल जोल से कविता बनती है अर्थात शब्दों का उचित चयन तथा प्रयोग ही कविता की आत्मा बन जाते हैं। कविता सदैव गद्य से अलग होती है। साहित्य रचना की दो विधाएँ हैं गद्य और पद्य। गद्य विधा के अंतर्गत कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, संस्मरण, पत्र साहित्य, आत्मकथा आदि आते हैं। इसी तरह पद्य के अंतर्गत कविता, गीत, गाना, मुक्तक आदि लिखे जाते हैं। गद्य को हम सीधा और सपाट रूप में पढ़ सकते हैं क्योंकि इनमें लयात्मकता नहीं होती किंतु पद के साथ ऐसा नहीं होता है। जब किसी कवि के मन में कुछ कहने की लालसा होती है तो शब्दों के अभाव को पूरा करने के लिए कविता का अवतरण होता है। कविताएँ चुपचाप चली आती हैं। यह भाषा और व्याकरण की दीवारों को भी कई बार तोड़ देती है। काव्य जीवन को अपनी मौजूदगी से तरंगित कर देता है।

भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने काव्य की अलग-अलग परिभाषाएँ दी हैं।

संस्कृत के काव्य शास्त्रियों ने प्रायः कवि कर्म को काव्य कहा है। अतः 'कवि' शब्द से ही 'काव्य' की उत्पत्ति मानी जा सकती है। कवि शब्द 'कु' धातु में 'इच' प्रत्यय लगने से बना है। 'कु'

धातु का अर्थ है शब्द करना, बोलना, कलरव करना। इस धातु के अन्य अर्थ हैं व्याप्ति या आकाश। इस तरह यह कहा जा सकता है कि कवि वह व्यक्ति है जो शब्द करता है, बोलता है या कलरव करता है अथवा जो आकाश के समान सर्वत्र व्याप्त है।

संस्कृत के आचार्यों ने काव्य संबंधी परिभाषाएँ दी हैं। संस्कृत काव्यशास्त्र में सर्वप्रथम आचार्य भरत मुनि ने अपनी रचना 'नाट्यशास्त्र' में काव्य संबंधी विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि- "कोमल एवं ललित पदों से युक्त, गूढ़ शब्दार्थ रहित, सर्वजन सुबोध, युक्तियुक्त, नृत्य योजना से युक्त, विभिन्न रसों को प्रवाहित करने वाली तथा अनुकूल संधि-योजना वाली रचना उत्तम काव्य कही जा सकती है।"

आचार्य भामह के अनुसार- शब्दार्थौ सहितौ काव्यम अर्थात् शब्द और अर्थ के सहित भाव को काव्य कहते हैं।

आचार्य दंडी ने अपनी रचना 'काव्यादर्श' में अभीष्ट अर्थ को प्रकट करने वाली शब्द योजना को काव्य-शरीर कहा है। इन्होंने केवल शब्द को ही काव्य माना है।

इसी तरह आचार्य वामन ने गुणों तथा अलंकारों से युक्त शब्दार्थ को काव्य माना है।

आचार्य भोजराज दोष रहित, गुण सहित, अलंकार युक्त तथा रस युक्त कृति को काव्य मानते हैं।

'कवे: कर्म काव्यम' के आधार पर कह सकते हैं कि कवि का कर्म ही काव्य है। इसी संदर्भ में आचार्य विद्याधर ने कहा है कि- 'जो वर्णन करता है, कविता करता है; उसके कर्म को काव्य कहते हैं।'

आचार्य अभिनव गुप्त भी कुछ यही भाव व्यक्त करते हैं और कहते हैं कि- 'जो वर्णनीय है वही काव्य है।'

रीतिकालीन आचार्य कवियों के काव्य संबंधी मत-

रीतिकालीन आचार्य कवियों ने काव्य का कोई मौलिक लक्षण प्रस्तुत नहीं किया है। यह सभी किसी न किसी संस्कृत आचार्य से प्रभावित दिखाई देते हैं।

आचार्य केशवदास मानते हैं कि- "अलंकार काव्य का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है।"

इसी प्रकार आचार्य चिंतामणि ने कहा है कि- गुण युक्त, अलंकार सहित, दोष रहित, शब्द-अर्थ से संपन्न ही कविता है।''

आचार्य देव ने 'काव्य रसायन' में यह कहा है कि - शब्द जीव है, अर्थ मन है तथा रसयुक्त सुयश उसका शरीर है। दोनों प्रकार के छंद उसकी गति है तथा अलंकार गति की गंभीरता के व्यंजक हैं।

भिखारी दास के अनुसार- "अलंकार, रस, ध्वनि, रीति तथा गुणों से युक्त शब्दार्थ ही काव्य है।"

आधुनिक विद्वानों के काव्य संबंधित मत या परिभाषा-

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुसार- "कविता प्रभावशाली रचना है जो पाठक के मन पर प्रभाव डालती है।"

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार- "जिस प्रकार आत्मा की मुक्त अवस्था भाव दशा कहलाती है, उसी प्रकार ह्रदय की मुक्त अवस्था रस दशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे कविता कहते हैं।"

बाबू श्यामसुंदर दास के अनुसार- "हम किसी पुस्तक को साहित्य या काव्य की संज्ञा तभी दे सकते हैं अगर वह कला के उद्देश्यों को पूरा करती है।"

जयशंकर प्रसाद के अनुसार- "काव्य आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है जिसका संबंध विश्लेषण, विकल्प या विज्ञान से नहीं है। वह एक श्रेयमयी प्रेय रचना है।"

सुमित्रानंदन पंत के अनुसार- "कविता हमारे परिपूर्ण क्षणों की वाणी है।"

महादेवी वर्मा के अनुसार- "कविता कवि की विशेष भावनाओं का चित्रण है और वह चित्र इतना ठीक है कि उसमें वैसी ही भावनाएँ किसी दूसरे के ह्रदय में आविर्भूत होती हैं।"

कविवर धूमिल के अनुसार- "कविता शब्द की अदालत में मुजरिम के कटघरे में खड़े बेकसूर आदमी का हलफनामा है।"

Wordsworth (1771–1850) famously called poetry "the spontaneous overflow of powerful feelings, recollected in tranquility."

Shelley (1792–1822) joyfully called poetry "the record of the best and happiest moments of the happiest and best minds I" He said that poetry "redeems from decay the visitations of the divinity in man."

Robert Frost (1874–1963) said wryly, "Poetry provides the one permissible way of saying one thing and meaning another."

Ezra Pound (1885–1972) later countered, "Poetry is about as much a 'criticism of life' as red-hot iron is a criticism of fire."

Matthew Arnold (1822–1888) narrowed the definition to "a criticism of life."

बोध प्रश्न

- कविता का शाब्दिक अर्थ क्या है?
- काव्य किसका प्रतीक है?
- प्रसाद के अनुसार काव्य क्या है?
- सुमित्रानंदन पंत के अनुसार कविता क्या है?

1.3.3 आधुनिक हिंदी काव्य का उद्भव और विकास

अट्ठारह सौ पचास से हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का आरंभ मान सकते हैं और आधुनिक काव्य इसी समय की देन है। आधुनिक हिंदी काव्य अपनी विकास यात्रा करते हुए कई युगों में बंटता गया, जिसे भारतेंदु युग का काव्य, द्विवेदी युग का काव्य, छायावादी युग, उत्तर छायावादी युग, प्रगतिवादी युग, प्रयोगवादी युग, नई कविता आदि।

भारतेंदु युग : सन 1850 से 1900 तक की कविताओं पर भारतेंदु हरिश्चंद्र का गहरा प्रभाव पड़ा है। वह आधुनिक हिंदी साहित्य के पितामह माने जाते हैं। उन्होंने भाषा को एक चलता हुआ रूप देने की कोशिश की। इनके काव्य साहित्य में प्राचीनता एवं नवीनता का मेल परिलक्षित होता है। इनके काव्य में भक्ति, शृंगार, देश प्रेम, सामाजिक समस्याएँ आदि दिखाई देती हैं। इस युग में प्रताप नारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी, राधाचरण गोस्वामी, अंबिकादत्त व्यास जैसे रचनाकारों ने अपने काव्य सृजन से इस युग को समृद्ध किया।

महावीर प्रसाद द्विवेदी युग : यह समय 1900 से 1920 तक माना जाता है। द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' पत्रिका का संपादन किया। धीरे-धीरे हिंदी कविता से ब्रजभाषा हटती गई और खड़ी बोली ने उसका स्थान ले लिया। द्विवेदी काल में हिंदी भाषा का परिष्करण हुआ। भाषा को स्थिर, परिष्कृत और व्याकरण सम्मत बनाने में आपने बहुत परिश्रम किया। कविता की दृष्टि से यह इतिवृत्तात्मक युग रहा। इस समय आदर्शवाद का बोलबाला था। भारत का उज्जवल अतीत, देशभक्ति, समाज सुधार, स्वभाषा प्रेम कविता के मुख्य विषय होते थे। कथा काव्य का विकास इस युग की विशेषता है। मधुरता एवं सरसता के गुण खड़ी बोली में विकसित हो रहे थे। इस समय मैथिलीशरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय, श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी आदि यशस्वी कवि रहे। जगन्नाथदास रत्नाकर ने इसी युग में ब्रजभाषा में रचनाएँ प्रस्तुत कीं।

छायावादी युग (1920-1936) : सन 1920 के आसपास हिंदी में कल्पना पूर्ण स्वच्छंद और भावुक कविताओं की बाढ़ सी आ गई। यह धारा यूरोप के रोमांटिसिजम से प्रभावित थी। भाव, शैली, छंद, अलंकार सभी दृष्टियों से इसमें नयापन था। भारत की राजनीतिक स्वतंत्रता के बाद लोकप्रिय हुई इस कविता को आलोचकों ने छायावादी युग की कविता का नाम दिया। छायावादी कवियों की उस समय भारी रूप में कटु आलोचना हुई परंतु आज यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि आधुनिक हिंदी कविता की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि इसी समय के कवियों

द्वारा हुई। इस समय के प्रसिद्ध कवियों में जयशंकर प्रसाद, निराला, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा आदि रहे।

उत्तर छायावादी युग (1936-1943) : यह काल भारतीय राजनीति में भारी उथल-पुथल का काल रहा है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय कई विचारधाराओं और आंदोलनों का प्रभाव इस काल की कविता पर पड़ा। द्वितीय विश्व युद्ध के परिणामों के प्रभाव से भी इस काल की कविता काफी हद तक प्रभावित रही। इस समय राष्ट्रवाद, गांधीवाद, प्रगतिवाद, यथार्थवाद, हालावाद जैसी कविताएँ लिखी गईं। इस समय के प्रसिद्ध कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्रा कुमारी चौहान, रामधारी सिंह 'दिनकर', हरिवंश राय बच्चन, भगवती चरण वर्मा, नरेंद्र शर्मा, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', शिवमंगल सिंह 'सुमन', नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, रांगेय राघव आदि आते हैं।

प्रगतिवादी युग की कविता (1936-1947) : छायावादी काव्य के पश्चात जन-जन की वाणी बनकर एक अलग प्रकार के काव्य का उदय हुआ। इस समय की कविताओं पर सामाजिक एवं राजनीतिक आंदोलनों का सीधा प्रभाव पड़ा। संसार में समाजवादी विचारधारा तेजी से फैल रही थी। सर्वहारा वर्ग के शोषण के विरुद्ध जनमत तैयार होने लगा था और इसकी प्रतिच्छाया हिंदी कविता पर पड़ी तथा प्रगतिवादी युग का जन्म हुआ। 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ का गठन हुआ। इस समय के प्रसिद्ध रचनाकारों में नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, त्रिलोचन, कवि मुक्तिबोध, शमशेर सिंह आदि आते हैं।

प्रयोगवाद एवं नई कविता (1947-1960) : दूसरे विश्व युद्ध के पश्चात संसार में घोर निराशा तथा अवसाद की लहर फैल गई। साहित्य पर भी इसका व्यापक प्रभाव पड़ा। अज्ञेय के संपादन में 1943 में तार सप्तक का प्रकाशन हुआ तब से हिंदी कविता में प्रयोगवादी युग का जन्म हुआ। इसी का विकसित रूप नई कविता कहलाता है। निराशा, कुंठा, छंदहीनता की स्थितियां कविताओं में दिखाई देती हैं। वास्तव में नई कविता नई रुचि का प्रतिबिंब है। इस युग के प्रसिद्ध कवियों में अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, प्रभाकर माचवे, भारत भूषण अग्रवाल, मुक्तिबोध, धर्मवीर भारती, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, जगदीश गुप्त, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, कुंवर नारायण, केदारनाथ सिंह।

इस प्रकार आधुनिक हिंदी खड़ी बोली कविता ने भी अल्प समय में उपलब्धि के उच्च शिखर छुए। चाहे मुक्तक हो या प्रबंध दोनों में सुंदर रचनाएँ दिखाई देती हैं। गीति काव्य के क्षेत्र में भी कई रचनाएँ मिलती हैं।

बोध प्रश्न

- आधुनिक हिंदी काव्य का प्रारंभ कब हुआ?
- सरस्वती पत्रिका के संपादक कौन थे?
- छायावादी कविता किससे प्रभावित रही?

1.3.4 काव्य कला

साहित्य में कला पक्ष का विशेष महत्व होता है और जब कविता की बात होती है तब काव्य कला का विशेष महत्व होता है। चाहे गद्य साहित्य हो या पद्य, दोनों विधाओं के लिए काव्य कला के अंतर्गत भाव पक्ष एवं कला पक्ष उस रचना के सौंदर्यवर्धन हेतु प्रयुक्त होते हैं, कल्पना, रस, प्रकृति के साथ-साथ भाषा, शैली, छंद, अलंकार, प्रतीक आदि काव्य कला के अंग होते हैं। कल्पना काव्य के लिए अत्यंत आवश्यक मानी जाती है क्योंकि उसके बिना काव्य संभव नहीं होता। विभिन्न प्रकार के तत्व कविता को सौंदर्य प्रदान करते हैं। शृंगार रस, हास्य रस, रौद्र रस, करुण रस, वीर रस, अद्‌भुत रस, भयानक रस, वीभत्स रस, रौद्र रस, शांत रस अर्थात रसों का हिंदी काव्य में विशेष स्थान होता है। साहित्य में कवि प्रकृति के सहारे मन के अनेक भावों की अभिव्यक्ति करता है। प्रकृति का आलंबन और उद्दीपन दोनों रूप कवि की कविताओं में दिखाई देता है।

भाषा भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। काव्यकार अपनी कविता के लिए सरल और सहज भाषा का प्रयोग करता है और अपने भावों को संप्रेषणयुक्त बनाता है। भाषा में शब्द चयन से लेकर प्रतीक व्यवस्था, मुहावरों का प्रयोग आदि भाषा को सुंदरता प्रदान करते हैं। हर एक कवि की अपनी एक लेखन शैली होती है जिससे उनकी पहचान बनती है। काव्य कला में शैलियों का प्रयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है और यह शैलियाँ कविता को एक ऊंचाई तक ले जाती हैं। धाराप्रवाह शैली, हास्य शैली, व्यंग्य शैली, विक्षेप आदि शैलियों का प्रयोग कविता को अभिनव युक्त बनाता है। प्राचीन कविता में छंदों को विशेष महत्व दिया जाता था और छंद बद्ध कविता लोगों को अपनी ओर आकर्षित करती थी; किंतु धीरे-धीरे समय बदलने के साथ-साथ काव्य लेखन में परिवर्तन आया और छंदमुक्त कविता भी लोगों के आकर्षण का केंद्र बनी। इसी प्रकार प्रतीकों का प्रयोग करते हुए अलंकार योजना तथा बिंब योजना कविता को सौंदर्य प्रदान करते हैं। भामह, दंडी, वामन आदि आचार्य यह मानते हैं कि कविता में सौंदर्य अलंकार योजना से ही संभव हो पाता है।

बोध प्रश्न

- प्राचीन कविता में किस को महत्व दिया जाता था?
- काव्य कला को कितने पक्ष में बांटा गया है?

1.3.5 काव्य के तत्व एवं प्रकार

हम अच्छी तरह जानते हैं कि साहित्य और काव्य एक दूसरे के पर्याय हैं। काव्य का एक अर्थ कविता या पद्य भी माना जाता है लेकिन साहित्य शब्द गद्य, पद्य तथा दृश्य रचनाओं के सूचक के रूप में माना जाता है। प्राचीन भारतीय ग्रंथों में काव्य के लिए वांग्मय शब्द का प्रयोग किया गया है। काव्य शब्द कवि से प्रचलित हुआ है और इसे अंग्रेजी में पोएट्री के रूप में माना जाता है, लेकिन वास्तविकता यह है कि जो रचनाकार पद्य रचनाएँ करते थे उन्हें ही कवि कहा

जाने लगा और उनकी रचनाओं को काव्य कहा गया। आगे चलकर भारतीय रचनाकार गद्य का भी लेखन करने लगे तो काव्य शब्द दोनों अर्थात गद्य और पद्य का प्रतिनिधि बन गया। आठवीं शताब्दी से काव्य के लिए साहित्य शब्द का प्रयोग होने लगा जिसे अंग्रेजी में लिटरेचर का पर्यायवाची माना गया। आज साहित्य बहु प्रचलित शब्द है और इसका व्यापक अर्थ लिया जाता है। प्रसिद्ध कथाकार मुंशी प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं। साहित्य का केंद्र बिंदु मानव जीवन है। साहित्यकार पैदा होता है बनाया नहीं जाता। उसका लक्ष्य केवल महफ़िल सजाना और मनोरंजन के साधन जुटाना नहीं, वह देशभक्ति, राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई भी नहीं है अपितु उनके आगे मशाल दिखाती सच्चाई है। वह मानते हैं कि अन्याय, प्रभुत्व आदि के विरुद्ध मानव के मन में जो विद्रोह जल उठता है वही साहित्य है। कविता में मानवीय धरातल पर आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना दिखाई देती है। जीवन में जो कुछ सत्य शिव और सुंदर है उसी को दर्शाना कवि का मुख्य उद्देश्य रहा परंतु यथार्थ चित्रण के लिए साहित्य की उपयोगिता को तिरस्कृत नहीं किया। संक्षिप्तता, गुणयुक्तता, दोष हीनता, अलंकार तथा इष्ट अर्थ की व्यंजना करने वाली पदावली के साथ ही शब्द तत्व, अर्थ तत्व, भाव तत्व, कल्पना तत्व और बुद्धि तत्व काव्य को शीर्षता प्रदान करते हैं। भाव तत्व कविता का प्रधान तत्व है। इसे राग तत्व भी कहा जाता है जिसका संबंध अनुभूति से होता है। कल्पना भाव को पुष्ट करती है। कल्पना से ही कविता में आकर्षण आता है। बुद्धि तत्व भी काव्य निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बुद्धि तत्व काव्य के अन्य तीनों तत्वों में सामंजस्य स्थापित करता है। यह कल्पना तत्व को नियंत्रित करता है तथा भावों को मर्यादा के भीतर रखता है।

काव्य के दो प्रकार होते हैं दृश्य काव्य और श्रव्य काव्य। दृश्य काव्य वह है जो अभिनय द्वारा दिखलाया जाता है जैसे नाटक, प्रहसन आदि। जो पढ़ने और सुनने के योग्य होता है वह श्रव्य काव्य है। श्रव्य काव्य दो प्रकार का होता है - गद्य और पद्य। बंध की दृष्टि से काव्य के दो प्रकार होते हैं प्रबंध काव्य तथा निर्बंध काव्य। प्रबंध काव्य के पुनः दो भेद होते हैं महाकाव्य और खंडकाव्य। महाकाव्य में संपूर्ण जीवन का विशद और व्यापक चित्रण होता है। उसमें भाव की उदारता और विशालता होती है। खंडकाव्य में जीवन के किसी एक महत्वपूर्ण अंश का चित्रण रहता है। शैली की दृष्टि से काव्य के तीन प्रकार या भेद होते हैं-पद्य काव्य, गद्य काव्य और चंपू काव्य।

बोध प्रश्न

- प्राचीन भारतीय ग्रंथों में काव्य के लिए किस शब्द का प्रयोग किया गया है?
- साहित्य का केंद्र बिंदु किसे माना जाता है?

1.3.6 काव्य का महत्व एवं विशेषताएँ

काव्य में ना केवल जीवन का वर्णन होता है बल्कि उसकी व्याख्या भी होती है। व्यापक मानवीय शक्तियों का अन्वेषण या उद्घाटन कविताओं में होता है। यह जीवन की व्याख्या करते हुए उसे सार्थकता प्रदान करती है। रसगंगाधर में रमणीय अर्थ के प्रतिपादक शब्द को काव्य कहा

गया है। कविता मानव एकता की प्रतिष्ठा करने का एक साधन है और यही उसकी उपयोगिता है। कविता में भावों एवं कल्पना की प्रधानता रहती है। कविता में कवि की अनुभूति की अभिव्यक्ति होती है। कविता भाषा का ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा मन की भावना व्यक्त की जाती है। 'शब्दार्थौ सहितौ काव्यम' अर्थात शब्द और अर्थ के सुंदर सामंजस्य को काव्य कहा जाता है। काव्य में मानव जीवन के विविध पक्षों का यथार्थ चित्रण किया जाता है। पाठकीय संवेदना से जुड़ना ही काव्य का उद्देश्य रहता है। यह मानव जीवन का वह खंड चित्र है जिसकी कोई सीमा रेखा नहीं और जिसमें किसी एक पक्ष की अनिवार्यता नहीं। मानव और समाज के लिए काव्य का विशेष महत्व होता है। काव्य का उद्देश्य मनोरंजन के साथ-साथ समसामयिक जीवन को समझने, उसमें अपनी भूमिका को देखने, विभिन्न परिस्थितियों को समझने और उसके अनुसार व्यवहार करने की समझ विकसित करना होता है।

बोध प्रश्न

- कविता का उद्देश्य क्या है?
- कविता में किस की प्रधानता होती है?
- कविता भाषा का कैसा माध्यम है?

1.3.7 काव्य दोष

अर्थ को समझने में सामान्यतया चार प्रकार की बाधाएँ उत्पन्न होती हैं। कंठ के आधार पर अर्थ को व्यक्त करने में शब्द, वाक्य, रस और अर्थ महत्वपूर्ण तत्व होते हैं। काव्यार्थ की व्यंजना में आने वाली बाधाएँ इनसे ही संबंधित होती हैं। इनको शब्द दोष, वाक्य दोष, रस दोष तथा अर्थ दोष कहते हैं। जहां कविता में शब्दों के द्वारा दोष उत्पन्न होता है उसे शब्द दोष कहते हैं। जहां कविता में वाक्यों में दोष की स्थिति होती है उसे वाक्य दोष कहा जाता है। रस के द्वारा जो दोष उत्पन्न होते हैं उसे रस दोष और अर्थ में जहां पर दोष होता है उसे अर्थ दोष कहा जाता है।

बोध प्रश्न

- अर्थ को समझने में कितनी प्रकार की बाधाएँ उत्पन्न होती हैं?
- काव्यदोष कितने प्रकार के होते हैं?

1.4 पाठ सार

कविता उस पद्य रचना को कहते हैं जो ह्रदय की भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति है तथा पाठकों को भावानंद प्रदान करने की क्षमता रखती है। कविता हृदय की भावनाओं की अभिव्यक्ति का सबसे आसान साधन है। मानव जीवन की अभिव्यक्ति है। संस्कृत हिंदी और पश्चिमी विद्वानों ने अपने-अपने ढंग से कविता की परिभाषा और उसके लक्षणों को परिभाषित किया है। कहीं रस, अलंकार, छंद और आनंद तत्वों को महत्व दिया गया है तो कहीं उसमें सहज भाव की अभिव्यक्ति को महत्व दिया गया है। आधुनिक हिंदी कविता में कल्पना के स्थान पर

यथार्थपरकता अधिक दिखाई देती है। कथासम्राट प्रेमचंद साहित्य को जीवन की आलोचना मानते हैं और उनका यह मानना है कि कविता हमारे जीवन से जुड़ी होनी चाहिए।

आधुनिक कविता पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांतों के सांचे में ढलती जा रही है। कविता में सादगी, असलियत और जोश तीनों गुण हों तो कविता सीधे-सीधे पाठकीय संवेदना से जुड़ जाती है। आधुनिक हिंदी काव्य को भारतेंदु युग, हरिश्चंद्र युग, महावीर प्रसाद द्विवेदी युग, छायावादी युग, प्रगतिवादी युग, प्रयोगवादी युग और नई कविता में बांटा गया है। हर युग की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं जो इस समय की कविताओं में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती हैं। आधुनिक काल के शुरुआती दौर में भारत में राष्ट्रीयता के बीज अंकुरित होने लगे थे। नवजागरण शुरु हो चुका था। छापेखाने का आविष्कार हुआ। आवागमन के साधन आम आदमी के जीवन का हिस्सा बने। जन संचार के विभिन्न साधनों का विकास हुआ। रेडियो, टीवी, समाचार पत्र हर घर का हिस्सा बन गए। शिक्षा हर व्यक्ति का मौलिक अधिकार हो गयी। इन सभी परिस्थितियों का प्रभाव हिंदी साहित्य पर विशेष रूप से दिखाई देता है, चाहे कविता हो अथवा गद्य। आधुनिक काल का हिंदी पद्य साहित्य पिछली सदी में विकास के अनेक पडाओं से गुजरा और उसमें अनेक विचारधाराओं का बहुत तेजी से विकास हुआ, चाहे छायावादी युग हो, प्रगतिवादी या प्रयोगवादी युग। इन सभी में अपने-अपने काल की प्रवृतियां दिखाई देती हैं और इस युग से जुड़े रचनाकार उन्हीं प्रवृत्तियों को केंद्र में रखकर अपनी रचनाएँ लिखते रहे।

1.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. आधुनिक हिंदी काव्य का उदय 19 वीं शताब्दी के उस समय हुआ, जब भारतीय इतिहास पुनर्जागरण के माध्यम से आधुनिक युग में प्रवेश कर रहा था।
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र ने हिंदी कविता को रीतिकालीन रूढ़ियों से मुक्त करते हुए सामान्य जनता के सुख-दुःख से जोड़ने की शुरुआत की।
3. द्विवेदी युग में हिंदी कविता स्वतंत्रा आंदोलन के साथ जुड़ी।
4. छायावादी कवियों ने भारतीय सांस्कृतिक चेतना को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में मुक्ति की चेतना के रूप में प्रस्तुत किया, साथ ही साथ गांधीवादी मूल्यों को कविता में प्रतिष्ठित किया।
5. छायावादोत्तर काल में हिंदी कविता जहाँ एक ओर मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित हुई, वहीं दूसरी ओर मनोविश्लेषणवाद ने भी उसे प्रभावित किया; इससे प्रगतिवाद और प्रयोगवाद जैसे आंदोलन विकसित हुए।
6. आजादी के बाद हिंदी कविता ने जहाँ आजादी के उल्लास को व्यक्त किया, वहीं अस्तित्ववाद को भी आत्मसात किया; आगे चल कर बदलती राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय परिस्थितियों ने मोहभंग को व्यक्त करने वाली समकालीन कविता को जन्म दिया।
7. बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में हिंदी कविता विभिन्न विमर्शों की ओर उन्मुख हुई।

1.6 शब्द संपदा

1. अति व्याप्ति = सीमा या नियम से अधिक
2. अवसाद = दुख
3. काव्य दोष = कविता में उत्पन्न दोष
4. निरूपण = अभिव्यक्ति
5. भावात्मक = भावना प्रधान

1.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. काव्य का उद्भव और विकास बताते हुए उसके प्रकारों की चर्चा कीजिए।
2. काव्य की विभिन्न परिभाषाएँ देते हुए उसके स्वरूप की चर्चा कीजिए।
3. काव्यांगों की चर्चा कीजिए।
4. काव्य का महत्व बताते हुए साहित्य में उसका स्थान निर्धारित कीजिए।
5. महाकाव्य के तत्वों की विस्तार से चर्चा कीजिए।
6. काव्य दोष किसे कहते हैं इसके प्रकारों की विस्तार से चर्चा कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मानव और समाज पर कविता का क्या प्रभाव पड़ता है?
2. काव्य की विशेषताएँ लिखिए।
3. काव्य के कितने तत्व माने जाते हैं?
4. महाकाव्य और खंडकाव्य का अंतर स्पष्ट कीजिए।
5. आधुनिक काव्य परंपरा को कितने युग में बांटा गया है?
6. काव्य शैलियों की चर्चा कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. हिंदी खड़ी बोली का पहला महाकाव्य- ( )

(अ) कामायनी (आ) साकेत (इ) अपर

2. नीरजा काव्य लिखा गया है - ( )

(अ) जयशंकर प्रसाद (आ) सुमित्रानंदन पंत (इ) महादेवी वर्मा

3. निराला इस युग के कवि हैं - ( )

(अ) द्विवेदी युग (आ) छायावादी युग (इ) प्रेमचंद युग

4. प्रबंधकाव्य के प्रकार हैं - ( )

(अ) छह (आ) दो (इ) पांच

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. दो पद जिसमें होते हैं उसे..... कहते हैं।
2. साकेत के कवि..... हैं।
3. अपरा के रचनाकार ..... हैं।
4. कविता का..... मानव जीवन है।
5. काव्य के..... प्रकार होते हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. कामायनी	(अ) छायावादी युग
2. श्रव्य काव्य के प्रकार होते हैं	(ब) कितनी नावों में कितनी बार
3. महादेवी वर्मा हैं	(स) दो प्रकार गद्य एवं पद्य
4. अज्ञेय को ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला	(द) जयशंकर प्रसाद

1.9 पठनीय पुस्तकें

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : रामचंद्र शुक्ल
2. हिंदी साहित्य की भूमिका : हजारी प्रसाद द्विवेदी
3. हिंदी साहित्य - उद्भव और विकास : हजारी प्रसाद द्विवेदी
4. आधुनिक हिंदी काव्य और कवि : (सं) रामचंद्र तिवारी एवं डॉ. राजेंद्र बहादुर सिंह
5. आधुनिक हिंदी काव्य : (सं) डॉ. धीरेंद्र वर्मा एवं डॉ. रामकुमार वर्मा

इकाई 2 : अज्ञेय : एक परिचय

रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 मूल पाठ : अज्ञेय : एक परिचय
2.3.1 जीवन परिचय
2.3.2 रचना यात्रा
2.3.3 रचनाओं का परिचय
2.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व
2.4 पाठ सार
2.5 पाठ की उपलब्धियाँ
2.6 शब्द संपदा
2.7 परीक्षार्थ प्रश्न
2.8 पठनीय पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! इस इकाई में हिंदी साहित्य में आधुनिकता के भाव-बोध के अग्रणी साहित्यकार अज्ञेय का जीवन परिचय, उनकी रचनात्मक यात्रा एवं रचनागत विशेषताओं का विवेचन किया जाएगा। साहित्यकार अपने युग के प्रति अत्यंत संवेदनशील होता है तथा अपनी संवेदना की अभिव्यक्ति जब वह साहित्य में करता है तो वही उसका परिचय बन जाता है। अज्ञेय की रचनाओं में उनके नएपन की दृष्टि को अनुभूत किया जा सकता है। अज्ञेय अपने समय के साहित्यकारों से अलग दृष्टि तथा अपने युग के प्रति अतिरिक्त सजग रहने वाले रचनाकार हैं, यही कारण है कि जब छायावादी, प्रगतिवादी विशेषताओं से अन्य कवि मोहित थे, तो वे युग को परिवर्तित करने के नए- नए प्रयोग कर रहे थे। वे 'मैं' की सीमारेखा से बाहर खड़े होकर व्यक्तित्व स्वतंत्रता का समर्थन करते हैं। साहित्य में नए प्रयोग करने की गंभीरता को वे बहुत अच्छे से समझते हैं। नए प्रयोग के द्वारा व्यक्तित्व परिमार्जन की प्रेरणा को उनकी कविताओं में देखा जा सकता है। वे कविता में नए प्रयोग के प्रवर्तक के रूप में जाने जाते हैं। हिंदी साहित्य में जब छायावादी रचनाएँ अपने चरम पर थी, तब ऐसे माहौल में अज्ञेय आत्मचेतना, आधुनिक भावबोध का परिचय पाठकों को कराते हुए नवीन वस्तु शिल्प की सर्जना कर रहे थे। इस इकाई में अज्ञेय का परिचय उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के माध्यम से प्राप्त करेंगे।

2.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- अज्ञेय के जीवन परिचय और रचना यात्रा से अवगत हो सकेंगे।

- हिंदी साहित्य में अज्ञेय के अवदान से परिचित हो सकेंगे।
- अज्ञेय की साहित्यिक प्रयोगशीलता को जान सकेंगे।
- अज्ञेय के रचनात्मक वैविध्य से परिचित हो सकेंगे।
- अज्ञेय द्वारा प्रवर्तित सप्तक परंपरा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- अज्ञेय के क्रांतिकारी, विद्रोही, अन्वेषी, स्वचेता तथा गत्वर स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।

2.3 मूल पाठ : अज्ञेय : एक परिचय

हिंदी साहित्य के छायावादोत्तर काल में अज्ञेय के तार सप्तक से प्रयोगवाद का आरम्भ हुआ। अज्ञेय की कविताओं, कहानियों तथा उपन्यासों में व्यक्तित्व के प्रति अतिरिक्त सजगता तथा मनोवैज्ञानिकता के दिग्दर्शन होते हैं। उनकी रचनाओं में देश-विभाजन, सैनिक जीवन से जुड़े विषय उनकी रचनाओं को अपने समय से गहराई से जोड़ती है। हिंदी साहित्य के आधुनिककालीन साहित्यकारों में व्यक्तित्व स्वतंत्रता के पक्षधर अज्ञेय का नाम प्रमुख रूप से सामने आता है। अज्ञेय ने जब लिखना शुरू किया, तो उस समय हिंदी में छायावादी रचनाओं की बहुलता थी। 1935-36 में प्रगतिशील लेखक संघ के आयोजनों में सम्मिलित होते हुए भी अज्ञेय अपनी प्रयोगशीलता, नए भाषा शिल्प तथा दृष्टि के साथ दिखाई दिए। अन्वेषण की यही प्रवृत्ति अज्ञेय को विशेष साहित्यकार की श्रेणी में रखती है। किसी साहित्यकार के परिचय के दो पक्ष होते हैं, एक व्यक्तिगत तथा दूसरा साहित्यिक परिचय। साहित्यकार की लेखनी अपने जीवन तथा परिवेश से संबद्ध होती है, जिसे कल्पना की स्याही से आदर्श का अनंत समुच्चय गढ़ा जाता है। अज्ञेय के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को निम्न बिंदुओं के माध्यम से जाना जा सकता है।

2.3.1 जीवन परिचय

हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी कवि अज्ञेय दो बहनों तथा आठ भाइयों के बीच तीसरे क्रम में थे। अज्ञेय का जन्म 7 मार्च, 1911 ई. को कसया (कुशीनगर) के पुरातात्विक विभाग के एक शिविर में हुआ था। अज्ञेय के पिताजी का नाम पंडित हीरानंद शास्त्री था, जो भारत सरकार के पुरातत्व विभाग में प्रतिष्ठित पुरातत्ववेत्ता थे। अज्ञेय की माता जी का नाम वयन्ती देवी था। अज्ञेय सारस्वत ब्राह्मण तथा वत्स गोत्र में जन्म लेने के कारण वात्स्यायन कहे जाने लगे। इनका पूरा नाम सचिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय था। उन्होंने आरंभिक शिक्षा घर में प्राप्त करने के बाद विद्यालयी शिक्षा लाहौर में प्राप्त की। अंग्रेजी, फारसी, बंगला तथा तमिल आदि भाषाओं को उन्होंने स्वाध्याय से सीखा। उन्होंने पंजाब से सन् 1925 में मैट्रिक तथा मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज से सन् 1927 में इंटरमीडिएट तथा 1929 में लाहौर के फॉरमन कॉलेज से बी.एस.सी. की शिक्षा पूरी की। एम.ए. अंग्रेजी विषय से प्रथम वर्ष पूरा करने के बाद द्वितीय वर्ष में क्रांतिकारी संगठन से जुड़ गए। चूंकि अज्ञेय के पिता का स्थानांतरण होता रहता था, इसलिए कश्मीर, नालंदा, पटना, लखनऊ आदि अलग-अलग स्थानों का अनुभव अज्ञेय को सहज ही होता रहा। वन, पहाड़, समुद्र तट, बीहड़, गाँव, शहर, देश तथा विदेश आदि का भ्रमण करते हुए विविध कलाओं को सीखते रहते थे। अज्ञेय की रुचि का निरंतर विस्तार होता रहता था, जैसे वे

फोटोग्राफी, बढ़ई, बागवानी, चर्म शिल्प तथा चित्रकला आदि सीखने में सतत निमग्न रहते थे। अज्ञेय अधिकांश समय अपने पिताजी के साथ खुदाई आदि स्थानों पर जाया करते थे। अज्ञेय के पिताजी को स्कूल की शिक्षा में अधिक विश्वास नहीं था, अतः नालंदा से ही इनके मन में अंग्रेजियत से विद्रोह का भाव जागृत हुआ। श्री हीरानंद शास्त्री के मित्र रायबहादुर हीरालाल अज्ञेय की हिंदी भाषा का परीक्षण करते थे। राखालदास से संपर्क होने के बाद इन्होंने बंगला भाषा सीखा।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय ने बी.एस.सी. की शिक्षा कहाँ से पूरी की?
- अज्ञेय अपने पिताजी के साथ प्रायः किस स्थान पर अधिक जाया करते थे?

अज्ञेय अपने शिक्षा प्राप्ति काल में ही क्रांतिकारी दलों के सहयोगी होने के अपराध में अंग्रेजी हुकुमत के द्वारा सन् 1930 में गिरफ्तार कर लिए गए थे। इन्हें चार वर्ष जेल में तथा दो वर्ष घर में नजरबंद रहना पड़ा। इनके क्रन्तिकारी जीवन की अवधि सन् 1929 से 1936 तक की है। जिसमें शहीद भगत सिंह को जेल से छुड़ाने के घटनाक्रम, बम बनाने के कार्य तथा पिस्तौल, कारतूस आदि से संबंधित गतिविधियाँ प्रमुख है। इन सभी गतिविधियों के कारण इन्हें जेल तथा नज़रबंदी का सामना करना पड़ा। अतः ऐसे समय को भी अज्ञेय ने छायावाद, मनोविज्ञान, राजनीति विज्ञान तथा कानून आदि के अध्ययन में व्यतीत करते हुए आत्म-मंथनपूर्ण रचनाएँ की। व्यक्तिगत जीवन में अति व्यवस्थित रहने की आदत होने से प्रायः सभी इनसे दूर रहते थे।

अज्ञेय के जीवन के कुछ व्यक्तिगत क्षणों ने उनकी सोच को अंतर्मुखी तथा प्रकृतिप्रेमी बना दिया। अज्ञेय ने अपने पिता के व्यक्तिगत पुस्तकालय से विविध धर्मों की जानकारी पाई। वड्र्सवर्थ, विक्टर ह्यूगो, जार्ज इलियट, गोल्डस्मिथ आदि सैकड़ों पाश्चात्य विद्वानों की रचनाएँ पढ़ते हुए अज्ञेय पर सबसे अधिक टेनिसन का प्रभाव पड़ा, क्योंकि उनकी भाषा में लयात्मकता थी। उन्होंने कई कविताएँ भी अंग्रेजी में इसी प्रभाव के फलस्वरूप लिखे। श्री हीरानंद शास्त्री ने संकीर्ण प्रादेशिकता से ऊपर उठकर गोत्रनाम के प्रयोग को वरीयता दी, जिसके फलस्वरूप उनके नाम के साथ वात्स्यायन जुड़ा।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय का क्रन्तिकारी जीवन-काल क्या है?
- अज्ञेय को उनकी किन गतिविधियों के कारण जेल की सजा मिली?

भारत भक्त सच्चिदानंद शास्त्री ने टैगोर अध्ययन-मंडली की स्थापना की। अपने बौध्दिक परिमार्जन के लिए वे सतत अध्ययनरत रहते थे। पाश्चात्य विद्वान रस्किन के आचरणशास्त्र तथा सौंदर्यशास्त्र का अज्ञेय पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। दक्षिण भारतीय प्राकृतिक दृश्यों ने इन्हें प्रकृति प्रेमी बनाया, तो मद्रास की जाति-विषमता ने अज्ञेय के मन में जातिवाद के विरुद्ध विद्रोह भाव को जगाया। अपनी गदहपचीसी से बाहर निकलकर जब कार्यक्षेत्र में बढ़ें तो 'सैनिक' पत्रिका के संपादन कार्य से जुड़े। एक साल के बाद 'विशाल भारत' के संपादन कार्य से जुड़े। कलकत्ता के

नगरीकरण की संस्कृति से ऊब कर डेढ़ वर्ष बाद अपने पिताजी के पास बड़ौदा आ गए। जहाँ हीरानंद शास्त्री ने उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए विदेश जाने के लिए कहा, किंतु उसी समय द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया। अतः उन्होंने दिल्ली में आल इंडिया रेडियो में नौकरी कर ली। यहीं से धीरे-धीरे हिंदी की साहित्यिक तथा पत्रकारिता के क्षेत्रों से जुड़ने लगे थे।

6 जुलाई, सन् 1956 में आपका कपिला जी से विवाह हुआ। युद्ध को गलत मानते हुए भी सुरक्षा के लिए युद्ध को उन्होंने आवश्यक माना तथा स्वयं सेना में शामिल हुए। सन् 1943 से 1946 तक सेना में भर्ती होकर उन्होंने सैनिक के रूप में असम, वर्मा, पंजाब तथा पश्चिमोत्तर राज्यों में देश सेवा के कार्य से संबद्ध रहे। सन् 1952 से 1955 तक उन्होंने आकाशवाणी के भाषा सलाहकार के रूप में कार्य किया। इसके बाद अमेरिका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, वर्कले में भारतीय संस्कृति और साहित्य विषय का अध्यापन कार्य किया। 4 अप्रैल, सन् 1987 में हिंदी साहित्य के यायावर दूसरे लोक की यात्रा पर निकल गए।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय के पिता श्री हीरानंद शास्त्री ने अज्ञेय को विदेश जाने के लिए क्यों कहा?
- अज्ञेय ने अमेरिका के किस विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया?

2.3.2 रचना यात्रा

हिंदी साहित्य की एक विशिष्ट धारा के रूप में प्रयोगवादी रचनाओं को मान्यता मिली हुई है। यह अंग्रेजी के एक्स्पेरिमेंटलिज्म के हिंदी पर्याय प्रयोगवाद के रूप में प्रचलित है, जिसमें साहित्य के नए मार्गों का अन्वेषण किया जाता है। यह प्राचीनता का प्रतिरोध करते हुए नवीन का समर्थन करता है। अज्ञेय हिंदी साहित्य में नई भाषा, शैली, छंद तथा विषय के प्रमुख साहित्यकार के रूप में प्रतिष्ठित हैं। हिंदी साहित्य में अज्ञेय जी की रचना-यात्रा का महत्वपूर्ण बिंदु 'तार सप्तक' का संपादन है। इसके संपादन के द्वारा ही अज्ञेय जी की रचनात्मक सक्रियता को चार चाँद लगे। सन् 1965 में उन्होंने 'दिनमान' पत्रिका तथा प्रख्यात राजनीति व समाजचेत्ता जयप्रकाश नारायण के कहने पर सन् 1973 में 'एवरीमैंस' का संपादन कार्य संभाला, किंतु इसी वर्ष उन्होंने इसके संपादक पद से इस्तीफा दे दिया। अज्ञेय ने जोधपुर विश्वविद्यालय में जुलाई सन् 1971 से सितम्बर सन् 1972 तक तुलनात्मक साहित्य का अध्यापन कार्य किया। उन्होंने सन् 1973 में 'नया प्रतीक' नामक साहित्यिक मासिक पत्रिका का आरम्भ किया। सन् 1951 में दूसरे सप्तक का संपादन करते हुए कविता में वस्तु और शिल्प के क्षेत्र में नए प्रयोग का प्रबल समर्थन किया। सन् 1959 में तीसरा सप्तक के माध्यम से हिंदी में नई कविता का आगाज़ होता है। तीसरे सप्तक की भूमिका में अज्ञेय भाषा के नवीन प्रयोग को बढ़ावा देते हैं। इस प्रकार साहित्य में नवीनता के पक्षधर अज्ञेय की रचनाएँ सदैव लीक से इतर पाई जाती हैं। सन् 1977-79 तक उन्होंने दैनिक नवभारत टाइम्स का संपादन कार्य किया। हिंदी के प्रति उनके समर्पण भाव को इस उदाहरण से जाना जा सकता है कि सन् 1978 में 'कितनी नावों में कितनी बार' रचना पर ज्ञानपीठ पुरस्कार से प्राप्त धनराशि से 'वत्सल निधि' स्थापित करते हुए

व्याख्यानमालाओं पर समस्त धन व्यय किया। सन् 1983 में युगोस्लाविया में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में इन्हें 'स्वर्णमाल' सम्मान से नवाज़ा गया।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय द्वारा संपादित तारसप्तकों का प्रकाशन वर्ष बताइए।
- अज्ञेय को ज्ञानपीठ पुरस्कार किस वर्ष प्राप्त हुआ?

अज्ञेय के विविध पुरस्कारों पर निम्नतः दृष्टिपात किया जा सकता है । नागरी प्रचारिणी सभा पुरस्कार (शेखर : एक जीवनी, सन् 1978 में), 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' (आँगन के पार द्वार, सन् 1962 में), भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार (कितनी नावों में कितनी बार, सन् 1978 में), स्वर्णमाल पुरस्कार (सुगा के अंतर्राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में सन् 1983 में), भारत-भारती पुरस्कार (उत्तर प्रदेश संस्थान द्वारा सन् 1983-84 के लिए सन् 1987 में)।

अज्ञेय की रचनात्मक यात्रा के अंतर्गत हमें उनकी विशाल कृतियों का परिचय मिलता है। अज्ञेय की कविताओं में 'भग्नदूत' (1933), 'चिंता' (1942), 'इत्यलम' (1946), 'हरी घास पर क्षण भर' (1949), 'बावरा अहेरी' (1954), 'इन्द्रधनुष रौंदे हुए ये' (1957), 'अरी ओ करुणा प्रभामय' (1959), 'आँगन के पार द्वार' (1961), 'कितनी नावों में कितनी बार' (1967), 'क्योंकि मैं उसे जानता हूँ' (1970), 'सागरमुद्रा' (1970), 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ' (1974), 'महावृक्ष के नीचे' (1977), 'नदी की बाँक पर छाया' (1981) तथा अंग्रेज़ी में 'प्रिज़न डेज़ एँड अदर पोयम्स' (1946) आदि उल्लेखनीय हैं।

अज्ञेय की गद्य रचनाओं में कहानियों के रूप में 'विपथगा' (1937), 'परंपरा' (1944), 'कोठरी की बात' (1945), 'शरणार्थी' (1948), 'जयदोल' (1951) आदि महत्वपूर्ण हैं। उपन्यास विधा के अंतर्गत 'शेखर : एक जीवनी'- प्रथम भाग ,उत्थान (1941), 'शेखर : एक जीवनी'- द्वितीय भाग, संघर्ष (1944), 'नदी के द्वीप' (1951), 'अपने-अपने अजनबी' (1961) आदि हैं।

अज्ञेय एक यायावर प्रवृत्ति के साहित्यकार थे। उनकी यात्रा विषयक रचनाओं में 'अरे यायावार रहेगा याद?' (1953), 'एक बूँद सहसा उछली' (1960) अति महत्वपूर्ण हैं। निबंध संग्रह के अंतर्गत 'सबरंग', 'त्रिशंकु' , 'आत्मनेपद' , 'आधुनिक साहित्य :एक आधुनिक परिदृश्य', 'आलवाल' तथा आलोचना के अंतर्गत 'त्रिशंकु' (1945), 'आत्मनेपद' (1960), 'भवंती' (1971), 'अद्यतन' (1971) आदि उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। उनकी अन्य रचनाओं में 'स्मृति लेखा' (संस्मरण), 'भवंती', 'अंतरा' व 'शाश्वती' (डायरियाँ) 'संवत्सर' (विचार गद्य), 'उत्तरप्रियदर्शी' (नाटक) आदि प्रमुख है। 'शिखर से सागर तक' नामक अज्ञेय की जीवनी रामकमल राय द्वारा लिखा गया है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय की अंग्रेजी में लिखी गयी रचना का नाम बताइए।
- अज्ञेय की जीवनी किसके द्वारा लिखी गई है?

2.3.3 रचनाओं का परिचय

अज्ञेय के विशाल रचना संसार में उनकी समयानुसार प्रयुक्त भाषा का अद्‌भुत सामंजस्य द्रष्टव्य है। अपने जीवन के अनुभवों को उन्होंने नए प्रतीकों के माध्यम से विषयानुसार प्रकट किए हैं। इनकी रचनाओं में संस्कृतनिष्ठ हिंदी से लेकर बोलचाल की भाषा का सुंदर प्रयोग देखा जा सकता है। अज्ञेय की विविधमुखी शैली के सौन्दर्य को उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है, यथा- विवेचनात्मक, वर्णनात्मक, आलोचनात्मक, व्यंग्यात्मक तथा भावात्मक, टिप्पणी, डायरी, उद्धरण, प्रश्नोत्तर तथा साक्षात्कार शैली आदि।

अज्ञेय युगप्रवर्तन के गुणों से आवेष्टित एक प्रखर रचनाकार के गुणों से विभूषित हैं। उनकी कविताओं के शब्दों तथा शैलियों के प्रयोग को इन पंक्तियों में देखा जा सकता है -

'अगर मैं तुमको
ललाती साँझ के नभ की अकेली तारिका
अब नहीं कहता,
या शरद के भोर की नीहार-न्हायी कुंई,
टटकी कली चम्पे की
वगैरह, तो
नहीं कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है
या कि मेरा प्यार मैला है।
बल्कि केवल यही :
ये उपमान मैले हो गए हैं।
देवता इन प्रतीकों के कर गए हैं कूच।
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।'

उपर्युक्त काव्य पंक्तियों में अज्ञेय के रचनात्मक प्रयोग को अनुभूत किया जा सकता है। उनके रचनात्मक प्रयोग की नवीनताओं में वैयक्तिकता तथा सामाजिकता का द्वंद्व भी देख सकते हैं। 'यह दीप अकेला' कविता का उदाहरण इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है-

'यह दीप अकेला स्नेह-भरा है
गर्व-भरा मदमाता पर
इसको भी पंक्ति को दे दो।'

उनकी सामाजिकता व्यक्तित्व के पोषक रूप को स्वीकारता है। अज्ञेय की रचनाओं में परंपरा और आधुनिकता का सुन्दर समन्वय किया गया है। उनकी 'भग्नदूत' कविता में छायावाद की रूमानियत को नए अंदाज़ में देख सकते हैं, जिसमें ससीम का असीम से आत्मिक एकरूपता का चित्रण हुआ है। 'चिंता' कविता में प्रणय-प्रगाढ़ता को सख्यरूप में चित्रित किया गया है। 'इत्यलम' में सहज प्रेम के स्थान पर अज्ञेय की बौद्धिकता के स्वरूप की प्रधानता देखी जा सकती है। प्रेम के द्वन्द्व को 'हरी घास पर क्षण भर' में पाते हैं। इसमें उद्दाम अभिव्यक्ति की झलक पाते हैं, यथा -

‘आह मेरा श्वास है उत्तप्त
धमनियों में उमड़ आयी है लहू की धार
प्यार है अभिशप्त
तुम कहाँ हो, नारि।’

हिंदी साहित्य की साठोत्तरी मोहभंग की रचनाएँ अलग प्रवाह में बहने लगी थीं। अतः अज्ञेय की रचनाओं की शैली में व्यक्तित्व स्वतंत्रता तथा सामाजिकता के भाव में द्वंद्व दिखाई देता है। अज्ञेय अपनी सृजनशीलता को सामाजिकता के प्रवाह में लोप करने से बचाते हैं। ’नदी के द्वीप’ कविता की यह पंक्ति इस सन्दर्भ में उदाहरणीय है -
‘किन्तु हम हैं द्वीप।
हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा।
हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के।
किन्तु हम बहते नहीं हैं
क्योंकि बहना रेत होना है।’

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में मूल्यों के अवमूल्यन को देखते हुए उन्होंने परंपराओं, मूल्यों को व्यक्तिगत दृष्टि से नए रूप में प्रस्तुत किया है। वे प्रेम में बंधन को अनिवार्य नहीं मानते हैं बल्कि उसके अस्पष्ट रूप को भी स्वीकारते हैं। अज्ञेय की इन पंक्तियों के उदाहरण से उनकी व्यक्तिगत मूल्याभिव्यक्ति को समझा जा सकता है -
‘मैं आस्था हूँ
तो मैं निरंतर उठते रहने की शक्ति हूँ
मैं व्यथा हूँ
तो मैं मुक्ति का श्वास हूँ’

अज्ञेय की आत्मलीनता परम सत्य के अधिक निकट प्रतीत होता है। अर्थात जीवन सौन्दर्य को वे आमने-सामने देखने के पक्षधर हैं न कांच के मोह में भटकाव में। ’सोनमछली’ कविता का यह अंश देखा जा सकता है -
हम निहारते रूप :
काँच के पीछे हाँफ रही है मछली।
रूप-तृषा भी’

अज्ञेय की रचनाओं में अहम् का विलोप तथा व्यक्तित्व का संरक्षण एक साथ हुआ है। अपने जीवन अनुभव से गूढ़ सत्य को अपनी रचनाओं में व्यक्त करते हैं। ‘हरी घास पर क्षण भर’ कविता इस संदर्भ उल्लेख्य है-
दुःख सबको माँजता है
और-
चाहे स्वयं सबको मुक्ति देना वह न जाने, किंतु

जिनको माँजता है
उन्हें यह सीख देता है कि सबको मुक्त रखें।'

अज्ञेय 'बावरा अहेरी' कविता में कवि अपने जीवन के कलुष को दूर करने की सूर्य से प्रार्थना करता है, जो उनके आस्तिक भाव का परिचायक है। उनका रहस्यवाद छायावादी रहस्यवाद से भिन्न धरातल पर अभिव्यक्त हुआ है, यथा -

'मैंने देखा
एक बूँद सहसा
उछली सागर के झाग से :
रंगी गयी क्षण भर
ढलते सूरज की आग से।'

अज्ञेय की मानववादी दृष्टि उनकी कविताओं में सहज रूप में देखी जा सकती है। उनकी जिजीविषा उन्हें जीवन-बोध के निकट लेकर आती है। 'मानव अकेला' कविता में मानव के प्रति आस्था के विस्तार को 'अंगारे-सा', 'अकेला' तथा 'भगवान-सा' कहते हुए मानव को विशेष माना है। कवि के काव्य का यह अंश उल्लेख्य है -

'भीड़ों में
जब जब जिस-जिससे आँखें मिलती हैं
वह सहसा दिख जाता है
मानव
अंगारे-सा भगवान-सा
अकेला।'

अज्ञेय प्रयोगधर्मी होते हुए भी आधुनिकता को संस्कारवान होने की प्रक्रिया मानते थे। यही कारण है कि आधुनिकता को उन्होंने भारतीय संस्कृति से संबद्ध करते हुए उसे आत्मबोध के भाव के साथ प्रस्तुत किया है। इस सन्दर्भ में 'असाध्य वीणा' कविता की ये पंक्तियाँ देखी जा सकती है -

'मैं तो डूब गया था स्वयं शून्य में -
वीणा के माध्यम से अपने को मैंने
सब कुछ को सौंप दिया था -
सुना आपने जो वह मेरा नहीं,
वह महामौन
अविभाज्य, अनाप्त, अद्रवित, अप्रमेय
जो शब्दहीन सब में गाता है।'

बोध प्रश्न

- अज्ञेय ने 'बावरा अहेरी' रचना में अहेरी किसे कहा है?

- अज्ञेय संस्कारवान होने की प्रक्रिया किसे माना है?

इस प्रकार अज्ञेय ने आधुनिकता को मूल्य-बोध से गहराई के साथ जोड़ा है। अज्ञेय परम्पराओं के सामने खड़े होकर बड़ी कड़ाई के साथ प्रश्न करते हैं। वे 'पूर्णिमा' को निस्सार तो 'अनंत गगन' को झूठ मानते हैं। वे अपने समय से बड़ी गहराई से जुड़ कर सृजनरत होते हैं। उन्हें आधुनिक नगर व्यवस्था पहाड़ियों की घाटी के सौंदर्य की शत्रु प्रतीत होती है। वे प्रकृति, प्रेम के प्रति अपनी नई दृष्टि अनुभवों का प्रयोग करते हैं, वे प्रेम को बिना किसी प्रतिदान के अनुभूत करते हैं। अज्ञेय प्रेम के क्षणिक अनुभव को ही समेटने की बात करते हैं। क्योंकि उनकी दृष्टि में प्रेम के क्षण दोहराव से मुक्त होते हैं तथा मुक्त करते हैं। अज्ञेय की ऐसी दृष्टि का दिग्दर्शन उनकी रचनाओं में किया जा सकता है, जब वे एक स्थान पर कहते हैं - 'सखि आ गए नीम को बौर'। अब आम छोड़कर नीम के बौर का चित्रण ही अज्ञेय का प्रयोग है। चिर सत्य उपमानों को भी अज्ञेय आँख बंद करके नहीं अपनाते, वरन अपनी कसौटी पर कसते हैं। यही उनकी व्यक्तित्व शोधक दृष्टि बन जाती है। अज्ञेय की व्यक्तित्व शोधक दृष्टि कहीं से भी कुंठित नहीं प्रतीत होती है। उनकी संवेदनात्मक तीव्रता को आत्मदानपरक कृतियों में देख सकते हैं, जिसमें प्रेम, प्रकृति तथा मृत्यु के प्रति उनकी विशिष्ट दृष्टि व्यक्त हुई है -

'पार्श्व गिरि कला नम्र, चीड़ों में
डगर चढ़ती उमंगों-सी।
बिछी पैरों में नदी ज्यों दर्द की रेखा।
विहग-शिशु मौन नीड़ों में
मैंने आँख भर देखा।
दिया मन को दिलासा-पुनः आऊंगा।
(भले ही बरस-दिन अनगिन युगों के बाद!)
क्षितिज ने पलक-सी खोली,
तमक कर दामिनी बोली -
अरे यायावर! रहेगा याद?'

अज्ञेय की रचनाओं में निस्संगता को अनोखे स्वरूप में देखा जा सकता है। उनके लिए प्रेम और मृत्यु जीवन का अभिन्न अंग है। उनकी असाध्य वीणा के उपमान परंपरागत होकर भी नए रूप में चित्रित हुई है। उनकी 'सम्राज्ञी का नैवेद्य दान' कविता में जापान की सम्राज्ञी कोमियो प्राचीन राजधानी नारा के बौद्ध मंदिर में जाने से पूर्व इस सोच में पड़ जाती हैं कि वे अपने साथ चढ़ावे में क्या लेकर जाएँ। अतः बहुत विचार के बाद वे जो तय करती हैं, उसे इन पंक्तियों में देख सकते हैं -

'जो कली खिलेगी जहाँ, खिली,
जो फूल जहाँ है,
जो भी सुख जिस भी डाली पर
हुआ पल्लवित, पुलकित,

मैं उसे वहीँ पर
अक्षत, अनाघ्रात, अस्पष्ट, अनाविल,
हे महाबुद्ध।
अर्पित करती हूँ तुझे।'

अज्ञेय के रचना संसार में प्रयोग की नवीनता पाठक को बराबर यह अनुभूत कराती है कि वे अपनी सर्जना से संतुष्ट नहीं हैं। 'शब्द और सत्य' नामक रचना में वे प्रत्येक बार शब्द के पास लौटते हुए देखे जा सकते हैं। वे कहते हैं -
'प्रयोजन मेरा बस इतना है :
ये दोनों जो
सदा एक-दूसरे से तनकर रहते हैं
कब, कैसे, किस आलोक-स्फुरण में
इन्हें मिला दूँ -
दोनों जो हैं बंधु, सखा,चिर सहचर मेरे'

उपर्युक्त उदाहरण में अज्ञेय अन्य रचनाकारों से इतर सिद्ध होते हैं। जहाँ सत्य की उपस्थिति को अन्य रचनाकार पहले से मानकर शब्दों के माध्यम से सत्य को ढूँढते हैं, वहीं अज्ञेय के पास शब्द पहले से हैं, जिसके माध्यम से वे सत्य की खोज में निकलते हैं। अज्ञेय की दृष्टि में प्रकृति मात्र साज-सज्जा के लिए ही नहीं होती बल्कि उसके रचना-प्रयोग की संभावनाएँ असीमित है। उन्हें शांति, सहजता के स्थान पर तनाव तथा द्वंद्वात्मक मनःस्थिति में ही नई रचना-दृष्टि प्राप्त होती है। अज्ञेय अपनी कृतियों में मृत्यु को भय का कारक न मान कर विकल्प का द्योतक मानते हैं। व्यक्तित्व को बचाते हुए अहं को विगलित करने का प्रयास अज्ञेय ने अपने उपन्यास 'शेखर : एक जीवनी' में किया है। अज्ञेय की रचनाओं में संघर्ष की सार्थकता उनकी जिजीविषामूलक रचनाओं में देखी जा सकती है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय ने पूर्णिमा को क्या कहा है?
- अज्ञेय ने तनाव की स्थिति को क्या माना है?

2.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व

अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभासंपन्न साहित्यकार के रूप में हिंदी जगत में प्रसिद्ध हैं। छायावादी कवियों की साहित्यिक रूमानी लीक से हटकर यथार्थ के भावधरा पर रचना करने वाले साहित्यकार अज्ञेय अपनी मौलिक उद्भावनाओं के लिए जाने जाते हैं। साहित्य में नए-नए प्रयोग करते हुए नई कविता का मार्ग प्रशस्त किया। घटनाओं को यथातथ्य रूप में नई शैली में रचनाओं को प्रस्तुत करने में अज्ञेय बेजोड़ हैं। अज्ञेय साहित्य ही नहीं अपितु समाज के प्रति भी सदैव समर्पित रहने वाले साहित्यकारों में स्थान रखते हैं। देश और समाज की स्थितियों के प्रति वे अतिरिक्त जागरूक रहते थे। उनकी सर्जना स्वयं तक ही नहीं अपितु अन्य रचनाकारों के

मार्गदर्शक के रूप में भी तत्परतापूर्वक 'तार सप्तक' के संपादन के रूप में देखी जा सकती है। देश और मानवता की कारुणिक दशा देखकर उनका मन दयार्द्र हो उठता था। अपने देश की समृद्ध सांस्कृतिक परंपरा की स्थापना को प्रतिष्ठा दिलाने का प्रयत्न उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है। उत्कृष्ट साहित्यकार होने के साथ-साथ वे सफल संपादक तथा पत्रकार के रूप में भी हिंदी जगत में प्रतिष्ठित हैं। हिंदी जगत अज्ञेय जैसे साहित्यकार को पाकर गौरवान्वित हो उठा है। वे अपने व्यक्तिगत तथा साहित्यिक जीवन में वे अनोखे व्यक्तित्व को धारण करने वाले साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं।

2.4 पाठ सार

हिंदी साहित्य के प्रयोगवादी साहित्यकार सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय की व्यक्तिगत तथा रचनात्मक जीवन की यात्रा अत्यंत रोचक है। अज्ञेय भारतीय स्वतंत्रता के सक्रिय योद्धा तथा हिंदी साहित्य में नवीनता के उद्घोषक व्यक्तित्व के रूप में जाने जाते हैं। अपने व्यक्तिगत जीवन के अनूठेपन के कारण उनके अनुभव संसार तथा प्रयोग की शैली भी अत्यंत अनोखी बन गयी है। जीवन के व्यापक अनुभवों ने उनके अनुभव को पुष्ट किया तथा गहन अध्ययनशीलता ने उन्हें अंतर्मुखी बनाया। अज्ञेय की दृष्टि में व्यापकता का सन्निवेश उनके साहित्य में सहज ही झलकता है। उनके रचना संसार के परिमार्जन में विविध भाषाओँ के साहित्य, धर्म के अध्ययन का बहुत बड़ा योगदान रहा है। वे अपने पिताजी की पुरातात्विक नौकरी के चलते भारत के अलग-अलग प्राकृतिक, सामाजिक परिवेश से सहजतापूर्वक जुड़ सके। अलग-अलग प्रान्तों की मान्यताओं तथा परम्पराओं से परिचित होते हुए उन्होंने अपनी दृष्टि का विस्तार किया। उनके व्यक्तित्व के विशाल धरातल के निर्माण में श्री हीरानंद शास्त्री जी के कठोर अनुशासन का महत्वपूर्ण स्थान है। उनकी रचनाओं में नित नए प्रयोग ने उनकी रचनात्मक यात्रा को गहनता प्रदान की। वे अपनी रचनाओं में नवीनता के पोषक होते हुए भी भारतीय संस्कृति के विराट तत्व को भी स्थापित करने हेतु दृढ़ता के साथ तत्पर हैं। प्रेम, प्रकृति, परंपरा, जीवन-मृत्यु के प्रति सर्वथा नए दृष्टिकोण का प्रतिपादन अज्ञेय को अन्य युगीन साहित्यकारों में विशिष्ट बनाता है।

2.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं –

1. अज्ञेय बहुमुखी प्रतिभा संपन्न रचनाकार थे। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए क्रांतिकारी आन्दोलन में भी सक्रिय भाग लिया।
2. 'तार सप्तक' के संपादक के रूप में अज्ञेय ने प्रयोगशीलता को तत्कालीन हिंदी कविता की केन्द्रीय प्रवृत्ति के रूप में स्थापित किया जिसे आलोचकों ने 'प्रयोगवाद' के नाम से अभिहित किया।
3. 'दूसरा सप्तक' तक आते-आते प्रयोगवाद 'नई कविता' में ढल गया अब इसका केन्द्रीय मूल्य 'आधुनिक युग बोध की अभिव्यक्ति' के रूप में पहचाना गया।

4. अज्ञेय एक ओर तो नवीनता के पोषक थे लेकिन दूसरी ओर उन्होंने अपने काव्य में भारतीय संस्कृति के विराट तत्व का प्रतिपादन किया।
5. अज्ञेय ने अपने समय के भारतीय मध्य वर्ग के जीवन संघर्ष, अवसाद और अकेलेपन के साथ-साथ उसकी जिजीविषा को भी अभिव्यक्ति प्रदान की।
6. अज्ञेय ने प्रेम, प्रकृति, जीवन और मृत्यु के प्रति अस्तित्ववादी दृष्टिकोण को सटीक अभिव्यक्ति प्रदान की।

2.6 शब्द संपदा

1. अंतर्मुखी = अपने विचार दूसरों के सामने न व्यक्त करना
2. अग्रणी = आगे चलने वाले
3. अवमूल्यन = मूल्यों में कमी आना
4. उद्दाम = बन्धनहीन
5. कलुष = अपवित्रता
6. गत्वर = गति में चलने वाला
7. गदहपचीसी = 25 वर्ष तक की अवस्था
8. जिजीविषा = जीने की चाह
9. नज़रबंद = किसी स्थान में कड़ी निगरानी में रखा जाना
10. निमग्न = किसी कार्य में पूरी तरह डूबना
11. पुरातात्विक = इतिहास स्रोतों की जानकारी के लिए उत्खनन
12. प्रगाढ़ता = तीव्रता या अधिकता
13. शिविर = छावनी
14. समुच्चय = समूह

2.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अज्ञेय के व्यक्तित्व पर विस्तृत प्रकाश डालिए।
2. हिंदी साहित्य में प्रयोगवादी काव्यधारा के प्रवर्तक के रूप में अज्ञेय के अवदान को बताइए।
3. अज्ञेय की रचना यात्रा का उल्लेख कीजिए।
4. हिंदी साहित्य में अज्ञेय के महत्व का चित्रण कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. साहित्य में प्रयोगवाद का क्या अर्थ है?
2. अज्ञेय के अन्वेषक व्यक्तित्व का परिचय दीजिए।
3. अज्ञेय के प्रयोगशील रचनाओं का परिचय दीजिए।
4. अज्ञेय को प्राप्त विविध पुरस्कारों एवं सम्मानों का उल्लेख कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. अज्ञेय का जन्म निम्न विकल्पों में से कब हुआ? ( )
   (अ) सन् 1905 में (आ) सन् 1907 में (इ) सन् 1911 में
2. 'एवरीमैंस' के संपादन कार्य से अज्ञेय किस वर्ष जुड़े थे? ( )
   (अ) सन् 1963 में (आ) सन् 1973 में (इ) सन् 1971 में
3. अज्ञेय की हिंदी भाषा का परीक्षण इनमें से किसके द्वारा किया जाता था? ( )
   (अ) रायबहादुर हीरालाल (आ) रायबहादुर पन्नालाल (इ) बालमुकुन्द गुप्त
4. अज्ञेय ने लाहौर के फॉरमन कॉलेज से बी.एस. सी. की शिक्षा किस वर्ष पूरी की? ( )
   (अ) सन् 1923 में (आ) सन् 1929 में (इ) सन् 1925 में
5. अज्ञेय का विवाह कब हुआ? ( )
   (अ) सन् 1956 में (आ) सन् 1948 में (इ) सन् 1955 में

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. अज्ञेय के पिता का नाम..... था।
2. अज्ञेय की पत्नी का नाम .....है।
3. 'उत्तरप्रियदर्शी'..... विधा में लिखी गयी अज्ञेय की रचना है।
4. मृत्यु को भय का कारक न मान कर अज्ञेय ने ..... द्योतक माना है।
5. अज्ञेय ने सन् 1952 से .....तक आकाशवाणी के भाषा सलाहकार के रूप में कार्य।

III. सुमेल कीजिए -

1. तुलनात्मक साहित्य का अध्यापन	(अ) 1951 में
2. 'नया प्रतीक'	(आ) 1974 में
3. 'पहले मैं सन्नाटा बुनता हूँ'	(इ) जोधपुर विश्वविद्यालय में
4. दूसरा सप्तक	(ई) 1973 में

2.8 पठनीय पुस्तकें

1. अज्ञेय की प्रतिनिधि कविताएँ एवं जीवन परिचय : विद्यानिवास मिश्र
2. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. अज्ञेय रचनावली
4. अज्ञेय की प्रयोगधर्मिता : मुकेश कुमार
5. हिंदी साहित्य का बृहत् इतिहास : डॉ. नगेन्द्र
6. हिंदी कविता के प्रमुख वाद : डॉ. आदित्य प्रचण्डिया

इकाई 3 : अज्ञेय की दो प्रतिनिधि कविताएँ

रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 मूल पाठ : अज्ञेय की दो प्रतिनिधि कविताएँ
3.3.1 नदी के द्वीप
क) अध्येय कविता का सामान्य परिचय
ख) व्याख्या भाग
3.3.3 कितनी नावों में कितनी बार
क) अध्येय कविता का सामान्य परिचय
ख) व्याख्या भाग
3.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन
3.4 पाठ सार
3.5 पाठ की उपलब्धियाँ
3.6 शब्द संपदा
3.7 परीक्षार्थ प्रश्न
3.8 पठनीय पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! इस इकाई में अज्ञेय की दो कविताओं का अध्ययन करेंगे। अज्ञेय को हिंदी साहित्य के आधुनिककाल के प्रयोगवादी युग के प्रमुख प्रवर्तक माना जाता है। प्रयोगवाद तथा तारसप्तक अज्ञेय से जुड़ी हुई हैं। वे एक ऐसे सर्जक साहित्यकार थे, जिनका सृजन लीक से हटकर, नए राहों का अन्वेषण करते हुए एक नई छाप छोड़ने के लिए हर पल लालायित रहते थे। उपन्यास हो, कहानी हो या कविता, उन्होंने अपनी छाप छोड़ी है। न केवल कविता में बल्कि कथा साहित्य में भी उनकी अभिव्यक्ति लीक से हटकर ही दिखाई पडती है। प्राय: यही कारण है कि उनके लिए अक्सर ऐसा कहा जाता है- 'बीहड में अकेले चलने वाले, तथा अनुभव की भठ्टी में' अपनी अंतदृष्टि को शोधित करने वाले आदि। रूढ़िगत परंपराओं को तोड़ते हुए नए प्रतीक, नए बिंब, नए चित्र एवं नए शिल्प को प्रस्तुत करने में अज्ञेय अग्रणी थे। उनकी साहित्यिक चेतना को जानने के लिए उनकी ही रचना अरी ओ करुणा प्रभामय से ये दो पंक्तियाँ यों मैं कवि हूँ, आधुनिक हूँ, नया हूँ काव्य-तत्व की खोज में कहाँ नहीं गया हूँ? पर्याप्त है।

वैसे तो छात्रो, हममें से अधिकांश अज्ञेय को बस इसी नाम से जानते हैं, लेकिन उनका पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' है। जितना लंबा उनका नाम है, उनकी कविताएँ उतनी ही छोटी। जैसे- उड गई चिडिया/ कांपी, फिर/ थिर/हो गयी पत्ती/ एक दिन/ और दिनों सा/ आयु का एक बरस ले चला गया ।

इस प्रस्तावना के साथ, तो चलिए छात्रों, प्रस्तुत पाठ में हम पढ़ते हैं अज्ञेय की दो कविताएँ 'नदी के द्वीप' तथा 'कितनी नावों में कितनी बार। सन 1947 में उनका एक काव्य-संकलन प्रकाशित हुआ था, जिसका शीर्षक है हरी घास पर क्षण भर। इस संकलन में संकलित कविताओं में से हरी घास पर क्षण भर, कलगी बाजरे की, नदी के द्वीप आदि महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं। यह भी ध्यातव्य है कि 'नदी के द्वीप' शीर्षक से उनका एक उपन्यास भी प्रकाशित हुआ है। पर हम उनकी नदी के द्वीप शीर्षक कविता का पाठ करेंगे जो कि एक प्रतीकात्मक रचना है। प्रतीकों के माध्यम से सामाजिक अस्मिता की खोज करना अज्ञेय की निजी विशेषता थी। प्रस्तुत पाठ में सम्मिलित अज्ञेय की पहली कविता 'नदी के द्वीप' उनका कविता संकलन हरी घास पर क्षण भर में संकलित है। कविता पर विश्लेषणात्मक अध्ययन करने से पहले प्रयोगवाद की भूमिका को जानते हुए प्रयोगवाद एवं नई कविता के बीच के अंतर को पहले समझने का प्रयास करेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- प्रयोगवाद की विशेषताओं को समझ पाएँगे।
- प्रयोगवाद तथा नई कविता के अंतर को स्पष्ट कर पाएँगे।
- अज्ञेय के जीवन एवं साहित्य के बारे में जान सकेंगे।
- अज्ञेय की रचनाओं में निहित वैविध्य को समझ सकेंगे।
- अज्ञेय की सृजन प्रक्रिया से साक्षात्कार कर पाएँगे।
- अज्ञेय की रचनाओं में निहित प्रकृति चेतना, मानवता एवं समाज-बोध की व्याख्या कर पाएँगे।
- 'नदी के द्वीप' कविता के प्रतीक सौंदर्य को समझते हुए उसका विश्लेषण कर पाएँगे।
- कितनी नावों में कितनी बार की व्याख्या कर पाएँगे।
- अज्ञेय की रचनाओं में अभिव्यक्त शिल्प योजना, बिंब योजना, अप्रस्तुत विधान आदि पर विस्तार से जान पाएँगे।

3.3 मूल पाठ : अज्ञेय की दो प्रतिनिधि कविताएँ

3.3.1 नदी के द्वीप

1

हम नदी के द्वीप हैं
हम नहीं कहते कि हमको छोड़कर स्रोतस्विनि बह जाए।
वह हमें आकर देती है।
हमारे कोण, गलियाँ, अंतरीप, उभार, सैकत-कूल
सब गोलाइयाँ उसकी गढ़ी हैं।
माँ है वह! है, इसी से हम बने हैं।

2

किंतु हम हैं द्वीप। हम धारा नहीं हैं।
स्थिर समर्पण है हमारा। हम सदा से द्वीप हैं स्रोतस्विनी के।
किंतु हम बहते नहीं हैं। क्योंकि बहना रेत होना है।
हम बहेंगे तो रहेंगे ही नहीं।
पैर उउखड़ेंगे। प्लावन होगा। ढहेंगे । सहेंगे। बह जाएँगे।
और फिर हम चूर्ण होकर भी कभी क्या धारा बन सकते?
रेत बनकर हम सलिल को तनिक गँदला ही करेंगे।
अनुपयोगी ही बनाएँगे।

3

द्वीप हैं हम! यह नहीं है शाप
यह अपनी नियती है।
हम नदी के पुत्र हैं।
बैठे नदी की क्रोड में।
वह बृहत भूखंड से हम को मिलाती है।
और वह भूखंड अपना पितर है।

4

नदी तुम बहती चलो।
भूखंड से जो दाय हमको मिला है, मिलता रहा है,
माँजती, संस्कार देती चलो । यदि ऐसा कभी हो-
तुम्हारे आह्लद से या दूसरों के,
किसी स्वैराचार से, अतिचार से,
तुम बढो, प्लावन तुम्हारा घरघराता उठे-
यह स्रोतस्विनी ही कर्मनाशा कीर्तिनाशा घोर काल-
प्रवाहिनी बन जाए-
तो हमें स्वीकार है वह भी। उसी में रेत होकर।
फिर छनेंगे हम। जमेंगे हम। कहीं फिर पैर टेकेंगे।
कहीं फिर भी खडा होगा नए व्यक्तित्व का आकार।
मात: उसे फिर संस्कार तुम देना।

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए। इस कविता का मौन वचन कीजिए।

क) अध्येय कवि तथा कविता का सामान्य परिचय

प्रिय छात्रो! वैसे तो आप जानते ही हैं कि 'नदी के द्वीप' शीर्षक कविता सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय की प्रकाशित कृति 'हरी घास पर क्षण भर' में संकलित है। इस काव्य-संकलन का प्रकाशन सन 1947 में हुआ था। इसके प्रकाशन से उन्हें हिंदी साहित्य संसार में एक नई पहचान मिली ऐसा कहना गलत नहीं होगा। उनकी काव्य कला अत्यंत निपुणता के साथ इसमें प्रस्तुत हुई है। आत्मान्वेषण, प्रकृति तथा प्रणयानुभूति से संबंधित रचनाएँ इस संकलन में सम्मिलित हैं। कवि के बिंब एवं प्रतीकों में एक नई ताजगी महसूस होती है। नदी के द्वीप पूर्णतः एक प्रतीकात्मक रचना है जिसमें कवि ने नदी, द्वीप, तथा भूखंड द्वारा क्रमश: व्यक्ति, परंपरा और समाज के पारस्परिक संबंधों को समझाने का प्रयास किया है। इस कविता में द्वीप व्यक्ति का प्रतीक है, नदी संस्कृति, माँ या परंपरा का प्रतीक है तथा भूखंड समाज या पिता का प्रतीक है। व्यक्ति की टकराहट या तो समाज से या संस्कृति परंपरा से होती रहती है। समाज में रहकर भी व्यक्ति को अपनी अस्मिता को बरकरार रखने हेतु जद्दोजहद करनी पड़ती है। समाज को दिशा प्रदान करने के लिए व्यक्ति को सबसे पहले समाज के विरोध का सामना करना पड़ता है। समाज में रहते हुए व्यक्ति को अपनी परंपरा एवं संस्कृति की रक्षा भी करनी है और अपने अस्तित्व को भी सुरक्षित रखना है, यही कविता का केंद्रीय भाव है। जिस प्रकार नदी द्वीप के उभार, सैकत-कूल को गढ़ती है, उसी प्रकार संस्कृति व्यक्ति के बाह्य तथा आंतरिक रूप को गढ़ती है। नदी धारा बनकर बहती है, यही उसकी नियति है किंतु एक स्थान पर स्थित रहना द्वीप की नियति है। कवि ने प्रस्तुत कविता में नदी द्वीप और भूखंड के माध्यम से व्यक्ति समाज और व्यक्तित्व निर्माण की ओर दिशा दीप्त करते हैं।

कविता की मूल संवेदना इस विचार पर आधारित है कि जिसने अस्तित्व दिया है, उसी के लिए हमारा अस्तित्व समर्पित होना चाहिए। जो देता है, उसे लेने का भी अधिकार होता है । अस्तित्व बाह्य रूप से समाप्त और समाहित होकर भी वस्तुतः ऐसा नहीं होता । समय और काल के प्रवाह में नदी के द्वीपों की तरह वह स्वयं बनता और बिगड़ता है। नदी के लिए द्वीप उसके संतान के समान है जिसने उसे रूप देकर साकार किया है। द्वीप अपने रूपाकार में ही नदी की शोभा बढ़ता है। उसके साथ बहकर रेत होकर उसे गंदला नहीं करता। उसी प्रकार हमें भी अपने अस्तित्व की पहचान को अपनी गतिशीलता के नाम पर गंदला नहीं बनाना चाहिए।

बोध प्रश्न

- नदी के द्वीप किस प्रकार की रचना है?
- नदी के द्वीप कविता पढकर आपको कैसा लगा?
- अस्तित्व शब्द से आप क्या समझते हैं?
- आपको क्या लगता है कि व्यक्ति को द्वीप के समान रहना है या धारा के समान?
- क्या आप कवि के विचारों से सहमत हैं?

ख) व्याख्या भाग

हम नदी के .....हम बने हैं।

संदर्भ : प्रस्तुत पद्यांश को प्रयोगवादी कवि अज्ञेय द्वारा रचित नदी के दीप कविता से उद्धृत किया गया है। इस कविता में नदी और द्वीप प्रतीकार्थ में प्रयुक्त हैं। नदी समाज का प्रतीक है तो द्वीप व्यक्ति का प्रतीक है।

प्रसंग : कवि का कहना है कि जिस प्रकार द्वीप अपने आकार पाता है नदी से, नदी उसकी जननी होती है, ठीक उसी प्रकार जिस समाज ने जिस संस्कृति ने हमें नदी के द्वीप की तरह रूप दिया है, उसके प्रति हमें समर्पण की भावना रखनी चाहिए। कवि ने इन पंक्तियों में अपने अस्तित्व निर्माण की बात की है। नदी की धारा में द्वीप नहीं बहता है बल्कि अपने अस्तित्व की रक्षा करता है, हमें भी इस समाज में रहते हुए अपने अस्तित्व की रक्षा करनी चाहिए।

व्याख्या : अपनी चारों ओर जल से घिरे हुए भूभाग को द्वीप कहा जाता है। कवि कहते हैं कि हम उस नदी के द्वीप हैं, जिससे हमें यह रूप मिला है। नदी माँ की तरह द्वीप के आकार को गढ़ती है। समाज और संस्कार परंपराओं से हमें अपने चरित्र निर्माण का अवसर मिलता है। जिस प्रकार नदी के बिना द्वीप का अस्तित्व नहीं उसी प्रकार व्यक्ति का अस्तित्व संस्कृति समाज के बिना नहीं है। क्योंकि वही हमें आकार देती है। द्वीपों की कोण, गलियों, अंतरीप, उभार रेतीले-किनारे आदि सभी गोलाइयां गढ़ने वाली नदी ही द्वीपों की माँ कहलाती है, अतः जिस समाज में जिन परंपराओं से हमारा अस्तित्व निर्माण हुआ है, उसे हमें माँ के समान देखना चाहिए। समाज से अलग हटकर हम अपने अस्तित्व की स्थापना नहीं कर सकते। व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व की रक्षा करते हुए समाज के प्रति समर्पण की भावना रखनी चाहिए। अतः यह कहा जा सकता है कि व्यक्ति को द्वीप की तरह अपनी निजता को कायम रखना भी अनिवार्य है। इस प्रकार प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने व्यक्ति तथा व्यक्तित्व निर्माण और उसके अस्तित्व की महत्ता का बखान नदी और द्वीप के माध्यम से किया है।

विशेषताएँ : प्रतीकात्मक कविता है। नदी और द्वीप के बीच एक अटूट रिश्ता होता है, उसी तरह व्यक्ति और समाज के बीच एक अटूट संबंध होता है, जिसे कवि ने प्रस्तुत कविता के माध्यम से दर्शाया है। देश के प्रति समर्पित होकर रहने की भावना अंतर्निहित है। जिस धरती पर हमारा अस्तित्व हुआ है, उसे सम्मान की दृष्टि से देखते हुए हमें अपने अस्तित्व को भी स्थिर रखना है।

बोध प्रश्न

- नदी और द्वीप किस के प्रतीक हैं ?
- कवि किसके अस्तित्व की रक्षा की बात करता है ? और क्यों ?
- कवि देश के प्रति किस प्रकार की भावना को अंतर्निहित कर रखना चाहते हैं ?

किंतु हम.....बनाएँगे।

व्याख्या : इन पंक्तियों में द्वीप कहता है कि हम नदी निर्मित द्वीप हैं, हम स्वयं धारा नहीं हैं। लेकिन फिर भी उस नदी के प्रति हमारा स्थिर समर्पण है क्योंकि नदी हमारी माँ है जिसने हमें यह रूप आकार और अस्तित्व दिया है। हमें अपनी शक्ति और सीमा का पूर्ण ज्ञान है। द्वीप बनकर रहना हमारी नियति है, हम धारा कभी नहीं बन सकते। अर्थात, व्यक्ति के चरित्र का निर्माण वह जिस समाज में रहता है, उससे और परंपरा से मिलती है, व्यक्ति को उसी समाज के साथ समर्पण की भावना रखते हुए रहना है, लेकिन बावजूद इसके, उसका एक अलग अस्तित्व है, जिसकी पहचान कायम रखना भी अनिवार्य है। इसीलिए कवि कहते हैं कि नदी के प्रति स्थिर समर्पण की भावना होने पर भी हम बहेंगे नहीं, क्योंकि बहने का अर्थ है रेत होना, और रेत बनने से पानी को हम गंदला ही करेंगे, प्लावन भी हो सकता है। नदी की नियति धारा बनकर बहना है और द्वीप की नियति स्थिर होकर रहना है। समाज बदलते रहता है, और बदलते समाज में अपने अस्तित्व की स्थिरता को कायम रखना भी अनिवार्य है। अर्थात नदी के अंतराल से जन्म लेने वाले द्वीप की सुरक्षा उसकी स्थिरता में है, बहाव में नहीं, ठीक उसी प्रकार अपनी भूमि से उखड़कर कोई भी अपने अस्तित्व को बनाए नहीं रख सकता। अत: व्यक्ति को उस समाज के प्रति ऋणी होना चाहिए, व्यक्ति और समाज के बीच समन्वय स्थापित करना उसका कर्तव्य है। अतः ऐसा कार्य न करें जिससे यह समाज कलंकित या दूषित हो।

विशेषताएँ : कवि ने परंपरागत दार्शनिक एवं अस्तित्ववादी विचारधारा के साथ आधुनिक दर्शन के धरातल पर इस कविता की रचना की है। राष्ट्रीय भावना भी इसमें समाहित है। कवि का आशय है कि प्रवाह में पड़कर द्वीप अपने अस्तित्व को खोना नहीं चाहता, उसी प्रकार व्यक्ति को समाज का अंग होकर भी उसकी अपनी निजता को बनाए रखना होगा। हमारा यह भी कर्तव्य है कि हम समाज और देश की धारा को बिना गंदला किए अपने अस्तित्व को कायम रखते हुए समाज और देश के हित में कार्य करें।

बोध प्रश्न

- 'नदी के प्रति हमारा स्थिर समर्पण है' इस कथन के द्वारा कवि क्या संदेश दे रहे है?
- 'प्रवाह में पड़कर द्वीप अपने अस्तित्व को खोना नहीं चाहता' कवि के इस कथन से क्या आशय है?

द्वीप हैं हम .....अपना पितर है।

प्रसंग : कवि व्यक्ति को द्वीप मानकर कहते हैं कि जो भी रूप हमें मिला है, उससे हमें संतुष्टि होनी चाहिए क्योंकि जो नियति है उसे स्वीकारना चाहिए। यह कोई शाप नहीं कि हमें द्वीप बनकर स्थिर रहना पड रहा है। इन पदों में कवि ने द्वीप को नदी और भूखंड का पुत्र कहा है। यह

भी प्रतीकात्मक ही है। इसके माध्यम से कवि ने व्यक्ति का देश और विश्व के साथ के आत्मीय संबंध को इंगित किया है।

व्याख्या : द्वीप कहता है कि हम द्वीप बनकर पैदा हुए हैं, इसमें हमें कोई दुख या खेद नहीं है, क्योंकि यह कोई शाप नहीं है। क्योंकि हम उस नदी के संतान हैं जिसने हमें आकार देकर साकार रूप प्रदान किया है । अर्थात हम उस समाज के संतान हैं जिसमें रहकर हमने अपना सब कुछ पाया है। अतः द्वीप बनकर पैदा होना कोई अभिशाप नहीं है। जिस तरह माता अपने बच्चों को जन्म देकर पिता से मिलाती है उसी प्रकार इस माता नदी ने रूप देकर उस भूखंड से हमें मिलाया है जो पिता है। अर्थात व्यक्ति उस समाज का अंग है जिससे उसे परंपराओं का ज्ञान होता है।

विशेषताएँ : प्रतीकात्मक कविता है। अस्तित्ववादी विचारधारा झलकती है। मनुष्य को सामाजिक प्राणी कहा जाता है। अतः समाज से कटकर या हटकर हम नहीं सोच सकते। व्यक्ति और समाज का संबंध माँ-पुत्र का संबंध होता है और माँ ही पिता की पहचान कराती है। बृहद भूखंड यहाँ विश्व की बात करता है।

बोध प्रश्न

- कवि नियति को क्यों स्वीकारने की बात करते हैं?
- द्वीप को किस बात का दुःख नहीं है?

नदी तुम .....संस्कार तुम देना।

प्रसंग : जिस प्रकार नदी की धारा निरंतर बहती रहती है, उसी प्रकार यह समाज परिवर्तनशील और गतिमान है। कवि कहते हैं कि जो अपनी नियति है, उसी के अनुरूप जीवन जीना चाहिए अन्यथा हम समाज को गंदला ही करेंगे।

व्याख्या : हे नदी, तुम मेरी माँ हो। द्वीप के रूप में तुमने मुझे जन्म दिया है। तुम निरंतर बहती रहती हो जो तुम्हारी विशेषता है। हम नदी के द्वीप होकर भी हमारा अपना अस्तित्व है। नदी हमारी माता और भूखंड अपना पिता है, दोनों की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है। लेकिन फिर भी यदि हम कभी राह भटक जाते हैं या कोई जलप्लावन हो जाय तो हम रेत भी बन जाएँगे फिर अपने आप को छनेंगे और फिर हम उस नदी के द्वीप बनकर पैदा होंगे। अर्थात समाज कभी बदल जाय या हम कभी संस्कारों से वंचित रहते हैं ऐसे में फिर से नए सिरे से हमारे व्यक्तित्व को गढ़ना। माँ बनकर तुम फिर से हमें संस्कार देना।

विशेषताएँ : प्रतीकात्मक कविता है। द्वीप, नदी का मानवीकरण है। अस्तित्ववाद की अभिव्यंजना हुई है। समय और काल प्रवाह में द्वीपों की तरह व्यक्ति का अस्तित्व भी बनता और बिगड़ता है। सदियों से यह चला आ रहा है। व्यक्ति का बाह्य रूप मिट सकता है लेकिन व्यक्ति का आंतरिक गुण कभी मिट नहीं सकते।

बोध प्रश्न

- कवि नियति के अनुरूप जीवन जीने की बात क्यों करते हैं?
- माँ बनकर पुनः संस्कारित करने से कवि का क्या आशय है?

3.3.3 कितनी नावों में कितनी बार

कितनी नावों में कितनी बार
कितनी दूरियों से कितनी बार
कितनी डगमग नावों में बैठ कर
मैं तुम्हारी ओर आया हूँ
ओ मेरी छोटी-सी ज्योति
कभी कुहासे में तुम्हें न देखता भी
पर कुहासे की ही छोटी-सी रुपहली झलमल में
पहचानता हुआ तुम्हारा ही प्रभा-मंडल
कितनी बार मैं,
धीर, आश्वस्त, अक्लांत-
ओ मेरे अनुबुझे सत्य! कितनी बार

और कितनी बार कितने झगमग जहाज
मुझे खींच कर ले गए हैं कितनी दूर
किन पराए देशों की बेदर्द हवाओं में
जहाँ नंगे अंधेरों को
और भी उघाडता रहता है
एक नंगा, तीखा, निर्मम प्रकाश-
जिसमें कोई प्रभा-मंडल नहीं बनते
केवल चौंधियाते हैं तथ्य, तथ्य-तथ्य-
सत्य नहीं, अंतहीन सच्चाइयाँ.....
कितनी बार मुझे
खिन्न, विकल, संत्रस्त
कितनी बार!

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।

इस कविता का मौन वचन कीजिए।

क) अध्येय कविता का सामान्य परिचय

1962 से 1966 के बीच अज्ञेय द्वारा लिखी गई रचनाएँ 'कितनी नावों में कितनी बार' शीर्षक संकलन में संकलित हैं। इसी शीर्षक से इस रचना में एक कविता भी संकलित है। इस संकलन के लिए उन्हें 1978 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। 'कितनी नावों में कितनी बार' में कवि की बाह्य यात्राओं का वर्णन मात्र न होकर कवि के अंतर्मन की यात्रा को दर्शाया गया है। कवि अपनी अनुभूतियों एवं भावों के डगमगाती नावों पर बैठकर अपने भीतर की आस्था एवं सत्य की खोज में निकलता है। कवि के अंदर की ज्योति कुहासे में अस्पष्ट दिखाई देने पर भी कुहासे की एक छोटी सी रुपहली झलमल में कवि उस प्रभामंडल को पहचान लेता है, जो अमिट सत्य है जब कि दूसरों के साथ की हुई यात्रा केवल तथ्यों तक ले चलता है सत्य तक नहीं।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय को किस कविता के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार मिला और कब?
- बाह्य यात्राओं का वर्णन अज्ञेय की किस कविता में है?

ख) व्याख्या भाग

कितनी दूरियों .....कितनी बार

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियों को प्रयोगवादी कविता के प्रवर्तक सत्य के अन्वेषक अज्ञेय की सत्यान्वेषक कविता कितनी नाव में कितनी बार से लिया गया है।

प्रसंग : कवि अज्ञेय यात्रा प्रिय थे। उन्हें कई बार विदेशों की यात्रा करने का अवसर प्राप्त हुआ है। इस दौरान प्राप्त अपने अनुभव के माध्यम से उन्होंने न केवल बाह्य बल्कि अपने अंतर्मन में यात्रा करने का भी प्रयास किया है। बाह्य यात्राएँ उन्हें तथ्य तक ही ले चलती हैं, जब कि आंतरिक यात्राएँ सत्य तक पहुँचाती हैं। सत्य की खोज और सत्य तक पहुँचना इस कविता की विशेषता है।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि कहते हैं कि उन्होंने सत्य को अनेक रूपों में देखने का प्रयास किया है। निरंतर की गई विदेशी यात्राओं के बाद अज्ञेय इस ठोस विचार को सहमती के साथ रखते हैं कि भारतीय परंपरा में सत्य का जो रूप उपलब्ध है वह अन्यत्र दुर्लभ है। उनका कहना है कि हे! मेरी छोटी सी प्रकाश किरण! मैं तुम्हें पाने के लिए न जाने कितनी दूर से कितनी बार डगमगाती नौकाओं में बैठकर तुम्हारी ओर लौट आया हूँ। अनेक बार ऐसा भी हुआ है कि यह नन्ही सी किरण मुझे धुंधलके में छिपी हुई अस्पष्ट सी लगी परंतु उस धुन्ध के ही चमकदार धुंधलके में मैंने तुम्हारा प्रकाश का वृत्त देखा है। अर्थात, कवि यह कहना चाहता है कि अपने अंतर्मन में जिस ज्योति को वे पूर्णतया न देख पाने पर भी उसकी धुंधली झलक एक ऐसा अनुभव प्रदान करता है, जिसे पुन: कहीं भी तलाश करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि वही सत्य है। कवि कहता है कि कई बार मैंने धैर्य रखकर, विश्वास और आस्था के साथ अनथ की दृष्टि

से इस अनबुझे सत्य को देखा है। उनका मानना है कि सत्य का प्रकाश भारतीय परंपराओं में अनिवार्य रूप से समाया है। प्रकाश का बिंब स्पष्ट न दिखे तो भी उसका हल्का सा प्रकाश वृत्त अवश्य ही दिख जाता है।

विशेष : कवि की आध्यात्मिक तथा रहस्यात्मक चेतना इस कविता में दर्शित होता है।

बोध प्रश्न

- अज्ञेय की सत्यान्वेषक कविता कौन सी है?
- बाह्य और आंतरिक यात्रा के औचित्य से क्या तात्पर्य है?

सत्य का चेहरा .....कितनी बार !

व्याख्या : प्रस्तुत पंक्तियों में कवि अज्ञेय मानते हैं कि पश्चिमी देशों में सच्चाई का जो रूप सामने आ रहा है वह अत्यंत भयानक और विकृत है। वे कहते हैं कि कितनी ही बार जगमगाते हुए जहाजों पर बैठकर बहुत दूर पराए देशों में गया हूँ जहां पर कठोर, निर्मम हवाओं के नंगे तीक्ष्ण प्रकाश के नंगे अंधेरों ने उन्हें और भी अधिक नंगा किया है। अर्थात, कहने का भाव है कि उन देशों में गंदगी और विकृतियां एकदम उघडी हुई है।

विदेशों में इतना चकाचौंध है कि उसके प्रकाश के तले जो सच्चाई है वह एकदम दब सी गई है और एक ऊपरी आवरण की आड में जो हो रहा है, वास्तव में वह अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार और व्यभिचार से संपृक्त है। वह प्रकाश इतना तेज है कि उससे कोई प्रकाश वृत्त या प्रभामंडल नहीं बन पाता अर्थात ऐसे प्रकाश में कुछ भी प्रिय नहीं लगता और न ही स्पष्ट दिखता है। ऐसे प्रकाश में चौंधियाने वाले नग्न तथ्य ही बार-बार दिखाई देते हैं जो बार-बार कवि को न केवल दुख पहुँचाते हैं बल्कि दुखी, बेचैन और भयभीत कर देते हैं। कवि कहते हैं कि इन विदेशी यात्राओं ने उन्हें इस बात का एहसास करवाया है कि विदेशों में सिर्फ़ प्रकाश है, सत्य रूपी प्रकाश तो सिर्फ भारत में विद्यमान है । उन देशों की तुलना में आज भी हम भारत में उस सत्य को महसूस कर सकते हैं क्योंकि वहाँ की सच्चाई इतनी कठोर, क्रूर और पीडादयक है कि उसे देख पाना मुश्किल है।

विशेष : कुछ विशिष्ट अर्थ प्रदान करने वाले विशेषणों का प्रयोग हुआ है जैसे पराए देश, बेदर्द हवाएँ, नंगे। अंधेरे, निर्मम प्रकाश जिनसे अर्थ में एक नयापन आ गया है। मुक्त छंद में रचित कविता है। अतुकांत शैली होने पर भी अर्थ लय से जुड़ती है। तत्सम शब्दावली का प्रयोग है।

बोध प्रश्न

- कवि पश्चिमी देशों की किस सच्चाई के कारण अपने आपको विकृत अनुभव करते है?
- कवि को दुःख पहुँचाने का काम कौन कर रहा है?

3.3.4 समीक्षात्मक अध्ययन

अज्ञेय की काव्य भाषा

अज्ञेय की काव्य भाषा के तीन प्रकार दिखाई देते हैं- पहला रूप संस्कृत की परिनिष्ठित रूप, दूसरा देशज शब्द तथा तीसरा व्यावहारिक बोलचाल की शब्दावली का प्रयोग। उदात्त विषय से संबंधित लेखन हेतु वे संस्कृत शब्दों का प्रयोग करते हैं। जब कवि सामाजिक जीवन की समस्याओं और मानव संबंधों की बात करता है तब विषयानुकूल बोलचाल की भाषा या संस्कृत के सरल रूप का प्रयोग करता है। कभी कभी सीधी सरल भाषा का प्रयोग हो तो कभी कभी व्यंजनागर्भित। उर्दू फारसी आदि शब्द भी अज्ञेय की रचनाओं में मिलता है जैसे इलाज, दिवान, जुदा, जोखिम, गुमान आदि। उर्दू मुहावरों का भी प्रयोग मिलता है जैसे- दामन पाक रखना, मुलम्मा छूट जाना आदि। अंग्रेजी शब्दों का कम प्रयोग किया गया है जैसे- रेल, पार्क, मोटर,पोर्च आदि।

इनके काव्य में विविध शैलियाँ जैसे छायावादी शैली, लाक्षणिक शैली, प्रयोगवादी सपाट शैली, व्यंग्यात्मक शैली, प्रतीकात्मक शैली, बिंबात्मक शैली आदि विद्यमान हैं । काव्य में नूतन बिंब प्रयोग, बिंब का साधन और साध्य रूप, प्राकृतिक बिंब, ऐंद्रिय बिंब आदि कई रूपों में कवि ने बिंबों का प्रयोग किया है। प्रतीक प्रयोग अद्‌भुत है । प्रकृति से संबंधित प्रतीक जैसे नदी, द्वीप, सागर, तट, भोर, आकाश, पगडंडी, इंद्रधनु, शिशिर आदि का कवि ने भरपूर प्रयोग किया है और एकदम नए अर्थ में। इंद्रधनु का प्रयोग कवि ने मनुष्य की आशाओं-आकांक्षाओं के रूप में तथा नाव का प्रयोग कवि ने पार लगाने वाले के बदले विभिन्न विचार-पद्धतियों के प्रतीक के रूप में किया है। धूलिकण एवं तिनका लघुता का तथा भोर आशा एवं उल्लास का प्रतीक है। बूंद क्षणभंगुरता का प्रतीक है। कुलमिलाकर कहा जा सकता है कि अज्ञेय ने जिन प्रतीकों का प्रयोग किया है वह एकदम अनोखा एवं नया एवं लीक से हटकर है।

अज्ञेय के काव्य का भावपक्ष :

मानवतावादी दृष्टिकोण एवं समाज बोध : अज्ञेय ने मानवतावादी विचारधारा को महत्व दिया है । सूक्ष्म कलात्मक बोध, व्यापक लेखन शैली, संकेतमय अभिव्यंजना आदि के माध्यम से कवि ने मानव के अनछुए पक्ष को छूने का प्रयास किया है। अज्ञेय की आत्मबोधपरक तथा रहस्यानुभूति से संपृक्त रचनाओं में कवि चेतना की व्यक्तिवादी परिणति देखी जा सकती है। अज्ञेय ने आरंभ से ही कवि के उत्तरदायित्व पर विचार किया है । कवि किसके प्रति उत्तरदायी हो, व्यक्ति के प्रति या समाज के प्रति? अज्ञेय का स्पष्ट मत है- " व्यक्ति का अपने प्रति भी उत्तरदायित्व मानता हूँ समाज के प्रति भी।" .....पर मैं अपने प्रति उत्तरदायित्व को प्राथमिक मानता हूँ और समाज के प्रति उत्तरदायित्व को उसीसे उत्पन्न। अपनी काव्य यात्रा में प्राय: सर्वत्र अज्ञेय मानवता और समाज के प्रति अपने कर्तव्य बोध को स्थान देते रहे हैं। मनुष्य की पीडा, व्यक्ति कर्तव्य, व्यक्तिवादी सौंदर्य चेतना, मानव में उनकी आस्था आदि उनकी रचना की विशेषताएँ हैं। उन्होंने समष्टि को महत्व देते हुए व्यक्ति की निजता या महता को अखंडित बनाए रखा। व्यक्ति के मन की गरिमा को इन्होंने फिर से स्थापित किया।

आत्मान्वेषण एवं रहस्यानुभूति : अज्ञेय ने संसार की सभी वस्तुओं को ईश्वर की देन माना है तथा प्रकृति की विराट सत्ता के प्रति अपना सर्वस्व अर्पित किया है। उनकी काव्य यात्रा

में आत्मान्वेषण और रहस्य चिंतन की प्रवृत्ति आरंभ से ही मिलती है। धीरे-धीरे यह प्रवृत्ति बढी है और "अरी ओ करुणा प्रभामय" तक आते-आते आत्मान्वेषी रूप में प्रमुख हो उठा है। जो अज्ञेय "हरी घास पर क्षण भर" की रचनाओं तक मुख्यत: प्रकृतिवादी यथार्थवादी दिखलाई देते थे, वे बाद में रहस्यवादी प्रतीत होने लगे, इस तथ्य को लेकर साहित्य जगत में भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएँ हुई हैं। कुछ की दृष्टि में अज्ञेय की संत परिणति आरोपित है। उनकी अंतर्मुखता एवं आत्मान्वेषण की चेष्टा स्वयं को जानने और जानकर अपने कर्तव्यों का निर्धारण करने के लिए है इसलिए पलायन प्रतीत होता हुआ भी वह पलायन नहीं है। उनकी अंतर्मुखता का लक्ष्य ब्रह्म-सुख की प्राप्ति नहीं बल्कि अस्ति की खोज है। अपने अस्तित्व को जाने बिना व्यक्ति किसी भी वस्तु कर्तव्य आदि के बारे में नि:संशय नहीं हो सकता। इसके संबंध में अज्ञेय लिखते हैं: "अस्ति पहले है, भवति बाद में। अगर अस्तित्व के बारे में नि:संशय नहीं हूँ; 'यानी अगर यह आस्था मुझमें नहीं है कि 'मै हूँ' और यह होना 'मैं' एक विविक्त, अद्वितीय, स्वतंत्र, आत्म-चेतन और आत्मानुशासित 'मैं' का होना है। एक केंद्रयुक्त सत्ता, 'होना' जिसकी परिधि है और केंद्र 'मैं' है- तो मैं किसी बात के संबंध में भी असंदिग्ध नहीं हो सकता तब मैं अस्ति का अन्वेषण अथवा 'मैं' हूँ की पहचान आवश्यक है और यह जीवन और जगत से पलायन का परिणाम नहीं बल्कि गहरे रूप में जीवन से दूर जुड़ जाने के लिए है। अज्ञेय का रहस्यवाद स्पष्ट रूप से ईश्वरोन्मुख रहस्यवाद नहीं है। स्वयं अज्ञेय ने एक कविता में अपने रहस्यवाद का स्पष्टीकरण इस रूप में दिया है :

मैं भी एक प्रवाह में हूँ-
लेकिन मेरा रहस्यवाद ईश्वर की ओर उन्मुख नहीं है ।

उनके काव्य में आत्मानुसंधान की दिशा में चलने का प्रथम संकेत आत्मविश्लेषण की प्रवृत्ति के रूप में मिलता है। आत्मविश्लेषण की प्रवृत्ति में कवि ने अपने भीतर झांकने की स्वाभाविक शक्ति का विकास किया है। उनकी आध्यात्मिक चेतना उनके "अपने से बडा कुछ' की पहचान तक पहुँची है। यद्यपि अज्ञेय ने ईश्वर, बुद्ध, राम आदि शब्दों का प्रयोग भी किया है, किंतु उनके अपने से बड़ा कुछ का संबंध निराकार सत्ता से प्रतीत होता है। यह शक्तिमान निराकार सत्ता ही प्रभुसत्ता है। उदाहरण के लिए-

कौन है, कहाँ है वह, कहाँ से आया है
जो ऐसे में मुझे रखता है
परिचित के घेरे में आलोक से विभोर?

अज्ञेय ने आत्मान्वेषण और रहस्यानुभव को सिद्ध करने के लिए प्रतीकों को माध्यम बनाया है। द्वारहीन द्वार, काँच के पीछे हाँफती मछली, चक्रांत शिला, असाध्य वीणा, महाशून्य का शिविर आदि ऐसे ही माध्यम हैं।

प्रकृति चित्रण : अज्ञेय की दृष्टि में "मानवेतर ही प्रकृति है"। प्रकृति वह है जिसमें मानव रहता है, जीता है, भोगता है, संस्कार ग्रहण करता है और उसकी अभिव्यक्ति करता है। हमारे इर्द-गिर्द की दुनिया को हम प्रकृति कहते हैं। कवि ने प्रकृति के सभी अवयव आकाश, बादल,

पगडंडी, घास, सुबह, धूप, सुनहली किरणें, सागर, मछली, साँप, आदि सभी को रचना की वस्तु बनाया है। प्रकृति में विद्यमान छोटे-से-छोटा और बड़े-से बड़ा सभी कविकर्म के अंश बने हैं। कवि ने प्रकृति का चित्रण कभी विषय के रूप में किया है तो कभी विषयी के रूप में। कहीं मानवीकृत है तो कहीं प्रतीक-समन्वित, कहीं वह विभाव के रूप में है तो कहीं मात्र परिवेश-चित्रण एवं उपदेश देने के माध्यम के रूप में। प्रकृति कभी आलंबन का रूप धारण करती है तो कभी उद्दीपन का रूप। प्रकृति का मानवीकरण भी मिलता है। कुलमिलाकर अज्ञेय की साहित्य-साधना को समझने के लिए गहरी पैठ की जरूरत है। यहाँ, प्रस्तुत पाठ्यसामग्री में दी गई वस्तु लेश मात्र है।

अज्ञेय की कविताओं में अभिव्यक्त प्रेमानुभूति

प्रिय छात्रो! प्रेम शब्द को सुनने या पढ़ने मात्र से हमारे मस्तिष्क में एक युवक और युवति के मध्य जो प्रेम होता है, उसी का चित्र घूम उठता है, लेकिन प्रेम शब्द अपने आप में बहुत ही गहन, विस्तृत और सत्यनिष्ठ होता है। प्रेम एक ऐसा भाव है जिसमें असत्य से परे होता है। प्रेम एक सहज, सामान्य, स्वाभाविक तथा सनातन प्रवृत्ति है जो प्रत्येक जीव में विद्यमान है। मानव-प्रेम में यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। व्यक्ति के रागात्मक संबंध ही व्यापक तौर पर प्रेम अथवा प्रेमानुभूति का जनक माना जाता है। अतः प्रेमानुभूति का क्षेत्र सीमित न होकर अत्यंत व्यापक है। अतः प्रेम को केवल वासना तक सीमित रखकर देखना सही नहीं है। क्योंकि भाई-भाई के बीच, माता-पिता-संतान के बीच, व्यक्ति-व्यक्ति के बीच जो रागात्मक संबंध हैं, सभी प्रेमानुभूति की कोटि में आते हैं। व्यष्टि से समष्टि तक इस रागात्मक संबंध की व्याप्ति है। अतः प्रेम अमर, अनंत, और ब्रह्मस्वरूप है। इसे वासना एवं काम की सीमा में न रखना ही उचित होगा। अज्ञेय ने प्रेम के इसी रूप को चित्रित किया है। उनकी रचनाओं में प्रेम की व्यापकता दिखाई देता है। मानव प्रेम से ऊपर उठते हुए समाज राष्ट्र तथा मानवीय प्रेम की दिव्य चमक को आप अज्ञेय की रचनाओं में महसूस कर सकते हैं। इसके साथ ही प्रकृति, आत्मा, काल आदि के प्रति भी कवि के मन में जो प्रेम की भावना विद्यमान थीं, उनकी रचनाओं में झलकती है।

अज्ञेय की रचनाओं को यदि ध्यान से देखें तो हम पाते हैं कि अन्य कवियों की भांति अज्ञेय भी प्रेम की अभिव्यक्ति में सीढी दर सीढी आगे बढते हुए दिखाई देते हैं। अर्थात स्त्री-पुरुष के बीच व्याप्त जो सामान्य प्रेम है उसीसे ऊपर उठते हुए धीरे-धीरे मानवीय प्रेम और उसमें निहित आध्यात्मिकता का दर्शन हमें मिलता है। उनकी प्रारंभिक रचनाओं में कवि ने प्रेम को जिस प्रकार से अभिव्यक्त किया है, वह बाद की रचनाओं में नहीं दिखाई देता है, क्योंकि उनकी बाद की रचनाओं में प्रेम का विकसित रूप पूरे आदर्श के साथ प्रस्तुत होता दिखाई देता है। विकास की दृष्टि से ऐसा मालूम पडता है कि अज्ञेय की प्रेम भावना आदर्श के ऊँचे शिखर से अपन उत्स ढूँढती हुई प्रवाहित होती है, जो बाद में यौन-चेतना से सिक्त होकर एक व्यापक रूप धारण करती है लेकिन अंत में अत्यंत गंभीर रूप धारण करते हुए आध्यात्म के समुद्र में हिलोरें लेती हैं।

कुलमिलाकर देखें तो हम पाते हैं कि अज्ञेय ने प्रेम को जीवन से कोई अलग नहीं माना है। प्रेम को उन्होंने व्यक्ति के अस्तित्व से जोडा है। उनके अनुसार प्रेम न अतीत है न भविष्य, प्रेम

सदा ही वर्तमान है। उनकी प्रेमानुभूति पर बौद्धदर्शन, पाश्चात्य विचारधारा, मनोविज्ञान आदि का प्रभाव हो सकता है।

अज्ञेय की रचना में परिवेश के प्रति जागरूकता

अज्ञेय के रचना संसार की एक विशेषता यह है कि वे अपने परिवेश के प्रति अत्यंत जागरूक है। उन्होंने यथार्थ को पहचाना और दैनिक जीवन के प्रसंगों को समझा। आधुनिक बोध के साथ यथार्थ की अभिव्यक्ति का प्रयास किया है। लोक संपृक्ति की यह भावना अज्ञेय के काव्य में अनेक स्तरों पर उद्घाटित हुई है। राष्ट्रीयता, जीवन के कटु-तिक्त प्रसंग, राजनीति में जमा होने वाले कूडे-करकट और यांत्रिक व कृत्रिम जिंदगी पर कवि ने गहरा व्यंग्य किया है। मानवता के प्रति अधिक जागरूक थे। वर्तमान युग की यांत्रिकता से त्रस्त होकर कवि कहता है कि यंत्र हमें दलते हैं/ और हम अपने को छलते हैं/ थोडा और खट लो/ थोडा और पिस लो। नगरीय परिवेश को जकडे हुए यांत्रिक जीवन शैली और मशीनी माहौल में सांस लेती जिंदगी के प्रति उन्हें सहानुभूति थी। विज्ञापन की चमक-धमक, धर्मांधता, शोषक वृत्ति, प्रजातंत्र के ढकोसले और उसके नाम पर ली जाने वाली गैर कानूनी सुविधा आदि पर उन्होंने करारा व्यंग्य किया है। जैसे-

यों सब आए मेला जुट गया
यही मैं नहीं जान पाया कि इस पंचमेल भीड में
वह एक समाज कहाँ छूट गया?
और जिसने पहचानना था देस का चेहरा
वह अईना कहाँ लिट गया।

अज्ञेय की अनेक कविताओं में भ्रष्टाचार, समाज की अकर्मण्यता, शोषण व्यवस्था, स्वार्थपरक जीवनशैली आदि पर कठोर व्यंग्य मिलता है। उनकी कविताओं में चित्रित परिवेश राजनीति और उससे संबंधित अनेक समस्याओं को भी मूर्तित करता है। आजादी के बिस बरस, दिया हुआ न पाया हुआ, अहं राष्ट्र संगमनी जनानाम, दास व्यापारी, जनपथ-राजपथ, हथौडा अभी रहने दो आदि इस प्रकार की कविताएँ हैं। आजादी मिलने के बावजूद आजादी का कोई मतलब नहीं रहा। ऐसी आजादी के बाद की विषम परिस्थिति के ऊपर प्रहार करते हुए कवि कहते हैं- आजादी के बीस बरस से / बीस बरस की आजादी से / तुम्हें कुछ नहीं मिला / मिली सिर्फ आजादी।

इस प्रकार अज्ञेय के काव्य में अपने आस पास के परिवेश के प्रति जागरूकता द्रष्टव्य होती है। केवल इतना ही नहीं ऐसे लोग और ऐसे गांव भी उनकी नजर में है जहाँ लोग छोटी-छोटी चीजों को पाने के लिए भी तरस जाते हैं।

3.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! अब तक आपने हिंदी साहित्याकाश में प्रयोगवाद के प्रवर्तक के रूप में विराजमान सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की दो चयनित कविताओं को पढ़ रहे थे। दोनों कविताओं को व्याख्या सहित पढकर तथा अज्ञेय के रचनाकर्म के बारे में विस्तार से पढकर आपने समझ लिया होगा कि अज्ञेय किस प्रकार के कवि हैं और उनका कविकर्म क्या है। ऊपरी तौर पर देखने से लगता है कि कवि अज्ञेय कुंठा, संत्रास, अतृप्त भावना आदि की मात्र अभिव्यक्ति अपनी रचनाओं में की है, लेकिन ऐसा नहीं है। अज्ञेय युगद्रष्टा कवि है जो हिंदी साहित्य जगत में अमर चितेरे हैं क्योंकि उन्होंने हिंदी साहित्य को आधुनिकता के साथ एक नए धरातल पर प्रस्तुत किया है। उनकी प्रत्येक रचना एक नूतन प्रयोग है, प्राय: इसीलिए उनका अनुकरण करते हुए कई साहित्यकार उनकी राह पर चलने लगे। तार सप्तक के चार प्रकाशन इसकी साक्षी है। अज्ञेय का रचना संसार क्रमशः: विकसित हुआ है चाहे भावना के स्तर पर हो या चाहे आध्यात्मिक स्तर पर। आत्मान्वेषण और आत्ममंथन उनकी अभिव्यक्ति के अभिन्न अंग हैं। कवि यह मानते हैं कि पहले हमें अपने आप को समझना चाहिए तभी ईश्वर की प्राप्ति संभव है। उन्होंने किसी निश्चित भक्ति का प्रतिपादन नहीं किया है बल्कि उनका अध्यात्म सत्य का अन्वेषण का मार्ग प्रशस्त करता है और सत्य के मार्ग पर चलते हुए कवि पहले अपने आप की पहचान करना अनिवार्य मानते हैं। भारत की प्राचीन परंपरा को नवीन उद्बोधन तथा नूतन संभावनाओं के साथ प्रस्तुत करना उनकी विशेषता है। भाषा और प्रयोग की दृष्टि से एक नयापन आगे आने वाले साहित्यकारों के लिए मार्गदर्शक के रूप में अज्ञेय को हम पहचान सकते हैं। उनकी प्रत्येक रचना अपने आप में मोती के समान है। व्यष्टि, समष्टि, समाज में व्याप्त पीडा, गाँवों की दशा, त्रस्त जनता, शहरी वेदना, के साथ-साथ राष्ट्र प्रेम, देश भक्ति की अलख जगाना आदि उनकी रचनाओं का मूल उत्स है। स्त्री-पुरुष संबंध, प्रेमाभिव्यक्ति, यौन तथा रागात्मक संबंध आदि सभी पक्षों पर लेखक ने अपनी लेखनी चलायी है।

3.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए है -

1. 'नदी के द्वीप' और 'कितनी नावों में कितनी बार' अज्ञेय की प्रतिभा के दो अलग पक्षों को व्यक्त करने वाली प्रतिनिधि कविताएँ हैं।
2. 'नदी के द्वीप' अस्तित्ववाद से अनुप्राणित रचना है।
3. अज्ञेय की दृष्टि में नदी और द्वीप का सम्बन्ध समाज और व्यक्ति का संबंध है।
4. अज्ञेय के अनुसार समाज का अंश होने के बावजूद व्यक्ति का निजी अस्तित्व उसी प्रकार महत्वपूर्ण है, जिस प्रकार नदी के प्रवाह के बीच आकर ग्रहण करने वाले द्वीप का अस्तित्व।
5. कितनी नावों में कितनी बार इस दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण रचना है कि इसमें सत्य की खोज के लिए आंतरिक यात्रा के महत्व को रेखांकित किया गया है।

3.6 शब्द संपदा

1. अंतर्दृष्टि = अंतर्मन की पहचान, ज्ञानचक्षु, अपने आप को पहचानना
2. अंतर्निहित = मन के अंदर समाहित, समायी हुई
3. अस्मिता = पहचान
4. आत्मान्वेषण = आत्मा का अन्वेषण, खुद को समझना, स्व-अनुभूति
5. कलेवर = शरीर, देह, आकार, ढाँचा
6. प्रवर्तक = किसी काम या बात का आरंभ या प्रचलन करने वाला
7. रागात्मक संबंध = प्रेम उत्पन्न करने वाला या बढाने वाला, प्रीतिवर्धक
8. रुझान = आसक्ति
9. व्यष्टि चेतना = व्यक्तिगत चेतना
10. सत्यान्वेषण = सत्य की खोज करना
11. समष्टि चेतना = समूहिक चेतना
12. समाविष्ट = जिसका समावेश हो चुका है, मिलाया हुआ

3.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नदी के द्वीप का सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
2. प्रयोगवाद की भूमिका को स्पष्ट करते हुए प्रवृत्तिगत विशेषताओं लिखिए।
3. प्रयोगवाद और नई कविता के सन्दर्भ में प्रसिद्ध विद्वानों के विचारो को प्रतिपादित कीजिए।
4. नदी के द्वीप में प्रयुक्त प्रतीकों को स्पष्ट करते हुए कविता का आशय बताइए।
5. कितनी नावों में कितनी बार का प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. कवि द्वीप बनकर रहना क्यों चाहते हैं?
2. क्या कवि नदी की धारा बनने की इच्छा रखते हैं? अपने विचारों को स्पष्ट कीजिए।
3. कितनी नावों में कितनी बार कविता में निहित संदेश को स्पष्ट कीजिए।
4. कितनी नाव में कितनी बार कविता में कवि क्या कहना चाहते हैं
5. कितनी नाव में कितनी बार कविता में व्यक्त कवि के आशय को स्पष्ट कीजिए?
6. ओ मेरी छोटी सी ज्योति- से क्या अभिप्राय है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. अज्ञेय की रचना कौन सी नहीं है? ( )
   क) कितनी नावों में कितनी बार ख) नदी के द्वीप
   ग) असाध्य वीणा घ) अँधेरे में

2. नदी द्वीप को किससे मिलाती है- ( )
   क) व्यक्ति से ख) भूखंड से
   ग) आत्मा से घ) समाज से

3. द्वीप धूल का कण बनने से क्या होगा? ( )
   क) सलिल गंदला होगा ख) पहाड गंदला होगा
   ग) हवा गंदला होगा घ) सभी

4. कितनी नावों में कितनी बार कविता में कवि ने ज्योति किसे कहा है- ( )
   क) सत्य ख) धर्म
   ग) दोनों घ) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. हरी घास पर क्षण भर का प्रकाशन वर्ष ..... है ।
2. अज्ञेय ..... के कवि है ।
3. अज्ञेय को ज्ञानपीठ पुरस्कार ..... कविता के लिए मिला था ।
4. अज्ञेय की कविता की भाषा ..... प्रधान है ।
5. फ्रायड के मनोविश्लेषण से..... प्रभावित हैं ।

III. सुमेल कीजिए -

1. अस्तित्ववादी विचारक	अ) नई कविता
2. प्रयोगवाद का संशोधित रूप	आ) अज्ञेय
3. वैयक्तिकता	इ) व्यष्टि चेतना काव्य रहा है
4. प्रयोगवाद	ई) प्रयोगवाद में यह चरम सीमा पर है
5. जनवादी दृष्टिकोण का विरोध	उ) प्रयोगवादी कविता

3.8 पठनीय पुस्तकें

1. अज्ञेय काव्य-स्तबक : सं. विद्यानिवास मिश्र, रमेशचंद्र शाह
2. अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या : रामस्वरूप चतुर्वेदी
3. अज्ञेय का काव्य-संसार - शब्द और सत्य : सं. अशोक वाजपेयी
4. अज्ञेय का रचना संसार : डॉ. गंगा प्रसाद विमल
5. प्रयोगवाद और नई कविता : डॉ. शंभुनाथ सिंह
6. अज्ञेय की कविता - परंपरा और प्रयोग : रमेश ऋषिकल्प

इकाई 4 : केदारनाथ अग्रवाल : एक परिचय

रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 मूल पाठ : केदारनाथ अग्रवाल : एक परिचय
4.3.1 केदारनाथ अग्रवाल : प्रारंभिक जीवन
4.3.2 केदारनाथ अग्रवाल की साहित्यिक यात्रा और रचनात्मक चिंतन
4.3.3 केदारनाथ अग्रवाल की काव्य-चेतना
4.4 पाठ सार
4.5 पाठ की उपलब्धियाँ
4.6 शब्दार्थ
4.7 परीक्षार्थ प्रश्न
4.8 पठनीय पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप केदारनाथ अग्रवाल के व्यक्तित्व और कृतित्व का परिचय प्राप्त करेंगे। केदारनाथ अग्रवाल सन् 1936 के बाद संगठित रूप से शुरू हुए प्रगतिशील परंपरा के आधुनिक कवियों के अंतर्गत अपना अलग स्थान रखते हैं। प्रस्तुत इकाई में न केवल हम उनके साहित्य को समझने का प्रयास करेंगे बल्कि काव्य की परिभाषा, उसकी आत्मा, उसकी विकास यात्रा को भी समझने का प्रयास करेंगे।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप -

- केदारनाथ अग्रवाल के जीवन और व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे
- उनके कृतित्व और रचना यात्रा से परिचित हो सकेंगे।
- उनकी काव्यगत विशेषताओं से अवगत हो सकेंगे ।
- उनकी काव्य भाषा के वैशिष्ठ्य को जान सकेंगे।
- उनके काव्य में निहित जीवन दर्शन को समझ सकेंगे।

4.3 मूल पाठ : केदारनाथ अग्रवाल : एक परिचय

4.3.1 केदारनाथ अग्रवाल : प्रारंभिक जीवन

केदारनाथ अग्रवाल का जन्म 1 अप्रैल, 1911 में उत्तर प्रदेश के बांदा जनपद के कमासिन गाव में हनुमान प्रसाद गुप्ता और घसीटो देवी के घर में हुआ था। वैसे हाई स्कूल के प्रमाणपत्र में

उनकी जन्म तिथि 6 जुलाई, 1910 लिखा गया। गलत तारीख लिखाने के दो कारण बताएँ गए - पहला, पहली अप्रैल को मूर्खों का दिन माना जाता है और दूसरा, जब केदार जी को स्कूल में भर्ती कराया गया उस समय उनकी आयु कम थी। एक अंधविश्वास के तहत उनकी माँ को दीर्घजीवी होने के लिए घसीटा गया था जिस कारण से उनका नाम घसीटो देवी पर गया। केदार जी को भी दीर्घजीवी बनाने के लिए उनके कान का एक हिस्सा काट दिया गया था। इस प्रकार से बचपन से ही उन्होंने अंधविश्वासों को बहुत पास से देखा था इस कारण से शायद उनकी कवि चेतना छोटी उम्र में ही जागृत हो चुकी थी। केदार जी के पिता स्वयं कवि थे और उनका एक काव्य संकलन 'मधुरिम' के नाम से प्रकाशित भी हुआ था। केदार जी के पिता श्री हनुमान प्रसाद 'मान' नाम से ब्रज भाषा में कविताएँ लिखा करते थे। इस तरह से देखा जाए तो, केदार जी में कवि बनने का गुण जन्मजात ही रहा। केदार जी का आरंभिक जीवन, कमासिन गाँव में ही बीता और शिक्षा - दीक्षा भी वहीं से शुरू हुई। असल में, केदार जी के पूर्वज इलाहाबाद के शहजादपुर गाँव के निवासी थे। इनके बाबा महादेव प्रसाद अपने ससुर लाला प्रभुदास के घरजमाई हो गए और कमासिन जाकर रहने लगे। इस प्रकार कमासिन से केदार जी का संबंध जुड़ा। इसके बाद चाचा मुकुंदलाल अग्रवाल के संरक्षण में उन्होंने शिक्षा पाई। रायबरेली, कटनी, जबलपुर, इलाहाबाद, इन स्थानों में रहते हुए उन्होंने अपनी शिक्षा पूरी की। जब वे जबलपुर में सातवीं कक्षा की पढ़ाई कर रहे थे तभी उनका विवाह इलाहबाद की रहनेवाली पार्वती देवी के साथ हो गया था। इनके तीन संताने थीं, दो पुत्रियाँ और एक पुत्र। इलाहाबाद में रहते हुए उन्होंने बी.ए. की उपाधि प्राप्त की और उसके बाद कानपुर में रहते हुए कानून की शिक्षा पूरी की। इसके बाद बांदा पहुँचकर वहाँ वकालत भी करने लगे थे। वकील बनने के बाद उन्होंने केवल पैसा कमाने के स्थान पर गरीब और पीड़ित वर्ग के लोगों को न्याय दिलवाने का कार्य उन्होंने जितना अधिक हो सका उतना किया। इतना होने के बाद भी वकालत के लिए जिस कौशल की जरूरत होती है वह कौशल कवि-हृदय केदारनाथ जी के पास नहीं था। इस लिए इन्हें वकालत में अधिक सफलता नहीं मिली। इनकी ईमानदारी और निष्ठा के कारण इन्हें सन् 1973 में सरकारी वकील बना दिया गया। वकील के रूप में सर्वहारा वर्ग की सेवा करते हुए उन्हें प्रगतिशील विचारधारा और मार्क्सवाद को समझने का सुअवसर प्राप्त हुआ। यह उनके जीवन का आत्ममंथन का दौर था, जिसने आगे चलकर उन्हें एक समर्पित वकील के साथ-साथ अनूठा कवि बनने का अवसर भी प्रदान किया। केदारनाथ अग्रवाल के जीवन अनुभव को तीन भागों में बाँटा जा सकता - 1) बचपन से बी.ए. तक 2) वकालत की डिग्री से सेवा निवृत्ति तक 3) सेवा निवृत्ति से मृत्यु तक। केदारनाथ अग्रवाल जी की मृत्यु सन् 2000 में हुई।

बोध प्रश्न

- कवि एवं वकील के रूप में केदारनाथ अग्रवाल किस विचारधारा से प्रभावित थे?

4.3.2 केदारनाथ अग्रवाल की साहित्यिक यात्रा और रचनात्मक चिंतन

केदारनाथ अग्रवाल जिनका जन्म उत्तर प्रदेश के एक छोटे से गाँव में हुआ था उन्हें कविता रचने की प्रेरणा घर में अपने पिता से ही प्राप्त हुई जो स्वयं भी कवि थे इसके अलावा

ग्रामीण जीवन को बहुत पास से देखने के कारण प्रकृति के सौन्दर्य से प्रभावित होकर काव्य रचना करने की इच्छा उनमें बचपन से ही थी। सन् 1927 में 8 वीं कक्षा उत्तीर्ण करके जब वे इलाहाबाद आए उस समय उनका संपर्क बच्चन, अज्ञेय, नरेंद्र शर्मा आदि से हुआ। इंटर में पढ़ते हुए हिन्दू हॉस्टल में उनका परिचय पंत जी के साथ हुआ। इलाहाबाद उस समय साहित्यिक गतिविधियों का केंद्र था। केदार जी अब धीरे-धीरे कवि सम्मेलनों में भी आने-जाने लगे थे। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन करने के दौरान उन्होंने कविताएँ लिखना शुरू कर दिया। इस प्रकार से इलाहाबाद के साथ साहित्यकार के रूप में उनका गहरा संबंध बन गया। प्रयाग के साहित्यिक परिवेश से उनका संबंध कितना गहरा था इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि उनकी सभी मुख्य कृतियाँ इलाहाबाद के 'परिमल प्रकाशन' से ही प्रकाशित हुई। 'परिमल प्रकाशन' के प्रकाशक शिव कुमार सहाय उन्हें पिता तुल्य मानते थे और 'बाबूजी' कहते थे। लेखक और प्रकाशक में ऐसा गहरा संबंध बहुत कम देखने को मिलता है।

केदारनाथ अग्रवाल ऐसे हिन्दी क्षेत्र के कवि थे, जहाँ आधुनिकता कम पहुँची थी, वामपंथी आंदोलन अनुपस्थित था, कृषक अत्याचारों से पीड़ित थे और रेत के सीने में पहले की तरह केन नदी बह रही थी। वे दूसरे कवियों की तरह घुमक्कड़ नहीं थे, किसी क्रांतिकारी संघर्ष में भी शामिल नहीं थे लेकिन वे हर एक विषय की जानकारी रखते थे। वे किसी भी विषय का गहन अध्ययन करते थे। इस अध्ययन का असर उनकी कविताओं में भी देखने को मिलता है। केदारनाथ अग्रवाल करीबन सन् 1931 के पहले से ही लिख रहे थे। आरंभिक दौर में उनमें सामान्य किस्म के रोमानी भाव थे। उनकी कविता में जान तब आई जब वे प्रगतिशील आंदोलन के संपर्क में आए और मार्क्सवादी हो गए। हंस, नया साहित्य और अन्य प्रगतिवादी पत्रिकाओं में केदार जी की रचनाएँ लगातार प्रकाशित होती रही। रूसी, जर्मन, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं में अनूदित इनकी रचनाएँ विश्व सम्मान की अधिकारिणी हुई हैं। केदार जी ने अपने जीवनकाल में अनेक रचनाओं को रचा। फूल बोलते नहीं, रंग बोलते नहीं, नींद के बादल, आग का आईना, आत्मगन्ध, अपूर्वा, अनहारी, कहे केदार खरी खरी, पंख और पतवार, युग की गंगा, हे मेरी तुम आदि उनके द्वारा रचित प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। केन नदी के किनारे घूमना, केन नदी को घंटों एकांत में बैठकर देखना और उसकी कल-कल ध्वनि को सुनना और उसमें खो जाना उन्हें बेहद प्रिय था। इस कारण से केदार जी को 'केन नदी का कवि' कहा जाता है। इन्होंने मानव और प्रकृति के सहज सौन्दर्य को कविता के माध्यम से अंकित किया है।

केदारनाथ अग्रवाल मार्क्सवाद से बहुत अधिक प्रभावित रहे। यद्यपि उनकी आरंभिक रचनाओं में छायावाद का प्रभाव दिखाई पड़ता है, लेकिन धीरे-धीरे उन्होंने अपनी कविताओं में सामान्य जन की पीड़ा और संघर्ष के चित्र को स्थान देना प्रारंभ कर दिया। प्रगतिशीलता का एक प्रमुख लक्षण है श्रमजीवियों के व्यापक जीवन से प्रतिबद्धता तो दूसरा लक्षण है अन्वेषण और परिवर्तन के लिए दिमागी खुलापन। यह तो सबको पता है कि प्रगतिशीलता के दायरे को हमेशा छोटा करने का प्रयास किया गया। केदारनाथ अग्रवाल नामक कवि का जन्म ही हुआ --- प्रगतिशील आंदोलन के कारण से लेकिन उनकी कविता और जीवन के बीच में अधिक दूरी न

थी। उन्होंने मौन ढंग से प्रगतिशील आंदोलन के लिए जितना काम किया उतना बड़े संगठनकर्ता भी नहीं कर सके। यह भी सच है कि उन्हें विभिन्न कारणों से तथाकथित शुद्ध साहित्यकारों तथा राजनीतिज्ञों के कठोर रुख का भी सामना करना पड़ा। एक बार उन्होंने अपनी कविताओं की चर्चा करते हुए कहा भी था कि, 'इन कविताओं का स्वर और स्वभाव ऐसा है कि प्रचलित मान्यता के बल पर इन्हें प्रगतिशील रचना का सौभाग्य न प्राप्त हो। लोग तो प्रगतिशील कविता में राजनीति की चर्चा मात्र चाहते हैं। वे कविताएँ जो प्रेम से, प्रकृति से, आसपास के आदमियों से, लोकजीवन से, सुंदर दृश्यों से, भू-चित्रों से, यथावत चल रहे व्यवहारों से और इसी तरह की अनेक रूपताओं से विरचित होती हैं, प्रगतिशील नहीं मानी जातीं। मेरी प्रगतिशीलता में इन तथाकथित वर्जित विषयों का बहिष्कार नहीं है'। स्वतंत्रता से पहले केदारनाथ अग्रवाल ने प्रगतिशील तेवर की जो कविताएँ लिखी, वे 'युग की गंगा' नामक काव्य संकलन में संकलित है। उनकी इस पहली कविता संग्रह में उनके युगबोध के कई आयाम हैं। इस कविता संग्रह की कई कविताओं के केंद्र में किसान है,

'काटो काटो काटो करबी
मारो मारो मारो हँसिया
हिंसा और अहिंसा क्या है
जीवन से बढ़ हिंसा क्या है'।

यह श्रम के सौन्दर्य का गुण है, जो स्वतंत्रता के भोर के साथ आया। केदार जी को बिंब प्रयोग से कोई असुविधा नहीं थी। वह लोकजीवन की संवेदना से भरा हृदय लेकर बड़े जीवन-स्पर्शी बिंब रचते रहें। उनसे पहले निराला और पंत छायावाद से बाहर आकर अपने-अपने तरीके से पूंजीपति-जमीनदार गठजोड़ पर प्रहार कर चुके थे। 'तार सप्तक' के कवियों ने भी श्रमजीवी जनता का जागरण दिखाया था। केदारनाथ अग्रवाल ने अपनी मौलिक काव्य रचना की शैली में लिखा -

'जब बाप मर तब यह पाया, भूखे किसान के बेटे ने
घर का मलवा, टूटी खटिया, कुछ हाथ भूमि
वह भी परती। चमरौधे जूते का तल्ला
चोटी, टूटी बुढ़िया औगी...
वह क्या जाने आजादी क्या? आजाद देश की बातें क्या'?

होना तो यह चाहिए था कि स्वतंत्रता के बाद भारत की किसी भी जनता को किसी कष्ट का सामना न करना पड़ता पर हुआ इसका विपरीत स्वतंत्रता के बाद भी जन जीवन की दुर्दशा बढ़ती चली गई। केदारनाथ अग्रवाल पूँजीपतियों और गरीबों को आमने-सामने लाकर दोनों की नियति और प्रकृति को उद्घाटित करने का प्रयास लगातार करते रहें। उदाहरण के लिए निम्न पंक्तियों को हम देख सकते हैं-

'कमकर
रोकर-हाथ जोड़कर,

दया-भीख से
नहीं कमाते अपनी रोटी।
मेहनत करते हैं,
पत्थर लोहे से लड़ते हैं,
लड़ते-लड़ते घिस जाते हैं
घिसते-घिसते मिट जाते हैं।
तब रोटी अपनी चिथड़ा
अपना दरबा।
उनके शोषक पूँजीपति हैं
जो उनकी मेहनत की पूँजी
अपने बैंकों में धरते हैं
जो अपने पौरूष प्रतिभा को
जल्दी-जल्दी चर जाते हैं,
मोटे होकर उतराते हैं,
और उन्हें मुरदा करते हैं'!

यह प्रगतिशील आंदोलन का ही प्रभाव था कि अब कल्पना गिनी-चुनी चीजों या एक बनी बनाई साँचे में ही चक्कर नहीं लगा रही थी। वह जीवन की ऊबड़-खाबड़, यातनादायक और उल्लासपूर्ण अनुभवों के बीच, अनगिनत अनुभवों के बीच जाती है। केदारनाथ अग्रवाल की कविता में विचारधारा कल्पना पर सवारी न करके उसमें अदृश्य गरमाहट की तरह घुल जाती है। वह पारदर्शी होती है और कल्पना के लिए एक भरपूर स्पेस छोड़ती है-

'केन किनारे/पल्थी मारे/पत्थर बैठा गुमसुम!
सूरज पत्थर/सेंक रहा है गुमसुम!
सांप हवा में/झूम रहा है गुमसुम!
पानी पत्थर/चाट रहा है गुमसुम!
सहमा राही/ताक रहा है गुमसुम'!

पानी कभी चट्टानों के ऊपर चढ़कर घूंसे मारता है और कभी सब कुछ गुमसुम है। इससे प्रगतिशील और वामपंथी आंदोलन के उतार-चढ़ाव के साथ कवि की मनोदशा के अनेक रूपों का बोध होता है। प्रस्तुत कविता में एक सौन्दर्य है, एक व्यंजना है, एक राही की पीड़ा है - वह राही स्वयं कवि है।

केदारनाथ अग्रवाल मानते रहें कि जिन लोगों को रोजी रोटी जुटाने में ही अपनी सारी जीवन शक्ति का अपव्यय कर देना पड़ता है उनके व्यक्तित्व का विकास समुचित ढंग से नहीं हो पाता है। वे समाज के निर्माण और सृजन में अपनी समुचित भूमिका का निर्वाह नहीं कर पाते हैं। सम्पूर्ण विश्व की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था को वे मार्क्सवादी विचार से देखने-परखने की चेष्टा करते हैं। केदारनाथ केवल शोषण तंत्र पर ही प्रहार नहीं करते बल्कि

आजादी की असलियत को भी प्रत्यक्ष रखते हैं। देश को स्वतंत्रता भले ही मिल गया हो लेकिन सामान्य जनता स्वतंत्रता का लाभ आज भी नहीं उठा सकी। भारत के मध्यवर्गीय लोग जब आधुनिकता की अंधेरी गलियों में निराश चक्कर लगा रहे थे, केदारनाथ अग्रवाल ने उस समय श्रमजीवियों के साथ चलते- चलते प्रकृति के साथ भी बंधुत्व का संबंध बनाया। आधुनिक जीवन से प्रकृति भले ही बिछुड़ती जा रही हो, केदार ने केन नदी और उसके चारों तरफ की रेत से नाता जोड़ रखा था। अज्ञेय की कविता में जो हरी घास है, वही केदार की कविता में रेत है। मनुष्य का जीवन भी विविधताओं से भरा हुआ है, जो कवि इन विविधताओं को अपना लेता है वह न तो राष्ट्रीय स्तर पर और न ही सांस्कृतिक स्तर पर संकीर्ण मानसिकता को अपना पाता है। इसी कारण से केदारनाथ अग्रवाल जी राजनीतिक क्षेत्र में फैली हुई आतंकवादी गतिविधियों का यथार्थ चित्र प्रस्तुत कर सके। केदारनाथ जी ने राजनीतिक आतंकवाद की ओर इशारा करते हुए लिखा है-

'रक्त से रंजित हुई है देह,
कलुषित और कलंकित हुई है, प्रांतीय व्यवस्था !
निराकार और नपुंसक हुई सरकार!!
छुट्टा घूमते-फिरते हैं, जान लेवा जानवर
प्राणहर आदमियों के वेश में निर्द्वंद्व!
निष्क्रिय है
लाचार और बेदम प्रतिकार
समाप्त नहीं हो रहा है नरमेध-यज्ञ'।

केदारनाथ अग्रवाल जी की कविताओं में उनकी पत्नी को भी स्थान मिला है। उनकी पत्नी उनके लिए प्रेयसी भी है। वे लिखते हैं -

'गया व्याह मैं युवती लाने
प्रेम व्याह कर संग में लाया'।

उन्होंने पत्नी की याद में अनेक कविताओं की रचना की जिनमें से 'हे मेरी तुम' और 'जमुन जल तुम' कविता संग्रह विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यह आज के माहौल में थोड़ी चौंकानेवाली हो सकती है। गृहस्थी के भीतर प्रेम की बहुरंगी लीला विवाहित स्त्री की गरिमा को सुसज्जित करता है, यह करोड़ों लोगों की वास्तविकता है। कवि की कविता में यह वास्तविकता निम्न रूपों में दर्शित हुई है-

'रेत मैं हूँ-जमुन जल तुम,
मुझे तुमने हृदय तल में ढक दिया'।

केदारनाथ अग्रवाल के पत्नी के प्रति दृष्टिकोण की यह सीमा समझनी चाहिए कि पत्नी घर संभालनेवाली स्त्री का बिंब लेकर आती है,

'हे मेरी तुम
कल कमीज में बटन नहीं थे

कुरता देखा तो आगे से फटा हुआ था
धोती में कुछ दाग पड़े थे
वह था मैला...
हाय राम मेरी आफत थी
अब बोलो तुम कब आओगी
घर संवारने'।

केदारनाथ अग्रवाल एक सेंटिमेंटल कवि हैं - प्रकृति क्रांति और पत्नी तीनों मामलों में। प्रगतिशील कवि सेंटिमेंटल हो इसे गलत ही माना जाता रहा लेकिन यहाँ पर इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि केदार पत्नी से प्रेम करते हुए कभी सीमित नहीं हुए। उन्होंने प्रकृति को 'दूसरी स्त्री' की जगह पर रखते हुए पर्यावरण की चिंता करते दिखाई पड़े, बुढ़ापे के कष्टदायक जीवन का प्रश्न उठाते दिखाई पड़े और इस प्रकार से उनका पत्नी से प्रेम देश प्रेम तक बढ़ते रहा। केदार जी की कविता में उनकी निजी अनुभूतियाँ हैं उनकी खुशियां हैं, चिंतायें हैं और आवेग से भरी जनोन्मुखी कल्पनाएँ हैं। तभी उनकी प्रगतिशील तेवर की कविता में भी सौन्दर्य के पंख हैं। उनके घर में जब किसी बच्चे का जन्म हुआ, उन्होंने एक विशिष्ट ही अंदाज में इसका चित्र खींचा और अपने आनंद को श्रमजीवियों के संघर्ष के साथ जोड़ा। निम्न पंक्तियाँ इसी बात का उदाहरण है -

'एक हथौड़ेवाला घर में और हुआ
हाथी-सा बलवान
जहाजी हाथोंवाला और हुआ
सूरज-सा इन्सान
तरेरी आंखोंवाला और हुआ'।

श्रम जीवियों के जीवन का सारा आनंद उनके परिवार में छिपा होता है और उनका जीवन संघर्ष भी परिवार के लिए होता है। केदारनाथ अग्रवाल की निम्न पंक्तियाँ उन श्रमजीवियों को आत्मबल प्रदान करता है -

'मैं छापाछप छापते छल से लड़ा हूँ
क्योंकि मैं सत् से सधा हूँ
जी रहा हूँ
टूटनेवाला नहीं कच्चा घड़ा हूँ'।

1950-70 के दशकों में बड़ी-बड़ी हड़तालें हुई थी, जुलूस निकले थे और गोलियां चली थी, देखा जाए तो केदारनाथ अग्रवाल उस विपत्ति की घड़ी में भी केवल श्रम के सूरज का अभिनंदन नहीं कर रहे थे। वे प्रेम, प्रकृति सौन्दर्य को कविता जोड़ रहे थे क्योंकि वे संवेदना के स्तर पर रूढ़ियों से मुक्ति के औजार थे। केदारनाथ अग्रवाल के कविता में मानवीय आवेग हैं। मानवीय आवेग सार्वभौम नहीं ऐतिहासिक होते हैं। केदारनाथ अग्रवाल का मानना था कवित्व द्वन्द्व से ही निखरता हैं। उनकी मान्यता है की, 'जीवन जीना भी एक उदात्त कला है जो यह कला

नहीं सीखता, जीवन नहीं जीता, जीवन से छीजता चला जाता है और अंत में अपने में ही विलीन होकर सबके लिए खो जाता है। द्वन्द्व में ही पड़ा आदमी निखरता है और निखार से ही संसार का निर्माण करता है'। ये समय की हलचलों के साथ उठते बनते हैं। केदारनाथ की सहानुभूति दुनिया की उन तमाम राष्ट्रों का प्रति रहीं जो साम्राज्यवादी शक्ति के विरुद्ध संघर्षशील रहा। अमेरिकी साम्राज्यवाद का मुकाबला करनेवाले वियतनाम पर केदार ने कविताएँ लिखी 'कहे केदार खरी-खरी' में उन्होंने डॉलर के खतरे के प्रति भी भारतीय राजनेताओं को आगाह किया। केदारनाथ अग्रवाल जी ने बार-बार कविता को एक ऐसी जीवनशक्ति के रूप में देखा जो बाहर चाहे ज्यादा रूपांतरण न लाती हो, पर भीतर रूपांतरण अवश्य लाती है। यह भीतर की ताकत ही ऐसी ताकत है जो सम्पूर्ण विश्व को बदल सकता है। इसी विषय में केदारनाथ अग्रवाल लिखतें हैं, 'कविता जहाँ पहुँचे, वहाँ दृष्टि का दीपदान दे - आलोक और आंच से अवसाद, अंधकार, अज्ञान का नाश करे और सच्चे समर्थ मित्र और बंधु अथवा सहकर्मी की तरह पग-पग पर साथ दे।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि केदारनाथ अग्रवाल ने मार्क्सवाद को मुकुट बनाने की जगह अपनी विचारधारा बनाई थी। वह ऐसे युग के कवि थे, जब कम्युनिस्ट होना जोखिम की बात थी। यह एक अलग जीवनदृष्टि चुनना ही नहीं था, एक अलग जीवनशैली चुनना भी था। केदारनाथ अग्रवाल जी ने सभी चुनौतियों को स्वीकार किया और प्रगतिवादी कविता को नई ऊँचाई पर ले गए।

बोध प्रश्न

- पत्नी को याद करके केदारनाथ अग्रवाल जी ने किन कविता संकलनों की रचना की?
- केदारनाथ अग्रवाल जी को किस उपनाम से जाना जाता है?
- मार्क्सवाद को केदारनाथ अग्रवाल जी ने किस प्रकार से अपनाया था?
- 'कहे केदार खरी-खरी' कविता का मूल विषय क्या है?

4.3.3 केदारनाथ अग्रवाल की काव्य-चेतना

हिन्दी में प्रगतिवादी कवियों में केदारनाथ अग्रवाल का प्रमुख स्थान है। उनके प्रमुख काव्य संग्रह हैं - नींद के बादल, युग की गंगा, लोक और आलोक, फूल नहीं रंग बोलते हैं तथा आग का आईना। आइए अब हम केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में व्याप्त चेतना के संसार का अध्ययन नीचे करेंगे -

प्राकृतिक चेतना

केदारनाथ अग्रवाल भले ही प्रगतिवादी कवि रहे हों, लेकिन जीवंत प्रकृति चित्रण के लिए वे प्रसिद्ध रहें हैं। जनवादी कवि होने के कारण उन्होंने ग्रामीण प्रकृति के चित्र को अपनी कविताओं में एकाधिक बार स्थान प्रदान किया है। उनकी कविताओं में पेड़-पौधे, नदियाँ, पहाड़, फसल सब कुछ दिखाई पड़ते हैं। कवि केदारनाथ की प्राकृतिक कविताओं पर बुन्देलखंड की धरती का प्रभाव साफ दिखाई पड़ता हैं। 'केन' नदी का सौन्दर्य उनकी कविताओं को और अधिक

सजीव बनाता है। केदारनाथ अग्रवाल 'केन' नदी को लेकर कितने संवेदनशील थे इसे निम्न पंक्तियों के द्वारा समझ जा सकता है –

सको नहीं जगाया
दबे पांव घर वापस आया'।

कवि केदारनाथ अग्रवाल जी की कविताओं में प्रकृति का मानवीकरण रूप भी देखते ही बनता है। निम्न पंक्तियों में 'केन' नदी पर मुग्ध कवि ने उसका चित्रण एक चंचल युवती के रूप में किया है -

'नदी एक नौजवान ढीठ लड़की है
जो पहाड़ से मैदान में आई है
जिसकी जांघ खुली और हंसों से भरी है
पेड़ है कि इसके पास ही रहते हैं
जैसे बड़े मस्त नौजवान लड़के हैं'।

चूँकि, वे प्रगतिवादी कवि थे तो श्रमजीवी का कष्ट दिखाना उनका कर्तव्य बनता था। यह केदारनाथ अग्रवाल की अपनी मौलिक विशेषता है कि उन्होंने श्रमजीवी के कष्ट को, उसकी अभिव्यक्ति को भी प्रकृति के साथ जोड़ दिया। निम्न पंक्तियाँ इसी बात का जीवंत उदाहरण है-

'घन गरजे जन गरजे
बन्दी सागर को लख कातर
एक रोष से घन गरजे।
क्षत विक्षत लख हिमगिरि अंतर
एक घोष से, घन गरजे'।।

केदारनाथ अग्रवाल ने प्रकृति को केवल विषय बनाने के लिए अपनी कविताओं में स्थान नहीं दिया। समझनेवाली बात यह है कि उन्होंने प्रकृति के मस्ती, आनंद को अपने काव्य का विषय बनाया और ऐसा करते हुए उन्होंने निराशा के बीच आशा का संचार किया है। 'वसंती हवा' कविता में कवि ने हवा का मानवीकरण करते हुए उसे मस्त मौला मुसाफिर का रूप प्रदान करते हुए लिखा है -

'हवा हूँ हवा मैं वसंती हवा हूँ
बड़ी मस्त मौला नहीं कुछ फिक्र है
बड़ी ही निडर हूँ, जिधर चाहती हूँ
उधर घूमती हूँ मुसाफिर अजब हूँ'।।

इस प्रकृति चित्रण में छायावादी भावुकता, रोमानियत एवं कल्पनाशीलता का नितांत अभाव है। यह तथ्यपरक है तथा यथार्थ से सम्बद्ध है और उसमें जीवन के अनुभव साफ दिखाई देते हैं। कवि का प्रगतिवादी दृष्टिकोण भी उनकी प्रकृतिपरक रचनाओं में अभिव्यक्त हुआ है।

प्रगतिवादी चेतना

केदारनाथ अग्रवाल जी ने शोषण का विरोध खुलकर किया। किसानों की दयनीय दशा के लिए उन्होंने बेझिझक पूँजीपतियों, मिल मालिकों, सूदखोरों, राजनीतिक नेताओं को उत्तरदायी ठहराया। केदारनाथ अग्रवाल जी ने जनवादी कवियों को 'जीवन का भाष्यकार' कहा। जो अपनी कविता से लोकमंगल का विधान करता है। प्रगतिवादी कवियों को जागृत करने के लिए अग्रवाल जी ने लिखा -

'हम लेखक हैं
कथाकार हैं
हम जीवन के भाष्यकार हैं
हम कवि हैं जनवादी'।

प्रणय चेतना

केदारनाथ अग्रवाल जी की कविताओं में प्रणय संवेदना का भी चित्र मिलते हैं। 'जमुन जल तुम' शीर्षक कविता में वे पत्नी को नदी के समतुल्य मानते हैं। संसार की तकलीफ में भी पत्नी की मंगलकामना करते हुए केदार जी लिखते हैं -

'नदी हो तुम
गुनगुनाते प्यार की
मैं बड़ी तकलीफ में हूँ
संसार की
मैं तुम्हें बाँधे हुए हूँ
बाँह में
तुम जिओ नयन की
छाँह में'।

मानवीय चेतना

केदारनाथ अग्रवाल जी की काव्य यात्रा में मूल रूप से मानव मुक्ति के मार्ग को तलाशने परिणाम है। पीड़ा और बेचैनी के बाद भी मनुष्य के नव निर्माण के प्रति वे आश्वस्त हैं। मानव को ऊर्जावान बनाने के लिए उन्होंने नए-नए लोक उपमानों का सहज तथा अर्थपूर्ण प्रयोग किया है -

'हम जियें न जियें दोस्त
तुम जियो एक नौजवान की तरह
खेत में झूम रहे धन की तरह
मौत को मार रहे बान की तरह'।

उपर्युक्त पंक्तियाँ केदारनाथ अग्रवाल की मानवीय चेतना को दर्शानेवाली उत्कृष्ट पंक्तियाँ हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति हुए कई साल यूँ ही बीत गए आज भी भारत की अधिकांश जनता गरीबी रेखा के नीचे है। केदार ने उन सबके बारे में अपनी कविता में आग भरकर सोचा। केवल दो पंक्तियाँ उन्होंने लिखी -

'उड़ जाता है वेतन
जैसे गंध कपूर'।

तो इस प्रकार से हम यह पाते हैं कि केदार जी की कविताओं में चेतना हमेशा बनी रही और उन्होंने सभी प्रकार के विषयों को अपनी कविताओं में स्थान प्रदान किया है।

बोध प्रश्न

- केदारनाथ अग्रवाल ने प्रकृति को किस प्रकार से प्रस्तुत किया?
- केदारनाथ अग्रवाल की मानवीय चेतना पर प्रकाश डालिए।

4.4 पाठ सार

केदारनाथ अग्रवाल का जन्म 1 अप्रैल, 1911 में उत्तर प्रदेश के बांदा जनपद के कमासिन गाव में हनुमान प्रसाद गुप्ता और घसीटो देवी के घर में हुआ था। वैसे हाई स्कूल के प्रमाणपत्र में उनकी जन्म तिथि 6 जुलाई, 1910 लिखा गया। गलत तारीख लिखाने के दो कारण बताएँ गए - पहला, पहली अप्रैल को मूर्खों का दिन माना जाता है और दूसरा, जब केदार जी को स्कूल में भर्ती कराया गया उस समय उनकी आयु कम थी। एक अंधविश्वास के तहत उनकी माँ को दीर्घजीवी होने के लिए घसीटा गया था जिस कारण से उनका नाम घसीटो देवी पर गया। केदार जी को भी दीर्घजीवी बनाने के लिए उनके कान का एक हिस्सा काट दिया गया था। इस प्रकार से बचपन से ही उन्होंने अंधविश्वासों को बहुत पास से देखा था इस कारण से शायद उनकी कवि चेतना छोटी उम्र में ही जागृत हो चुकी थी। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्ययन करने के दौरान उन्होंने कविताएँ लिखना शुरू कर दिया। इस प्रकार से इलाहाबाद के साथ साहित्यकार के रूप में उनका गहरा संबंध बन गया। प्रयाग के साहित्यिक परिवेश से उनका संबंध कितना गहरा था इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है की उनकी सभी मुख्य कृतियाँ इलाहाबाद के 'परिमल प्रकाशन' से ही प्रकाशित हुई। 'परिमल प्रकाशन' के प्रकाशक शिव कुमार सहाय उन्हें पिता तुल्य मानते थे और 'बाबूजी' कहते थे। लेखक और प्रकाशक में ऐसा गहरा संबंध बहुत कम देखने को मिलता है। केदारनाथ अग्रवाल ऐसे हिन्दी क्षेत्र के कवि थे, जहाँ आधुनिकता कम पहुँची थी, वामपंथी आंदोलन अनुपस्थित था, कृषक अत्याचारों से पीड़ित थे और रेत के सीने में पहले की तरह केन नदी बह रही थी। वे दूसरे कवियों की तरह घुमक्कड़ नहीं थे, किसी क्रांतिकारी संघर्ष में भी शामिल नहीं थे लेकिन वे हर एक विषय की जानकारी रखते थे। वे किसी भी विषय का गहन अध्ययन करते थे। इस अध्ययन का असर उनकी कविताओं में भी देखने को मिलता है। केदारनाथ अग्रवाल करीबन सन् 1931 के पहले से ही लिख रहे थे। आरंभिक दौर में उनमें सामान्य किस्म के रोमानी भाव थे। उनकी कविता में जान तब आई जब वे प्रगतिशील आंदोलन के संपर्क में आए और मार्क्सवादी हो गए। हंस, नया साहित्य और अन्य

प्रगतिवादी पत्रिकाओं में केदार जी की रचनाएँ लगातार प्रकाशित होती रही। रूसी, जर्मन, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं में अनूदित इनकी रचनाएँ विश्व सम्मान की अधिकारिणी हुई हैं। केदार जी ने अपने जीवनकाल में अनेक रचनाओं को रचा। फूल बोलते नहीं, रंग बोलते नहीं, नींद के बादल, आग का आईना, आत्मगन्ध, अपूर्वा, अनहारी, कहे केदार खरी खरी, पंख और पतवार, युग की गंगा, हे मेरी तुम आदि उनके द्वारा रचित प्रसिद्ध रचनायें हैं। केन नदी के किनारे घूमना, केन नदी को घंटों एकांत में बैठकर देखना और उसकी कल-कल ध्वनि को सुनना और उसमें खो जाना उन्हें बेहद प्रिय था। इस कारण से केदार जी को 'केन नदी का कवि' कहा जाता है। इन्होंने मानव और प्रकृति के सहज सौन्दर्य को कविता के माध्यम से अंकित किया है। हमने यह भी अध्ययन किया कि केदारनाथ अग्रवाल जी की रचनाओं में चेतना तत्व को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला। प्राकृतिक चेतना, मानवीय चेतना, प्रगतिवादी चेतना उनकी कविताओं के प्रमुख विशेषता रही।

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए है-

1. केदारनाथ अग्रवाल हिंदी कविता की प्रगतिवादी धारा के प्रमुख कवि है।
2. केदारनाथ अग्रवाल ने प्रगतिवाद को आत्मसात करके इस प्रकार काव्य में ढाला है कि विचारधारा ऊपर तैरती हुई दिखाई नहीं देती।
3. केदारनाथ अग्रवाल ने प्रगतिवादी कविता के संकुचित विषय क्षेत्रों का बंधन तोड़ दिया और उसे आम आदमी की सौंदर्य चेतना के साथ जोड़ा।
4. केदारनाथ अग्रवाल की प्रकृति और पत्नी के प्रेम पर लिखी हुई कविताएँ हिंदी के प्रगतिवादी काव्य को एक अलग पहचान प्रदान करती है।

4.6 शब्दार्थ

1. आत्माभिव्यक्ति = अपने मन के अनुभव को कहना
2. विशिष्ट = विशेष
3. संपृक्त = साथ में
4. संश्लेषित = सटाया हुया
5. सर्वहारा = जिसके पास कुछ नहीं है

4.5 पाठ की उपलब्धियाँ

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में व्याप्त चेतना को समझाइए।
2. केदारनाथ अग्रवाल की साहित्यिक यात्रा और चिंतन पर प्रकाश डालिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. केदारनाथ अग्रवाल के प्रारम्भिक जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. केदारनाथ अग्रवाल की साहित्यिक रचनाओं पर प्रकाश डालिए।
3. केदारनाथ अग्रवाल के शैक्षिक जीवन पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. केदारनाथ अग्रवाल की माता का नाम क्या था? ( )
   (अ) सीता देवी (आ) मयूरी देवी (इ) ज्योत्सना देवी (ई) घसीटो देवी
2. केदारनाथ अग्रवाल के पिता ब्रजभाषा में की उपनाम से कविता लिखते थे? ( )
   (अ) मान (आ) ज्ञान (इ) भय (ई) श्रम
3. केदारनाथ अग्रवाल पेशे से क्या थे? ( )
   (अ) अध्यापक (आ) वकील (इ) डॉक्टर (ई) किसान

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. केदारनाथ अग्रवाल .....वादी कवि थे।
2. केदारनाथ अग्रवाल ने ..... का खुलकर विरोध किया।
3. केदारनाथ अग्रवाल ने प्रकृति ..... प्रेम की भी कविताएँ लिखी है।
4. जमुन जल तुम में कवि ने नदी को ..... का प्रतिक माना है।

III. सुमेल कीजिए –

1. केन नदी का कवि	(अ) इलाहाबाद
2. परिमल प्रकाशन	(आ) केदारनाथ अग्रवाल
3. युग की गंगा	(इ) सरकारी वकील
4. सन् 1973	(ई) पहली कविता संग्रह

4.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक कवि : विश्वम्भर 'मानव', रामकिशोर शर्मा
2. कवि की नई दुनिया : शंभुनाथ

इकाई 5 : केदारनाथ अग्रवाल की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)

रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 मूल पाठ : केदारनाथ अग्रवाल की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)
5.3.1 बाप बेटा बेचता है
5.3.2 जनता
5.3.3 धरती
5.3.4 आग लगे इस रामराज में
5.3.5 आयोग
5.4 पाठ सार
5.5 पाठ की उपलब्धियाँ
5.6 शब्द संपदा
5.7 परीक्षार्थ प्रश्न
5.8 पठनीय पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

प्रगतिशील कविता के प्रमुख हस्ताक्षर कवि केदारनाथ अग्रवाल (1 अप्रैल 1911ई.- 22 जून 2000ई.) का जन्म बांदा जिले के कमासिन में हुआ था। हिंदी तिथि से इनका जन्म चैत्र शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि को शनिवार के दिन संवत 1968 में हुआ था। जीवनयापन के लिए इन्होंने पेशे के रूप में वकालत को अपनाया और निरंतर रचना कर्म में प्रवृत्त रहे। इनकी रचनाओं की नींव में मार्क्सवाद दर्शन है। मार्क्सवाद केवल इनका ही नहीं, सभी प्रगतिशील रचनाकारों का अभीष्ट था। साहित्य के इतिहास में प्रगतिशील रचनाकारों के कालखंड को प्रगतिवाद युग के नाम से अभिहित किया गया। इस युग का आरंभ छायावाद के अंत (1936ई.) के साथ होना शुरू हुआ। लगभग 1950ई. तक हिंदी साहित्य में इस प्रगतिशील प्रवृत्ति की व्याप्ति रही। 1936ई. से 1950ई. का यह दौर पूरे विश्व में सर्वाधिक हलचलों वाला दौर माना जा सकता है। भारत के संदर्भ में आजादी से कुछ वर्ष पूर्व और उसके कुछ वर्ष बाद की संवेदना समवेत रूप में वैविध्य भरी थी। ओज, वीर और करुण भावों के साथ भारतीयों ने बहुधा हतप्रभ करने वाली स्थितियों का सामना किया। खुशियाँ यदि झोली भर थी तो विसंगतियाँ अपार थी। उस समय के कवि इन स्थितियों के द्रष्टा और भोक्ता के रूप में कुछ रच रहे थे या जी रहे थे। हृदय विदारक स्थितियों से दहते अपने मन को वश में रख कर वे अपने शब्दों से युग को जगा रहे थे। यदि इस कालखंड में वैश्विक परिदृश्य की ओर भी देखें तो हम पाते हैं कि सोवियत रूस फासीवाद से त्रस्त था और वहाँ भी एक जन-आंदोलन छिड़ा हुआ था। मसलन उपनिवेशवाद से पूरा विश्व आतंकित था। समदुख भोगी भारत के रचनाकारों ने उनकी पीड़ा को भी अनुभूत कर,

क्रांति की अग्नि प्रज्वलित करने वाले शब्द रचे। उस समय का वीभत्स यथार्थ कहा और मनुष्य के दारुण दुख का चाक्षुष बिंब अपने शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत किया। उपनिवेशवाद के वर्चस्व में केवल मनुष्य ही अपंगता का अनुभव नहीं कर रहा था बल्कि कलाएँ भी गूँगी, बेजान और परतंत्र-सी हो गई थीं। इस अपंगता और परतंत्रता को सिरे से नकारते हुए मार्क्सवाद सामने आया। इस विचारधारा से प्रभावित यह प्रगतिशील आंदोलन केवल हिंदी साहित्य तक सीमित नहीं रहा। यह साहित्येतर कलाओं और भारत की सभी भाषाओं में समा कर आगे बढ़ी। सबकी सर्वांग मुक्ति का आह्वान ही इसका मूल स्वर रहा। धन और सत्ता का विकेंद्रीकरण कितना आवश्यक है यह इस समय के यथार्थवादी कवियों के स्वर से स्पष्ट होता है। रामस्वरूप चतुर्वेदी ने कवि केदारनाथ अग्रवाल के लिए 'कवि हृदय' विशेषण का प्रयोग किया है। यह कवि हृदय किसान, मजदूर और स्त्री की दुर्दशा पर चीत्कार कर उठता है। 'युग की गंगा' इनका पहला काव्य संग्रह है जिसका प्रकाशन मार्च 1947 में हुआ। इन्हें इनकी काव्य कृति 'फूल नहीं रंग बोलते हैं' के लिए सोवियतलैंड नेहरू पुरस्कार एवं 'अपूर्वा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार (1986) से नवाजा गया है। यथार्थद्रष्टा कवि केदारनाथ अग्रवाल ने प्रकृति को भी बड़े प्रेम से निहारा है और अपनी मौलिक कल्पनाओं से उसके सौंदर्य को और निखारा है। 'उनका काव्य प्रगतिवाद की अकेली उपलब्धि है।' (रामस्वरूप चतुर्वेदी)।

5.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई में आप केदारनाथ अग्रवाल की पाँच प्रतिनिधि कविताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप-

- अध्येय कविताओं का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- अध्येय कविता की विषयवस्तु को समझा सकेंगे।
- अध्येय कविताओं में निहित कवि की वैचारिकता से अवगत हो सकेंगे ।
- अध्येय कविताओं की सप्रसंग व्याख्या कर सकेंगे।
- अध्येय कविताओं का समीक्षात्मक विश्लेषण कर सकेंगे।

5.3 मूल पाठ: केदारनाथ अग्रवाल की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)

5.3.1 बाप बेटा बेचता है

बाप बेटा बेचता है
भूख से बेहाल होकर,
धर्म, धीरज, प्राण खोकर,
हो रही अनरीति बर्बर राष्ट्र सारा देखता है|
बाप बेटा बेचता है,
शर्म से आँखें न उठतीं,
रोष से छाती धधकती,

और अपनी दासता का शूल उर को छेदता है
बाप बेटा बेचता है

संदर्भ : विवेच्य कविता का शीर्षक 'बाप बेटा बेचता है' है। इस कविता का रचनाकाल 1943 है। यह कविता 'जो शिलाएँ तोड़ते हैं' काव्य संग्रह में संकलित है। इस संग्रह में 17.12.1931 से 9.11.1948 तक की रचनाएँ संकलित हैं। इस संग्रह का संचयन और संपादन अशोक त्रिपाठी ने किया है।

व्याख्या : इस कविता में कवि ने साम्राज्यवादी अर्थनीति के कारण पिसती हुई जनता की दशा का वर्णन किया है। साम्राज्यवादी शोषण युक्ति का सबसे बड़ा हथकंडा अर्थतंत्र पर कब्जा जमाए रखना और अपनी अर्थनीति का पर्दा ना हटे इसलिए अपना दबदबा बनाए रखना रहा है। तीसरी दुनिया के देश इनका आसान शिकार थे जो अपनी दुनिया में मगन होकर सुख-चैन से जी रहे थे। तमाम भूखंडों पर अपने देश का पताका देखने के लालची साम्राज्यवादियों ने आदमी के जान की कीमत न समझनी चाही। इसके परिणामस्वरूप युद्ध की विभीषिकाओं को झेलते रहे आम आदमी, स्त्रियाँ और बच्चे। आम आदमी ना पराजित होता है और ना विजयी, वह सिर्फ हर हाल में पिसता रहता है क्योंकि वह सबसे सस्ता है। वह अनमोल कोहिनूर होता तो किसी साम्राज्य की शोभा बढ़ाता पर वह बेजान नहीं है, वह बेमोल है। उसका सजीव होना कोई मायने यदि रखता है तो बस इतना भर कि इन मालिकों के उपयोग में आने लायक रहे अन्यथा उसके जान की सुरक्षा की भी कोई गारंटी न होगी! खैर वह तो कभी रही भी नहीं! फिर उसकी भावनाओं और संवेदनाओं को समझता कौन? एक समदुखभोगी और दूसरा कुछ हृदयवान मनुष्य-थोड़ा समझ सकता है। कवि भी साहित्य के माध्यम से इनका दर्द बांटता है। अपने जिस दर्द को लोग पीकर जी रहे थे उस दर्द को महसूस करके कवि केदारनाथ अग्रवाल उसकी अभिव्यक्ति अपने शब्दों में इस तरह देते हैं, देखें-

"बाप बेटा बेचता है/ भूख से बेहाल होकर,/ धर्म, धीरज, प्राण खोकर/ हो रही अनरीति बर्बर राष्ट्र सारा देखता है/ बाप बेटा बेचता है/ माँ अचेतन हो रही है,/ मूर्छना में रो रही है,"

शासकों की कार्यकलाप की शैली इतनी बर्बर और आदमखोर हो रही है कि प्रजा भूख से बेहाल है। गरीब जनता की अकुलाहट को पूरा देश, पूरा कथित सभ्य समाज मौन साधे निहार रहा है। भूख से व्याकुल पिताओं की अंतरियाँ अकुला रही हैं। उसके प्राण कंठ तक आ कर मानो अब निकलने की आज्ञा चाहते हों। उस पिता का धीरज, उसके सहने की शक्ति अब टूट रही है जिससे वह अपने पितृधर्म से विमुख होने को विवश है। इस विवशता में वह अपने बेटा को बेचता है। पूंजीवादी, सामंतवादी और साम्राज्यवादी ताकतों के राज में बिना कोई वस्तु दिए कोई व्यक्ति अपनी भूख भी नहीं शांत कर सकता। यहाँ मनुष्य की अस्मिता का अवमूल्यन हो रहा है। उस पिता की अकुलाहट भी इन ताकतों की बर्बर नीति के प्रभाव से ही पैदा हुई है। मनुष्यता के इस कोहराम का साक्षी पूरा राष्ट्र है। घोर विपदा की इस घड़ी में अपने बेटे को उसके पिता द्वारा बेचा गया, देखकर माँ बेहोश हो गई है। इस असहनीय पीड़ा से वह मूर्च्छित

अवस्था में पड़ी है। और उसकी आँखों से आँसू आ रहे हैं। पीड़ा की गहराई इसी से मापी जा सकती है कि चेतनाहीन अवस्था में भी माँ रो रही है। यह अर्थनीति बड़ी प्रबल और निर्मम है। इसके समक्ष प्रेम भी कुछ नहीं। अर्थनीति से हारते हुए प्रेम को दिखाते हुए कवि की उद्भावना है, "दाम के निर्मम चरण पर/ प्रेम माथा टेकता है।" पूँजी के राज्य में 'प्रेम और मनुष्य' दोनों का अवमूल्यन हो रहा है, यह बताकर कवि समाज को सचेत करते हैं। इनकी कविताओं के संबंध में अशोक त्रिपाठी का मानना है, "केदारजी गहन इंद्रिय संवेदना, सामाजिक प्रतिबद्धता के गहरे सरोकार, आधुनिकता बोध और विकासमान ऐतिहासिकता की संयुक्त समझ से पैदा हुई भीतरी छटपटाहट, लोक सौंदर्य और किसान चेतना की मस्ती और उसकी उत्सव-धर्मिता के ऊर्ध्वमुखी कवि हैं।.... उनकी कविता आदमी के संघर्षमय जीवन का आकुल संगीत है, जो युगीन दबावों और उसके अंतर्विरोधों को पूरी विश्वसनीयता के साथ उजागर करती है तथा शोषण की कलई खोलकर उसके विरुद्ध संघर्ष करने को प्रेरित करती है।"

कविता की अगली पंक्तियाँ हैं, "बाप बेटा बेचता है,/ शर्म से आँखें न उठतीं,/ रोष से छाती धधकती,/ और अपनी दासता का शूल उर को छेदता है/ बाप बेटा बेचता है।" यहाँ अपने बेटे को बेचने के लिए मजबूर पिता की मनःस्थिति का चित्रण कवि ने किया है। वह पिता जो अपने बेटा को बेच रहा है, उसकी सामाजिक हैसियत एक 'दास' की है। यानी वह गुलाम है। उसे अपने बेटे को बेचना पड़ा इसलिए वह शर्मिंदा है। वह अपनी आँख उठाकर देख भी नहीं पा रहा। शर्मिंदा उसे नहीं उस व्यवस्था को होना चाहिए जहां दासों को इतना कड़ुवा घूंट पीने को मजबूर होना पड़ता है। उस पिता के हृदय में उसका किसी का दास होकर जीना अब खटक रहा है। यह दासता उसे कांटे की तरह चुभती हुई उसके हृदय में छेद कर रही है। वह असहनीय पीड़ा का अनुभव कर रहा है। उसकी छाती में क्रोध और आक्रोश की आग धधक रही है।

अर्थात गुलामी का जीवन जी रही जनता अब इससे तंग आ चुकी है। इसकी अतियों को सहते-सहते वह थक चुकी है और अब उसने क्रांति का मन बना लिया है। तभी उसकी छाती में रोष भरा है। यह आग बदला चाहती है। अब वह दासता रूपी कांटे को अपने हृदय में और चुभने न देगी। बहुत रो चुकी परतंत्र रहकर जनता अब यह स्वतंत्रता लेकर रहेगी। एक सुकून वाली स्वतंत्रता! हर भेदनीति से विरत स्वतंत्रता! दासता के बदले जनता मनुष्यता चाहती है, और उसे वह लेकर रहेगी।

बोध प्रश्न

- 'बाप बेटा बेचता है' कविता की मूल संवेदना क्या है?
- "दाम के निर्मम चरण पर/ प्रेम माथा टेकता है।" इस पंक्ति का आशय अपने शब्दों में स्पष्ट करें।

5.3.2 जनता

अत्याचारों के होने से

लोहू के बहने चुसने से
बोटी-बोटी नुच जाने से
किसी देश या किसी राष्ट्र की
कभी नहीं जनता मरती है
मुरदा होकर भी जीती है
बंदी रहकर भी जीती है
साँसों-साँसों पर उड़ती है
किसी देश या किसी राष्ट्र की
कभी नहीं जनता मरती है|
सब देशों या सब राष्ट्रों में
शासक ही शासक मरते हैं
शोषक ही शोषक मरते हैं
किसी देश या किसी राष्ट्र की
कभी नहीं जनता मरती है|
जनता सत्यों की भार्या है
जागृत जीवन की जननी है
महामही की महाशक्ति है
किसी देश या किसी राष्ट्र की
कभी नहीं जनता मरती है

संदर्भ : यह कविता भी अशोक त्रिपाठी द्वारा संपादित काव्य संग्रह 'जो शिलाएँ तोड़ते हैं' में संकलित है। इस कविता का रचनाकाल 6-3-1945 है। 'केदारनाथ रचना संचयिता' का संपादन भी अशोक त्रिपाठी ने ही किया है।

व्याख्या : विवेच्य कविता की मूल संवेदना जनता की शक्ति का जयघोष है। केदारनाथ अग्रवाल के विचार में 'पूंजीवाद, क्या सामंतवाद दोनों ही अपनी भलाई इसी में देखते हैं कि एक तीसरी शक्ति नीचे से उठती हुई जनता को कुचलती रहे, ताकि वह जनता असफल रहे, अन्यथा सफलता प्राप्त करके जमीन उसकी हो जाएगी- जो जोतेगा; और मिलें उसकी हो जाएँगी- जो उसमें श्रम करेगा।' संघर्षशील जनता के बल का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि अत्याचारियों का गुट चाहे जनता पर कितना भी अत्याचार क्यों न करे, जनता कभी हार नहीं मानती और न कभी मरती ही है। चाहे उसके शरीर पर माँस का एक टुकड़ा बाकी न रहे, चाहे उसके शरीर का सारा खून बह जाए या रक्तखोरों द्वारा चूस लिया जाए, तब भी जनता नहीं मरती है। किसी भी राष्ट्र की शक्ति उसकी जनता होती है। राष्ट्र तभी हारता है जब जनता घुटने टेकती है। कवि उस जनशक्ति की महत्ता से परिचय करा रहे हैं। अपने राष्ट्र के नाम पर यह अपनी मृत देह में भी नव प्राण भर लेती है। यानी सारे संसाधनों और साधनों से हीन जनता भी अपने राष्ट्र के लिए आह्लाद शक्ति से पूर्ण होती है। वह कारागार की बंदिनी होकर भी अपने राष्ट्रप्रेम के संचरण से

शत्रु का दिल दहला देती है। जनता का बल अद्वितीय है। हर राष्ट्र की जनता के पास अमरत्व निधि संचित है। अपनी मरण स्थिति को जानकर भी वह अपने राष्ट्र के लिए बिना हार माने जीती है। कवि के शब्दों में देखें- "अत्याचारों के होने से,/ लोहू के बहने चुसने से, / बोटी-बोटी नुच जाने पर, / किसी देश या किसी राष्ट्र की/ कभी नहीं जनता मरती है! / मुरदा होकर भी जीती है/ बंदी रहकर भी उठती है/ साँसों साँसों पर उड़ती है/ किसी देश या किसी राष्ट्र की/ कभी नहीं जनता मरती है!"

संग्राम का रक्तपात हो या शोषकों के शोषण का जाल; सब काटकर जनता अपने राष्ट्र के पक्ष में डटी रहती है। जनता में यह शक्ति कहाँ से आती है? यह शक्ति सत्य की है। यह शक्ति जीवन की है। यह शक्ति जागृति की है। कोई जागृति अभियान जनता को नहीं जगाता है, जनता जागृति को जन्म देती है। जनता सत्य की जीवन संगिनी है। वह सत्य का आधार बनी है। जनता का मरण यानी सत्य का अंत है, इसलिए जनता अमर है। कविता की आगे की पंक्तियाँ देखें, "जनता सत्यों की भार्या है/ जागृत जीवन की जननी है;/ महामही की महाशक्ति है!/ किसी देश या किसी राष्ट्र की/ कभी नहीं जनता मरती है!" समस्त जीवों को जीवन देनेवाली या जीवन को धारण करनेवाली इस महामही की महाशक्ति 'जनता' है। भय, शोषण और आतंक के रक्तमिश्रित माहौल में कवि द्वारा जनता की शक्ति का यह उद्घोष जनता की सुप्त पड़ी क्षमताओं को चेतन बनाने के लिए है ताकि विपरीत स्थितियों में उसे हताशा न घेर ले।

बोध प्रश्न

- 'कभी नहीं जनता मरती है!'- इस पंक्ति से कवि के किन विचारों की झलक मिलती है?
- आपके विचार में पूंजीवाद, सामंतवाद, तीसरी शक्ति और जनता के संघर्ष में किसे जीतना चाहिए? कल्पना कीजिए यदि इनमें से बारी-बारी सबको जीत मिलती है तो किसकी बारी में साधारण आदमी सुखी और निश्चिंत रहेगा?

5.3.3 धरती

यह धरती है उस किसान की
जो बैलों के कंधों पर
बरसात घाम में,
जुआ भाग्य का रख देता है,
खून चाटती हुई वायु में,
पैनी कुसी खेत के भीतर,
दूर कलेजे तक ले जाकर,
जोत डालता है मिट्टी को,
पाँस डाल कर,
और बीज फिर बो देता है

नए वर्ष में नयी फसल के|
ढेर अन्न का लग जाता है|
यह धरती है उस किसान की|
नहीं कृष्ण की,
नहीं राम की,
नहीं भीम, सहदेव, नकुल की,
नहीं पार्थ की,
नहीं राव की, नहीं रंक की,
नहीं तेग तलवार धर्म की
नहीं किसी की, नहीं किसी की;
धरती है केवल किसान की|
सूर्योदय, सूर्यास्त असंख्यों
सोना ही सोना बरसा कर
मोल नहीं ले पाए इसको;
भीषण बादल
आसमान में गरज-गरज कर
धरती को न कभी हर पाए,
प्रलय सिंधु में डूब-डूब कर
उभर-उभर आयी है ऊपर|
भूचालों-भूकंपों से यह मिट न सकी है|
यह धरती है उस किसान की,
जो मिट्टी का पूर्ण पारखी,
जो मिट्टी के संग साथ ही,
तप कर,
गल कर,
जी कर,
मर कर,
खपा रहा है जीवन अपना,
देख रहा है मिट्टी में सोने का सपना;
मिट्टी की महिमा गाता
मिटटी के ही अंतस्तल में,
अपने तन की खाद मिला कर,
मिट्टी को जीवित रखता है;
खुद जीता है|
यह धरती है उस किसान की!

संदर्भ: 'धरती' शीर्षक कविता काव्य संकलन 'गुलमेंहदी' में संकलित है। इस कविता को इस संग्रह में 'युग की गंगा' शीर्षक के अंतर्गत रखा गया है। काव्य संग्रह 'गुलमेंहदी' में कवि के आरंभिक काव्य संग्रहों को शामिल किया गया है। इसमें 'नींद के बादल, युग की गंगा, लोक और आलोक' इत्यादि संग्रह की कविताओं के साथ कुछ नई कविताएँ भी संकलित हैं। ये नई कविताएँ 'आज अभी आँखों से' शीर्षक के अंतर्गत संग्रह में शामिल की गई हैं। 'नींद के बादल' में कवि की प्रेम कविताएँ संकलित हैं।

व्याख्या : यह कविता किसान जीवन को लक्ष्य करके लिखी गई है और किसानी कर्म की महत्ता को रूपायित करती हुई 'धरती' पर किसान के एकल स्वामित्व का उद्घोष करती है। किसान और धरती का संबंध मानव सभ्यता की उत्पत्ति के साथ जुड़ा हुआ है। मानव ने अपना भरण-पोषण इस धरती पर उगे वृक्षों और उनके सहारे पलते पशुओं के सहारे ही किया। जब वह उन्नत और विकसित हुआ तब उसने किसानी (खेती) सीखी। धरती और किसान दोनों एक-दूसरे को कलेजे से लगा कर संसार को पुष्ट और सुंदर बना रहे हैं। इस कविता की पहली अंतरा में कवि ने किसान के काम का स्वरूप वर्णित किया है, देखें- "यह धरती है उस किसान की/ जो बैलों के कंधों पर/ बरसात घाम में,/ जुआ भाग्य का रख देता है,/ खून चाटती हुई वायु में, / पैनी घुसी खेत के ऊपर,/ दूर कलेजे तक ले जाकर,/ जोत डालता है मिट्टी को/ पाँस डालकर,/ और बीज फिर बो देता है/ नए वर्ष में नयी फसल के।/ ढेर अन्न का लग जाता है।/ यह धरती है उस किसान की!"

यह धरती किसी बैठे-ठाले यानी निठल्ले किसान की नहीं है। यह धरती कर्मठ किसान की है। यह धरती उस किसान की है जो गर्मी और बरसात में अपनी परवाह किए बिना हल और बैल के साथ घर से निकलकर खेत जोतने चला जाता है। बैलों के कंधों पर शोभित यह हल केवल खेत जोतने का यंत्र भर नहीं है। यह 'हल' किसान का भाग्य है। हल का जो हिस्सा बैलों के कंधे पर रखा जाता है उसे जुआ कहते हैं। उसी तरह किसान के भाग्य और दैवयोग के बीच के खेल में फसल का उगना किसान की जीत है और उसका नष्ट हो जाना दैवयोग की जीत। दैवयोग की मार से पहले धरती पर पसरी हुई खून चाटने वाली हवाओं से फसल क्या बच सकेगी? यह किसान की चिंता है पर वह इस दुर्योग की परवाह नहीं करता है। 'खून चाटती हुई वायु में'- यह कहकर कवि ने उस समय के रक्तरंजित माहौल का हवाला दिया है। यह कविता जब रची गई उस समय देश पर अंग्रेजों का राज था। आजादी के दीवाने भले अपने काम में मशगूल थे पर भारत के अधिकांश राजे-महाराजे उनकी चाटुकारिता में व्यस्त थे। वे गरीब किसानों के लिए गए अहितकारी निर्णयों को लागू करवाने में अंग्रेजों के सहायक थे। इस तरह देश की आबोहवा तब किसानों के अनुकूल न थी। वायु जो मनुष्य के प्राण का स्रोत है वही खून चाटने लगा- इस हाहाकारी माहौल में बिना त्राहिमाम की गुहार लगाए किसान अपने बलबूते पर अपना काम करते रहे। अपनी धरती को सींचते रहे, जोतते रहे। खेत को जोतने के लिए किसान पहले दोनों बैलों के कंधों पर हल का जुआ सँभालकर रखता है फिर उसके दूसरे सिरे को उसी ऊँचाई में

अपने कलेजे तक लाता है। उसके बाद धीरे से उसे नीचे ले जाते हुए उसकी नोंक को धरती के भीतर घुसाता है। और बैलों को हाँकते हुए पूरा खेत जोत डालता है। धरती में बीज बोने से पहले उसकी मिट्टी में पड़े ढेलों को महीन करना जरूरी होता है। अब मिट्टी तैयार है। किसान उसमें बीज बोता है। नए वर्ष में नई फसलों का ढेर लग जाता है। इस नवान्न के स्वागत में कई तरह के त्योहार मनाए जाते हैं, जैसे- मकर संक्रांति, पोंगल, बिहू, लोहड़ी इत्यादि। कवि कहते हैं कि यह धरती उसी किसान की है जो इसे जोतता है, बोता है और फसल उगाता है। उसी किसान का इसपर एकाधिकार है। उस किसान पर कोई अपनी मनमानी नहीं कर सकता। धरती का वह बेटा भी है और सम्राट भी।

आगे कवि कहते हैं, "नहीं कृष्ण की;/ नहीं राम की,/ नहीं भीम, सहदेव, नकुल की,/ नहीं पार्थ की,/ नहीं राव की, नहीं रंक की,/ नहीं किसी की, नहीं किसी की;/ धरती है केवल किसान की।" यहाँ कवि ने न केवल धरती के प्रभावशाली लोगों पर ही धरती पर अपना वर्चस्व जमाने पर अंकुश लगाया है वरन अवतारी पुरुषों और देवताओं की संतानों को भी साफ-साफ कह दिया है कि धरती किसान के अतिरिक्त किसी की नहीं है। यहाँ राम और कृष्ण अवतारी पुरुष हैं। नकुल, सहदेव और पार्थ (अर्जुन) को देवताओं की संतान कहा गया है। उनकी माता कुंती ने उन्हें अपनी मंत्रसिद्धि द्वारा देवताओं से प्रत्यक्ष प्राप्त किया था। इसे गोपनीय रखा गया और वे पांडु पुत्र पांडव के रूप में प्रसिद्ध हुए। इन दोनों कोटि के पुरुषों की योग्यता क्या है? यदि कोई ब्रह्मांड का संचालक है तो रहे, कोई समस्त युद्ध विद्याओं और शस्त्रकलाओ में निपुण है तो रहे पर यह धरती उनके सामर्थ्यों और योग्यताओं से परे है। यानी कोई वर्चस्व और प्रभुत्व धरती पर हावी नहीं हो सकता। यह ना किसी राजा की है ना किसी गरीब की है। धरती यदि गरीब की भी नहीं है तो वह किसान की ही क्यों है? धरती किसान की इसलिए है क्योंकि वह धरती से प्रेम करता है। यह उसकी योग्यता है। उसकी प्रेम से देखभाल करता है। तरह-तरह के बीजों को उगाकर वह उसका शृंगार करता है। माँ की गोदी की भांति वह धरती की धूलि में रमा रहता है। धरती की जिस उपज को वह काटता है वह धरती के प्रति उसके प्रेम निर्वाह का प्रतिफल है। किसान का धरती के प्रति सेवाभाव है, इसीसे धरती केवल उसी की है। किसी भी वस्तु पर अधिकार उसका पालन करनेवाले का होता है, दोहन करनेवाले का नहीं। किसान के लिए धरती मातृच्छाया है।

फिर तीसरा अंतरा आता है। इसमें कवि धरती की समर्थता की महिमा गाते है और अपनी कल्पना से उसकी कामना करने वाले के रूप में सूर्योदय-सूर्यास्त और बादल का वर्णन करते हुए कहते हैं, "सूर्योदय, सूर्यास्त असंख्यों/ सोना ही सोना बरसाकर/ मोल नहीं ले पाए इसको;/ भीषण बादल/ आसमान में गरज-गरजकर/ धरती को न कभी हर पाए/ । इसी अंतरा में आगे वे मिथकीय चेतना से संपन्न युक्ति देते हैं, "प्रलय सिंधु में डूब-डूबकर/ उभर-उभर आयी है

ऊपर।/ भूचालों-भूकंपों से यह मिट न सकी है।" अब प्राकृतिक उपादान धरती को हासिल करने की होड़ में शामिल हैं। सबसे पहले सूर्योदय और सूर्यास्त आते हैं। वे धरती को कैसे हासिल करना चाहते हैं? अनगिणत सोना बरसाकर। यह सोना क्या है? यह सूर्य का प्रकाश है जो सूर्योदय के साथ ही धरती के पोर-पोर को छू लेता है और सूर्यास्त के समय जब जाने के लिए अपनी किरणों को समेटता है तब वह कण भर भूमि भी अपने साथ नहीं ले जा पाता है। कलयुग अर्थप्रधान युग है। इस में सोना की प्रधानता है और इसके बदले कुछ भी उसके दाम के इतना खरीदा जा सकता है। सूरज पूरे दिन अपने सुनहले प्रकाश रूपी सोना को धरती पर बरसाता रहा पर वह तिल भर भूमि भी न खरीद सका, जिस पर वह ठहर सकता। उसे जाना पड़ा। सूरज के जाने के बाद बादल आते हैं। घनघोर जलभरे गरजते हुए बादल खूब बरसते हैं। धरती उनके जल से तर हो जाती है। बादल का जल धरती पर रह जाता है। उनकी धरती को बादलों में उड़ा ले जाने की कामना अधूरी रह जाती है। वे धरती का हरण नहीं कर पाते हैं। यह धरती बहुत शक्तिशाली है। भूचाल और भूकंप में इसपर बने बड़े-बड़े मकान भले ढह जाते हैं। धरती में दरारें भले पड़ जाती हैं पर धरती का अस्तित्व बना रहता है। धरती मिटती नहीं है। कहा जाता है कि प्रलय काल में सारी पृथ्वी जलमग्न हो जाती है। उस समय पुराणों में संकेत है कि धरती को विष्णु के अवतार वाराह धारण कर लेते हैं। उसे डूबने नहीं देते हैं। यहाँ कवि कहते हैं कि सागर की प्रलयंकर धाराओं में यदि धरती डूब भी जाती है तो वह अपनी शक्ति से पुनः उभरकर ऊपर आ जाती है। यह धरती की शक्ति है।

यह पूर्ण समर्थ और शक्तिशाली धरती केवल उस किसान की है जिसे मिट्टी की पूरी पहचान है। सच्चा किसान मिट्टी को उसके हर रंग-रूप और अवस्था में पहचानता है। उसके गुणों की पूरी परख वह रखता है। उसकी मिट्टी के साथ इस गाढ़ी पहचान का कारण भी है। किसान का जीवन गाँव में मिट्टी के साथ ही पलता है। घर के आँगन की मिट्टी, देहरी या खेत की मेढ़ ही, एक किसान का सिंहासन होता है और उसका खेत ही उसका पूरा साम्राज्य है जिसे वह बड़े हर्ष से जी भर निहारता है पर उसका जी नहीं भरता है। उसके जीवन का हर रंग-उमंग और दुख धरती के साथ जुड़ा हुआ है। उसकी उन्नति का माध्यम वह मिट्टी ही है। जिस किसान के लिए मिट्टी, मिट्टी न होकर उसकी तपस्या है, उसकी साधना है- यह धरती उसी किसान की है। किसान का पूरा जीवन मिट्टी को समर्पित है। उसे मिट्टी से अधिक कोई मोहित नहीं करता। वह मिट्टी की महिमा गाता है। अपने जीवन में आई बरक्कतों का श्रेय वह मिट्टी को देता है। मिट्टी से उसके लगाव की हद यहाँ तक है कि वह अपने शरीर को भी मिट्टी में झोंककर मिट्टी को जीवित रखना चाहता है। अपने जीवन का लक्ष्य उसने मिट्टी को बना रखा है। उसकी दिनचर्या और उसकी आत्मा सब मिट्टी से बंधी है। जो जिससे जितना अधिक जुड़ा होता है वह उसका उतना ही अधिक अपना होता है। शरीर और आत्मा को ही ले लें। आत्मा के बिना शरीर क्या रहेगा? यही घनिष्ठता मिट्टी और किसान की है। कवि के शब्दों में, "यह धरती है उस किसान की,/ जो मिट्टी का पूर्ण पारखी,/ जो मिट्टी के संग-साथ ही,/ तपकर,/ गलकर,/ जीकर,/ मरकर,/ खपा रहा

है जीवन अपना,/ देख रहा है मिट्टी में सोने का सपना;/ मिट्टी की महिमा गाता है/ मिट्टी के ही अंतस्तल में,/ अपने तन की खाद मिलाकर;/ मिट्टी को जीवित रखता है;/ खुद जीता है।/ यह धरती है उस किसान की!"

इस कविता की बनावट देखें तो हम पाते हैं कि इस कविता में चार अंतरा है। पहले और अंतिम अंतरा का आरंभ और अंत 'धरती है उस किसान की' पंक्ति से होता है। कविता में कुल 44 पंक्तियाँ हैं। इस कविता के माध्यम से कवि किसानों की वाणी बने हैं। इस कविता की रचना प्रक्रिया के संदर्भ में कवि कहते हैं, "हिंदी की कविता न 'रस' की प्यासी है, न 'अलंकार' की इच्छुक है; और न 'संगीत' की तुकांत पदावली की भूखी है। भगवान अब उसके लिए व्यर्थ हैं। आज जिसके राजा शासक हैं और पूंजीपति शोषक हैं। अब वह चाहती है- किसान की वाणी, मजदूर की वाणी और जन-जन की वाणी।" अपनी रचनाओं के माध्यम से कवि ने जन के साथ अपनी वाणी और विचारों को भी तटस्थता दिया है।

बोध प्रश्न

- धरती कविता के माध्यम से कवि ने क्या अभिव्यक्त करना चाहा हैं?
- धरती को पाने के लिए कौन-कौन से प्राकृतिक उपादान क्या-क्या उद्यम करते हैं?
- क्या आप धरती और किसान से प्रेम करते हैं?
- क्या आपने सूर्यास्त, सूर्योदय, बादल और वर्षा को शांत मन से कुछ देर देखा है? यदि हाँ तो अपना अनुभव दोस्तों के साथ बाँटिए।

5.3.4 आग लगे इस रामराज में

(1)
आग लगे इस राम-राज में
ढोलक मढ़ती है अमीर की
चमड़ी बजती है गरीब की
खून बहा है राम-राज में
आग लगे इस राम-राज में
(2)
आग लगे इस राम-राज में
रोटी रूठी, कौर छिना है;
थाली सूनी, अन्न बिना है,
पेट धँसा है राम-राज में
आग लगे इस राम-राज में:

संदर्भ : विवेच्य कविता 'आग लगे इस रामराज में' की रचना तिथि 18.09.1951 है। यह 'कहें केदार खरी-खरी' काव्य संग्रह में संग्रहीत है। इस संग्रह के संपादक अशोक त्रिपाठी है।

07.02.1946ई. से 30.03.1977ई. तक की केदारनाथ की रचनाएँ इस संग्रह में मुख्य रूप से कालक्रमानुसार ही व्यवस्थित हैं। कविताओं का क्रम बनाने के लिए विषय वस्तु का आधार संपादक ने गौण रूप से लिया है। व्यंग्य और राजनीति ही मुख्य विषय जान पड़ते हैं।

व्याख्या : प्रस्तुत कविता में कवि ने अमीर वर्ग और गरीब वर्ग के बीच के अंतर को व्यंग्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। जो गरीब है, वंचित है वह जन्मजात शोषित है और शोषक शासक के सिंहासन पर आरूढ़ हैं। अपना उल्लू साधने के लिए शासक इन शोषितों के जीवन की परवाह किए बिना इनका मनमाना उपयोग करते हैं। 'ढोलक मढ़ती है अमीर की/ चमड़ी बजती है गरीब की'- यह पंक्ति इसी अर्थ का द्योतक है। केवल शासक ही नहीं उनके कथित मित्र वर्ग यानी पूंजीपति, इन गरीबों का रक्त चूसते हैं। अमीरों के बड़े जलसे और शौक अकसर गरीबों के सुख-चैन की बलि देकर ही पूरे किए जाते हैं। ढोलक बजाना शुभ बेला का संकेत है। इस ढोलक की थाप कर्णप्रिय और जानदार हो इसके लिए इसपर चमड़े मढ़े जाते हैं। अमीरों की शुभ बेला का आगमन तभी होता है जब गरीब के चमड़े पर यह थाप पड़ती है। पूरी जान लगाकर अमीर वर्ग इन गरीबों की सहूलियतों पर ग्रहण बन कर छा जाता है। जिन शासकों की नाक के नीचे यह कोहराम मचता है उन शासकों की सत्ता का नाश हो। कर्म भले खोटे हों पर अपना खोट किसे दिखता है! सबको अपना राज रामराज ही लगता है। अतः ऐसे रामराज अवश्य नष्ट हों जिनमें गरीब जनता रक्तपात और अवांछित भेद नीति का शिकार होती है। कवि की पंक्तियाँ इस प्रकार हैं, देखें- "आग लगे इस राम-राज में/ ढोलक मढ़ती है अमीर की/ चमड़ी बजती है गरीब की/ खून बहा है राम-राज में/ आग लगे इस राम-राज में।"

शोषकों के लिए 'रामराज' का प्रयोग व्यंग्यार्थ सूचक है। कहाँ 'राम' गरीबनेवाजू और कहाँ ये कलयुगी शासक स्वयं सिक्कों और ऐशोआराम के दास बने बैठे हैं। एक दूसरे के एकदम विपरीत। गरीबों का दमन करनेवाले ऐसे रामराज अवश्य नष्ट हों।

रामराज अपने रूढ़ अर्थ में सुशासन का प्रतीक है। पर सुशासन में सब बराबर होते हैं। रोटी सबको मिलती है। यहाँ अपने भारत में भूखों की भीड़ जमा है। मेहनत-मजदूरी करने के बाद भी अपना और अपने परिवार का पेट पाल सकना भारी पड़ रहा है। तभी कवि कहते हैं- "आग लगे इस राम-राज में/ रोटी रूठी, कौर छिना है/ थाली सूनी, अन्न बिना है/ पेट धँसा है, राम-राज में/ आग लगे इस राम-राज में।"

इन पंक्तियों में भूख और गरीबी का चाक्षुष बिंब दिखाई देता है- 'रोटी रूठी, कौर छिना है/ थाली सूनी, अन्न बिना है/ पेट धँसा है, राम-राज में'। कुछ शब्दों में ही कवि ने गरीबों के दैनंदिन जीवन का खाका पेश कर दिया है। रोटी रूठ गई है। जो रूठता है वह दूर चला जाता है। रोटी नहीं है। अब खाएँगे क्या? जो एक कौर था भोजन का वह भी इन आततायियों ने छीन लिया। अब इस गरीब की थाली खाली है। उसमें अन्न का दाना नहीं है। अगर वह अपनी भूख मिटाना चाहता है तो उसे अमीरों के इशारे पर नाचना होगा। उसे अपनी आत्मा का गला घोंटकर उन अमीरों के ढोलक की थाप को जीवंत करना होगा, अपने देह की जिंदा चमड़ी

उतारकर। अर्थात अपनी मान-मर्यादा, स्वाभिमान और आत्मसम्मान को ताक पर रखकर गरीब यदि किसी के तलवे चाट सकता है तो उसकी भूख का सवाल हल करने की कोशिश सत्ता पक्ष की ओर से की जा सकती है। नष्ट हो ऐसी सारी सत्ताएँ जो मनुष्य और मनुष्य में राजा और दास का व्यवहार चाहता हो। मनुष्य और मनुष्य के मध्य मनुष्यता का व्यवहार कायम हो।

कविता की बनावट पर ध्यान देने पर यह पाया जाता है कि कवि की शब्द योजना प्रभावी और लयात्मक है। कुल दस पंक्तियों की यह कविता है। इसमें दो अंतरा हैं। दोनों ही अंतराओं का आरंभ और अंत कवि ने 'आग लगे इस रामराज में' पंक्ति से किया है। 'आग लगे' के प्रयोग से कविता की अभिव्यंजना प्रभावी हुई है।

बोध प्रश्न

- वर्गभेद की नीति से समाज पर पड़ते प्रभाव को इस कविता के माध्यम से स्पष्ट कीजिए।
- आपके विचार में यह समाज के लिए लाभकारी है या नहीं, अपना मत स्पष्ट कीजिए।

5.3.5 आयोग

चलनी चालते हैं छोटे-बड़े आयोग|
छेद-छेद से झराझर झरता है
तथाकथित यशस्वियों का भ्रष्टाचार
आतताइयों का अत्याचार|
काँच-काँच के करकते टुकड़ों का
लग गया है भारी-भरकम अंबार|
देखता है मेरा देश
दांत तले उँगली दबाए-
आश्चर्यचकित आँखें उधारे;
दर्द दर्द से कराहता-खाँसता:
बर्फ की टोपी सिर पर लगाए
पाँव में पहले सागर का जूता:
पेट पीठ में
सरकार के पोस्टर चिपकाए|

संदर्भ : इस कविता का रचनाकाल 20.2.1978 है। यह कविता काव्य संकलन 'मार प्यार की थापें' में संकलित है। इस संग्रह में 13.10.1968 से 3.9.1980 तक की कविता संकलित है। इस संकलन के शीर्षक की सार्थकता बताते हुए केदारनाथ कहते हैं, "मैंने जो कुछ इन कविताओं में कहा है वह 'मार' और 'प्यार' की थापों के रूप में कहा गया है। कहीं भी कोई ईर्ष्या द्वेष का भाव 'मार' में नहीं है। वह 'मार' भी 'प्यार' के भाव से संपृक्त है।"

व्याख्या : आजादी के लगभग तीन दशक बाद देश की बदली हुई फिजा की रंगत बयान करती हुई कवि की लेखनी ने जो अक्षर उगाया वह है, "चलनी चालते हैं छोटे-बड़े आयोग/ छेद-छेद से झराझर झड़ता है/ तथाकथित यशस्वियों का भ्रष्टाचार,/ आततायियों का अत्याचार,/ काँच-काँच के करकते टुकड़ों का/ लग गया है भारी-भरकम अंबार।"

आजाद भारत यानी हिंद के स्वराज्य में 'आयोग' की क्या जरूरत आन पड़ी? अपने लोगों द्वारा अपने लोगों पर किए जा रहे शासन में भी कुछ सड़ांध पैदा हो ही गई। शासन छूत का रोग ही बन गया है। जो भी इसे पाता है फिरंगी-सा रोबीला हो जाता है। पर प्रजातंत्र है भारत में, तानाशाही थोड़े ही। इसीलिए जनता के निमित्त शासन द्वारा प्रायोजित विविध मदों या आर्थिक सहूलियतों के आंकड़ों में गड़बड़ी की सूचना मिलने पर या आशंका होने पर जांच आयोगों का गठन कर दिया जाता है। 'आयोग' कुछ लोगों की समिति होती है जिन्हें विशेष योग्यता के आधार पर नामित किया जाता है। अब जब तक आयोग अपना काम कर रही है उस मुद्दे का उछालना कम हो जाता है जिसपर निर्णय देने के लिए आयोग का गठन किया गया है। आयोग के काम की तुलना कवि ने 'चलनी' से की है। 'चलनी'- यह रसोई में उपयोग होने वाला एक गोलाकार उपकरण है जिसमें छोटे-छोटे असंख्य छिद्र होते हैं। इसका गुण यह है कि जब इसमें कुछ रखकर चाला जाता है तब इसके छेद से उपयोग करने योग्य पदार्थ गिरता है, जिसका संग्रह कर लिया जाता है एवं अवशिष्ट पदार्थ चलनी में ही रह जाते हैं, जिन्हें बाद में फेंक दिया जाता है।

आयोग जब चलनी चालते हैं तब क्या गिरता है? इन छिद्रों से झर-झर करते हुए अनगिनत भ्रष्टाचार और अत्याचार गिरते हैं अर्थात देश के जाने-माने यश पाए लोगों का काला चेहरा जांच आयोग के चंगुल से साफ निकल आता है। यदि साफ-सुथरा काम होता तो परिणाम यह आता कि एक भ्रष्टाचार की जांच में कई नए भ्रष्टाचारों एवं अत्याचारों का पर्दाफाश हो जाता। पर इन आयोगों की पारदर्शिता एकदम क्षणभंगुर होती है। आयोगों के चलनी चलने से काँच के करकते टुकड़े ढेर-के-ढेर जमा हो जाते हैं। राजनेता, पूँजीपति सब अपनी रोटी सेंकने में माहिर हैं। उनके तलवे चाटनेवाले बची आँच में अपना हाथ सेंककर ही खुश हैं। इस स्थिति पर इस कविता के माध्यम से कवि ने तंज़ कसा है। आयोगों का गठन मात्र दिखावा के लिए करने की नीति कतई सराही नहीं जानी चाहिए, ऐसा कवि कहते हैं। जनता का हक मारनेवाले ही उसके हक मारनेवाले को पकड़ने के लिए आयोग बनाते हैं और पूरा ऐहतियात रखते हैं कि आयोग का खेल भंग न हो और काले लोगों का रंग भी न खुले। इसीलिए इन आयोगों की जांच शायद ही पूरी होती है।

करकते काँच के टुकड़े जरा-सा शरीर में कहीं चुभ जाए तो खून निकल आता है। यहाँ देश के शरीर पर ये आततायी और भ्रष्टाचारी अपना ढेर लगाए बैठे हैं। इन करकते काँच के टुकड़ों का यह कुनबा देश को घाव पर घाव दिए जा रहा है। और आयोग उसका कुछ नहीं बिगाड़ पा

रहे हैं। ये सारे-के-सारे भ्रष्टाचारी साफ दामन लेकर जाँच से निकल आते हैं। जनता हतप्रभ है। कवि अपनी वाणी से उसे चौकन्ना कर रहे हैं।

जब जनता को केवल झूठा दिलासा देने के उद्देश्य से ही इन छोटे-बड़े आयोगों का गठन होता है तब जनता इन सारे उपक्रमों को समझते हुए भी केवल देखती रहती है। सरकार तो सरकार है भले ही असरकार न हो पर क्या करें, हमने ही चुना है। अपने वोट के अधिकार के प्रयोग का हश्र जनता कुछ इस तरह देखती है, "देखता है मेरा देश/ दाँत-तले अँगुली दबाए-/ आश्चर्य-चकित-आँखें-उघारे;/ दर्द-दर्द से कराहता खाँसता; / बर्फ की टोपी सिर पर लगाए,/ पाँव में पहने सागर का जूता;/ पेट-पीठ में/ सरकार के पोस्टर चिपकाए।" जी हाँ पूरा देश जमूरे और मदारी के इस खेल को देखता है। आश्चर्य में आंखे फाड़-फाड़ कर, भौंचक्के होकर इन अप्रत्याशित परिणामों को पूरा देश देखता है। सरकार जिंदाबाद और प्रजातंत्र की जय के नारों में लीन इस देश रूपी मनुष्य के पेट और पीठ पर सरकार के जनहितकारी घोषणाओं के पोस्टर लगे हैं, जो यथार्थ में शायद ही तब्दील हों। इस देश ने अपने सिर पर बर्फ की टोपी पहनी है और उसके पाँवों में सागर का जूता पूरा फिट है। इन पंक्तियों में देश का मानवीय बिंब कवि ने उपस्थित किया है। यह देश हिमालय की बर्फ की घाटियों से लेकर हिंद महासागर तक समूचा दर्द से कराह रहा है, खाँस रहा है। उसकी कराह सुनी किसी ने? समूचे देश की जनता आधिकारिक रवैये और राजनैतिक हथकंडों से परेशान है। वह पीड़ा में है। उसने सरकार से कुछ आशाएँ बांध रखीं हैं। पर सरकार उसे छोटे-बड़े आयोगों के करतब दिखा रहा है।

इस कविता के माध्यम से 70 के दशक में देश की स्थिति का ब्यान देते हुए कवि ने राजनैतिक व्यवस्था पर व्यंग्य रचा है। भले ही प्यार से हो पर यह मार है।

बोध प्रश्न

- काँच-काँच के करकते टुकड़ों का/ लग गया है भारी-भरकम अंबार - इस पंक्ति के माध्यम से आप भ्रष्टाचार, आयोग और राजनेता के समीकरण पर प्रकाश डालिए।

5.4 पाठ सार

प्रगतिशील कविता के शीर्षस्थ कवि केदारनाथ अग्रवाल ने अपने साहित्य में अपनी आँखों से देखे हुए यथार्थ का अंकन किया है। युग और समाज के सत्यों की अभिव्यंजना करने में इनका स्वर सदा सकारात्मक रहा है। किसी भी स्थिति से पराजय और जीवन से पलायन का अस्वीकार इनके जीवन का मूलमंत्र और साहित्य का मूल रहस्य रहा है। अपनी कविता की रचना प्रक्रिया पर प्रकाश डालते हुए वे कहते हैं, "अपनी कविताओं को रचने के लिए दार्शनिक दृष्टि से, मैं, जग और जीवन से घटनाक्रम को देखता-समझता और परखता रहा हूँ। और उनका मानवीय मूल्यांकन उसी के बल पर करता रहा हूँ। ऐसी रही है मेरी प्रगतिशीलता- इसी से बनी है मेरी मानसिकता- यही मानसिकता कविताओं में व्यक्त हुई है। इसलिए यह कविताएँ न क्षणिक अनुभूति की प्रामाणिकता की पुत्रियाँ हैं, न अकेलेपन की निजता की राजकुमारियाँ।"

इस इकाई में उनकी पाँच प्रतिनिधि कविताओं को अध्ययन के निमित्त रखा गया। वे कविताएँ हैं- 'बाप बेटा बेचता है', 'जनता', 'धरती', 'आग लगे इस रामराज में' और 'आयोग'। 'बाप बेटा बेचता है' और 'जनता' कविता काव्य संग्रह 'जो शिलाएँ तोड़ते हैं' में संकलित हैं। 'बाप बेटा बेचता है' शीर्षक कविता में साम्राज्यवादी अर्थनीति के परिणामस्वरूप गुलामी की जंजीरों में जकड़े देश की गुलाम जनता सामान्य मनुष्य की तरह सहज जीवन जीने से वंचित हो गई थी। वह अपनी दासता और कंगाली की स्थिति में अपनी क्षुधापूर्ति के लिए अपने संतानों को बेचने पर विवश कर दी गई थी। यह विवशता जनता की अंतिम विवशता थी। अपने प्रेम को सिक्के से हल्का होता देखकर उसके मन में क्रांति की आग दहक रही थी। इस दासता से उबड़ने का उसने मन बना लिया था। 'जनता' कविता में कवि जनता को सत्य की भार्या/जीवनसंगिनी और जागरण की जननी कह कर जनता की शक्ति और सामर्थ्य का विवरण देते हैं। यह साम्राज्यवादी लिप्सा के आतंक से त्रस्त जनता में बल का संचार करने का कवि का उद्यम भी हो सकता है। यह अकाट्य सत्य है कि किसी भी राष्ट्र का अस्तित्व उसकी जनता से ही होता है। कवि ने जनता को अमर और महा शक्तिशाली घोषित किया है। सत्ताधीशों और शोषकों को यह याद रखना चाहिए कि जनता में सत्ता को पलटने की शक्ति है। इसलिए जनता कभी नहीं मरती है। 'धरती' कविता काव्य संग्रह 'गुलमेंहदी' में संकलित है। इस कविता में कवि की उद्घोषणा है कि धरती केवल किसान की है। यह जनता की सफलता की भी घोषणा है कि जो जोत रहा है, जमीन उसी की है। सूर्योदय, सूर्यास्त, बादल और प्रलय का रूप धरे सागर- इन सबने खूब प्रयत्न किए पर धरती को न पा सके। धरती न भगवान की है, न राजा की न किसी रंक की ही है। किसान और धरती का संबंध वैसे ही है जैसे शरीर और आत्मा का या वायु और साँसों का। धरती और किसान- इन दोनों का जीवन एक दूसरे के साथ ही है। 'आग लगे इस रामराज में' कविता 'कहें केदार खरी-खरी' काव्य संग्रह में संकलित है। रामराज के संदर्भ को पहले देख लें। एक स्वतंत्रता प्रेमियों के द्वारा आजाद भारत का स्वप्न रामराज के रूप में देखा गया था। दूसरा जब अंग्रेज़ भारत में डाक, रेल और शिक्षा व्यवस्था का विस्तार कर रहे थे तब भारतेन्दु युग में कुछ कवियों ने महारानी विक्टोरिया का गुणगान किया और अंग्रेजों के शासन को सुशासन कहा था (केवल इसी संदर्भ में)। जल्दी ही उन कवियों को साम्राज्यवादी अर्थनीति की भनक लग गई और वे अपनी रचनाओं के माध्यम से इसकी खिलाफत करने लगे। इन दोनों तरह के रामराज में गरीबों की थाली खाली रही। उनके पेट पीठ से सटे रहे। उनके मुँह का कौर छीन लिया गया। अमीर और गरीब का भेद बना रहा। उन्हें प्राप्त सुविधाओं और अधिकारों का अंतर नहीं मिटा। गरीब भूखे पेट अमीरों की महफिलों में उनके शानोशौकत का इंतजाम करते रहे। अमीरों को गरीबों की सुध कभी आई ही नहीं। ऐसे स्वार्थी और क्रूर रामराज आग लग जाने के ही काबिल हैं। कवि केदारनाथ ने तुलसी प्रदत्त रामायण के रामराज का एक अर्थ वास्तविक जीवन से पलायन भी लगाया है (मुगल काल के संदर्भ में)। अगली कविता है 'आयोग'। यह कविता 'मार प्यार की थापें' काव्य संग्रह से ली गई है। वहाँ शीर्षक के रूप में कविता की पहली पंक्ति 'चलनी चालते हैं आयोग' दिया गया है। 'केदारनाथ अग्रवाल संचयिता' पुस्तक में यह कविता 'आयोग' शीर्षक से ही है। इस कविता में आजाद भारत में राजनेताओं की कार्यपद्धति पर आयोग की कार्यनीति के

माध्यम से व्यंग्य किया गया है। इस स्वराज्य का सपना शहीदों ने कभी नहीं देखा था कि अपने राज में बात-बात पर आयोग बिठाया जाएगा और उनकी जांच पद्धति में दोषी साफ छूटते जाएँगे। समाज के लिए उपयोगी और हितकारी साबित कर दिए जाएँगे।

5.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. कवि केदारनाथ अग्रवाल भयावह यथार्थ, अवसरपरक राजनीति के साथ प्रेम और प्रकृति के अनूठे शब्द चित्रकार हैं।
2. कवि के अनुसार रचना की मौलिकता युग और यथार्थ से जुड़े रहने से संभव होती है। व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक चिंतन भी तभी अपना पक्ष रचना में प्रबलता से प्रस्तुत कर सकता है तथा अपनी भाषिक दक्षता एवं संप्रेषणीयता का स्तर लोक से जुड़ा हुआ पाता है। कविता आत्मतुष्टि का साधन नहीं है, वह लोकमंगल का संधान है।
3. यथार्थ का मर्म उद्घाटित करनेवाली उनकी कविताओं में विश्लेषणात्मक आलोचना दृष्टि की प्रधानता रही है। जीवन की छोटी-से-छोटी घटनाओं की तह खंगालने के बाद जिस सच्चाई से उनका सामना हुआ, उसे उन्होंने अपनी कविता का आधार बनाया।
4. प्रगतिशील होने का अर्थ है अपनी लगन में आगे बढ़ते रहना यानी धुन के पक्के होना। साथ में शर्त यह कि धुन विकृतिरहित और सकारात्मक हो। कवि केदारनाथ के शब्दों में 'प्रगतिशील कवि भी जीवन में उदास और आहत होते हैं। लेकिन इससे बढ़कर एक बात यह है कि हम डूबने से बच गए। हम उसको (निराशा के क्षणों को) अमूल्य नहीं समझ बैठे और न हमने अपने को दीनता, दुर्बलता और दुराशा के हाथ बेचा।'
5. इनकी कविताओं के इतिहास को प्रगतिशील कविता के इतिहास के रूप में देखा जाता है।
6. इनकी रचनाओं में प्रयुक्त कथ्य, भाषा और शिल्प सहज-सरल और संप्रेषणीय है। बिंबधर्मिता को इन्होंने अपनाया है। अलंकारों के प्रति आग्रह नहीं है पर उन्हें रचना में खोजा जा सकता है। कविताएँ लयात्मक और प्रवाहपूर्ण हैं। शब्द संयोजन उत्कृष्ट कोटि का है।
7. इन्होंने कथ्य को लोगों के बीच से उठाया है और उसे संप्रेषित करने में व्यंग्य तत्व की प्रधानता रखी है। साथ ही यह स्पष्ट किया है कि प्रगतिशील कवि होने का अर्थ यह नहीं है कि केवल व्यंग्य और राजनीति पर ही लिखा जाए। प्रकृति, प्रेम और उत्सव पर केंद्रित रचनाएँ भी प्रगतिशील कविता की श्रेणी में आती हैं। जो रचना पराजय, पलायन और निराशा के भाव से मुक्त है वह प्रगतिशील प्रवृत्ति की रचना है। नामवर सिंह ने कहा भी है कि व्यंग्य दो ही कवियों ने लिखे हैं, 'नागार्जुन और केदार'।

5.6 शब्द संपदा

1. उर = हृदय
2. कौर = भोजन का निवाला

3. नवाजा = दिया गया
4. भार्या = अर्धांगिनी
5. मढ़ना = चढ़ाना
6. विक्रम संवत = 57वर्ष = ई. (उदाहरण (संवत 1968 - 57=1911))
7. शिला = पत्थर
8. शूल = काँटा
9. साहित्येतर कला = साहित्य से इतर कला (चित्रकला, संगीत, अभिनय इत्यादि)

5.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में अभिव्यंजित यथार्थ को स्पष्ट कीजिए।
2. 'किसान' के प्रति कवि की काव्य दृष्टि की संवेदनशीलता का परिचय दीजिए।
3. जनता के संदर्भ में कवि के विचारों को स्पष्ट करते हुए उसके पक्ष या विपक्ष में अपना तर्क दें।
4. क्या आप कवि की रचना प्रक्रिया से परिचित हैं? यदि हाँ तो सविस्तार उत्तर दें।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. कवि केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं में निहित व्यंग्य और राजनीति को स्पष्ट कीजिए।
2. 'बाप बेटा बेचता है' कविता में व्यंजित संदर्भ का उल्लेख करें।
3. केदारनाथ अग्रवाल की अध्येय कविताओं की काव्यगत विशिष्टताओं का उल्लेख करें।
4. केदारनाथ अग्रवाल की पाँच प्रतिनिधि कविताओं का समीक्षात्मक विश्लेषण करें।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. केदारनाथ अग्रवाल की कविताओं की प्रवृत्ति कैसी है? ( )
   (अ) प्रयोगवादी (आ) छायावादी (इ) प्रगतिशील (ई) सभी
2. 'आग लगे इस रामराज में' कविता का रचनाकाल (वर्ष) क्या है? ( )
   (अ) 1951 (आ) 1911 (इ) 1851 (ई) 1953

3. 'आयोग' कविता का रचनाकाल (वर्ष) क्या है? ( )

(अ) 1978 (आ) 1989 (इ) 2000 (ई) 1968

4. 'जनता' कविता का रचनाकाल (वर्ष) क्या है? ( )

(अ) 1945 (आ) 1931 (इ) 1946 (ई) 2015

II रिक्त स्थानों की पूर्ति किजिए -

1. ..... कविता 'मार प्यार की थापें' में संकलित है।
2. ..... काव्य संग्रह में 'जनता' कविता संकलित है।
3. "हिंदी की कविता न ..... की प्यासी है, न ..... की इच्छुक है; और न ..... की तुकांत पदावली की भूखी है।
4. ..... ने केदारनाथ अग्रवाल के कुछ काव्य संग्रहों का संपादन किया है।

III सुमेल कीजिए -

1. फूल नहीं रंग बोलते हैं	(अ) साहित्य अकादमी पुरस्कार
2. युग की गंगा	(आ) उपन्यास
3. पतिया	(इ) 1947
4. देश देश की कविताएँ	(ई) सोवियतलैंड नेहरू पुरस्कार
5. अपूर्वा	(उ) अनुवाद

5.8 पठनीय पुस्तकें

1. जो शिलाएँ तोड़ते हैं : केदारनाथ अग्रवाल
2. गुलमेंहदी : केदारनाथ अग्रवाल
3. कहें केदार खरी खरी: केदारनाथ अग्रवाल
4. मारें थाप प्यार की : केदारनाथ अग्रवाल
5. मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य : रामविलास शर्मा
6. आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ : नामवर सिंह

इकाई 6 : नागार्जुन : एक परिचय

रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 मूल पाठ : नागार्जुन : एक परिचय
6.3.1 जीवन परिचय
6.3.2 रचना यात्रा
6.3.3 काव्यगत विशेषताएँ
6.3.4 हिंदी साहित्य में नागार्जुन का स्थान
6.4 पाठ सार
6.5 पाठ की उपलब्धियाँ
6.6 शब्द संपदा
6.7 परीक्षार्थ प्रश्न
6.8 पठनीय पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! नागार्जुन एक सशक्त प्रगतिशील कवि थे। पीड़ित और शोषित समाज के प्रति उनकी गहरी संवेदना थी। वे किसानों और मजदूरों के साथ सक्रिय रूप से खड़े होते थे। वे उनके हर संघर्ष में साथ देते थे। उनकी रचनाओं में भी आप इस प्रवृत्ति को भलीभाँति देख सकते हैं। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से युवा पीढ़ी को सचेत करते थे। वे सर्वहारा के पक्ष में खड़े रहते थे। उनकी रचनाओं में हम उनकी दृष्टि और जीवन दर्शन को भी देख सकते है। नागार्जुन को समझने के लिए उनके व्यक्तित्व और रचना यात्रा से परिचित होना ही पड़ेगा।

6.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई के अध्ययन से आप -

- नागार्जुन के व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।
- नागार्जुन की रचना यात्रा से परिचित हो सकेंगे।
- नागार्जुन के काव्य की पृष्ठभूमि से अवगत हो सकेंगे।
- नागार्जुन की रचनाओं में निहित काव्यगत विशेषताओं को जान सकेंगे।
- नागार्जुन की काव्य-भाषा के स्वरूप को समझ सकेंगे।
- नागार्जुन की रचनाओं के माध्यम से उनके जीवन दर्शन को समझ सकेंगे।
- हिंदी साहित्य में नागार्जुन के स्थान एवं महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे।

6.3 मूल पाठ : नागार्जुन : एक परिचय

प्रिय छात्रो! हिंदी साहित्य में बाबा के नाम से प्रसिद्ध नागार्जुन का जीवन सरलरेखीय नहीं था। उनका जीवन अभावों से ग्रस्त था। उन्होंने अनेक संघर्ष किया। वे फक्कड़ स्वभाव के थे। आइए! उनके जीवन से संबंधित कुछ आयामों को जानने का प्रयास करेंगे।

6.3.1 जीवन परिचय

नागार्जुन का जन्म 30 जून, 1911 को वर्तमान मधुबनी जिले के सतलखा गाँव में हुआ था। वस्तुतः उनका पैतृक गाँव वर्तमान दरभंगा जिले का तरौनी था। इनके पिता गोकुल मिश्र घुमक्कड़ी प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। यही घुमक्कड़ी उन्हें विरासत में मिली। मनोहर शाम जोशी को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा है, "पिता का मन गाँव में लगता नहीं था। ज़मीन इतनी थी कि परिवार का पालन कर सकें, किंतु खेतीबारी में पिता का मन रमता नहीं था। बेकारी, घुमक्कड़ी उन्होंने अपनी इच्छा से अपना रखा था। मिथिला प्रदेश में उन दिनों रेल का चक्र-पथ टिकट मिला करता था, उसे पिता अकसर खरीदते और ठक्कन उनके साथ-साथ छुक-छुक गाड़ी में गोल-गोल घूमता। पिता ने ठक्कन को और कुछ न दिया हो, पाँव का सनीचर उत्तराधिकार में अवश्य दिया।" (नागार्जुन : रचना संचयन, भूमिका एवं चयन - राजेश जोशी, पृ.9 से उद्धृत)

नागार्जुन का वास्तविक नाम बैद्यनाथ मिश्र था। पिता गोकुल मिश्र और माँ उमा देवी को लगातार पाँच संतानें हुईं और होते ही चल बसीं। गोकुल मिश्र बैद्यनाथ धाम जाकर मन्नत माँगने के बाद छठे संतान के रूप में नागार्जुन का जन्म हुआ। बाबा बैद्यनाथ का आशीर्वाद मानकर उस बच्चे का नामकरण बैद्यनाथ किया गया था। पर गाँव और घर वालों को यह भय सताता रहा कि बालक बैद्यनाथ एक न एक दिन माँ-बाप को ठगकर चला जाएगा। "तब उसे 'ठक्कन मिसिर' कहकर पहले से ही कलेजा पोढा क्यों न कर लिया जाए। तो शिशु बैद्यनाथ गाँव घर के लिए ठक्कन मिसिर हो गया।"

बोध प्रश्न

- नागार्जुन को 'ठक्कन मिसिर' का नाम कैसे पड़ा?

नागार्जुन का बचपन अभावों में ही बीता। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा - "ठक्कन का बचपन ठुकराए जाने की यादों से भरा हुआ है।" बचपन के तिक्त अनुभव उनके अंतःकरण के हिस्से बन गए। रवींद्रनाथ ठाकुर पर लिखी कविता में कुछ पंक्तियों से इसका आभास हो जाता है -

पैदा हुआ था मैं
दीन हीन अपठित किसी कृषक कुल में
आ रहा हूँ पिता अभाव का आसव ठेठ बचपन से।

नागार्जुन की आरंभिक शिक्षा घर पर ही 'लघु सिद्धांत कौमुदी' और 'अमरकोश' के सहारे आरंभ हुई। उस जमाने में मिथिलांचल में एक रिवाज प्रचलन में था। वहाँ के धनी एक निर्धन

मेधावी छात्र को आश्रय देकर उसे पढ़ाते थे। एक साक्षात्कार में बाबा ने इस बात को उजागर किया - "1914 में मेरा सहपाठी था कृष्णकांत। उसके मामा जयनाथ ने उससे कहा - 'अरे कृष्णकांत, तुम अपने गाँव से किसी तेज छात्र को लाओ। इस स्कूल में कोई भुसकौल विद्यार्थी न रहे।' तो इस तरह मैं वहाँ पहुँच गया। पिता का जो एक-दो पैसा खर्च होता था, वह भी खत्म। वहाँ मैं दो साल रहा।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.35)। इस तरह उनकी पढ़ाई चलती रही। ज्यादातर स्वाध्याय पद्धति से ही उनकी शिक्षा आगे बढ़ी। कहा जाता है कि राहुल सांकृत्यायन के 'संयुक्त निकाय' का अनुवाद पढ़कर उनके भीतर यह इच्छा जगी कि इस ग्रंथ को मूल भाषा अर्थात पालि में पढ़ा जाए। इसके लिए वे लंका चले गए और वहाँ वे स्वयं पालि पढ़ते थे तथा मठ के भिक्षुओं को संस्कृत पढ़ाते थे। यहीं उन्होंने बौद्ध धर्म की दीक्षा ले ली।

बोध प्रश्न

- मिथिलांचल में कैसा रिवाज प्रचलन में था?

नागार्जुन बचपन से ही फक्कड़ और घुमक्कड़ी प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। गाँव में उनका मन कभी नहीं रमा। अपने पारिवारिक परिवेश और गृहस्थी के संबंध में उनका यह कथन सुनिए - "ऐसा होता है कि स्थायित्व में आजीविका के स्रोत का बहुत बड़ा हाथ होता है। हमने नौकरी की ही नहीं, तब स्थायी गृहस्थी कैसे होती! पत्नी गाँव में ही रहीं। जमीन है। ब्राह्मणी का मन लगता है वहाँ। उसके वहाँ रहते कुछ प्राप्त हो ही जाती जमीन से। हमारा खेती में मन नहीं। गाँव जाते रहते हैं। लेकिन एक जो वह लगातार निरंतर गृहजीवन होता है, वह हमारा हुआ नहीं। कभी ये कभी वो, उसमें पचास झंझट हैं। हमारी अपनी घुमक्कड़ी की पचासों ललक हैं।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.183)। घुमक्कड़ होने का यह मतलब नहीं कि नागार्जुन घरेलू आदमी नहीं हैं। वे जहाँ रहते हैं वहाँ घर का माहौल बन जाता था। उन्हें बच्चे बहुत अच्छे लगते थे।

'नागार्जुन रचनावली' में शोभाकांत ने लिखा है कि "1911 ई. की ज्येष्ठ पूर्णिमा को निहायत मामूली और अपढ़ परिवार में जन्मे बैद्यनाथ मिश्र अपने ग्रामीण परिवेश में संस्कृत की पारंपरिक पढ़ाई करते समय समस्यापूर्ति शैली से साहित्य कर्म शुरू कर हिंदी की नागार्जुन और मिथिला के यात्री हो गए।" वे बौद्ध भिक्षु भी बने। इस संदर्भ में नागार्जुन कहते हैं, "हल्की दीक्षा ले ली। दीक्षा दो तरह की होती है, हल्की और पक्की।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.177)। उनके अनुसार भिक्खु जीवन में घूमने का बड़ा सुख रहता है।

गाँव का ठक्कन भिक्खु नागार्जुन बन गए। इसके बावजूद उनके पैर कहीं नहीं ठिके। बिहार लौट आए। समाचार पत्रों में भारतीय आजादी की खबरें पढ़ते थे और भड़क उठते थे। दीक्षा लेकर भिक्खु तो बन गए लेकिन समाचार पत्र पढ़-पढ़कर सुभाष चंद्र बोस के भगत बन गए। उस समय स्वामी सहजानंद बिहार में किसान आंदोलन चला रहे थे। 'अमृतबाजार' पत्रिका में स्वामी जी के 'लट्ठ हमारी जिंदाबाद' पढ़कर बाबा ने उन्हें एक पत्र लिखा तो उत्तर में स्वामी जी ने लिखा कि "क्या करोगे पुरातत्व का, पुरालेख का, नए तत्व से जूझो, नए लेख को बाँचो।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.178)। इन बातों का प्रभाव नागार्जुन के मन पर गहरा पड़ा। उनके मन के किसी

कोने में यह बात घर कर गई कि वर्तमान से मुँह मोड़कर अतीत में भागना ठीक नहीं। बस स्वामी जी के साथ आंदोलन में कूद पड़े। उन्होंने अपनी सक्रिय भागीदारी निभाई। साथ ही साहित्य सृजन भी करते रहें।

प्रिय छात्रो! आप अब तक नागार्जुन के व्यक्तित्व के बारे में जान ही गए होंगे। वे पाखंड को पसंद नहीं करते। विक्षोभ और विद्रोह का तेवर उनके व्यक्तिगत जीवन में भी देख सकते हैं और साहित्य में भी। उनके तेवर को 'नागार्जुनी तेवर' कहें, तो गलत नहीं होगा। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा, "गलत बात को हम गलत कहते हैं। झगड़ा होता हो, हो। आपने ठप्पा लगाया, मैंने भी बगैर पूछे लगा दिया। आपने कहा अँगूठा टेको, हमने अँगूठा टिका दिया - यह हम से नहीं होता।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.181)। बाबा गरीबों के पक्षधर थे। वे गरीब किसानों, मजदूरों और हरिजनों का उद्धार चाहते थे। वे यही चाहते थे कि उनको खाने-पीने को मिले, वे अच्छी तरह से रह सकें। वे बार-बार यही कहते थे कि "जो मानव-मात्र के लिए अच्छा हो, उसे रखो, शेष फेंक दो।" उनके विचारों को उनके साहित्य में भी देखा जा सकता है।

नागार्जुन का देहावसान 5 नवंबर, 1998 को लंबी बीमारी के बाद हुआ।

बोध प्रश्न

- गाँव का ठक्कन नागार्जुन कैसे बना?
- स्वामी सहजानंद के साथ मिलकर नागार्जुन किस आंदोलन में अपनी सक्रिय भागीदारी निभाई?

6.3.2 रचना यात्रा

प्रिय छात्रो! अब तक आप जान ही चुके हैं कि हिंदी साहित्य में बाबा के नाम से विख्यात नागार्जुन का वास्तविक नाम बैद्यनाथ मिश्र था। गाँव वाले उन्हें ठक्कन कहकर पुकारते थे। घुमक्कड़ी प्रवृत्ति के कारण उन्होंने अपना उपनाम 'यात्री' चुना। इस उपनाम के संबंध में उनका यह कथन द्रष्टव्य है - "जितना अधिक पढ़ते-बढ़ते गए, उतना अधिक यह मूड बना कि घूमना चाहिए। जब वह मूड बना तब 'यात्री' उपनाम रखा। प्रेरणा मिली रवींद्र की इन पंक्तियों से - 'पतन अभ्युदय बंधुर पंथा जुग-जुग धावित जात्री, तुमि चिर सारथी, तव रथ-चक्रे मुखरित दिन रात्री।' इसमें जात्री ही बोला जाता है। 'ज' और 'य' का रहस्य बता देता हूँ, काम देगा।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.170)। नागार्जुन इसी नाम से मैथिली में कविता लिखते थे। 1929 में पहली मैथिली कविता 'मिथिला' नामक मासिक में प्रकाशित हुई। उनकी कुछ मैथिली कविताएँ हैं - अंत-श्रवण का यह मेघ, पका है यह कटहल, गोल कर ही डाला, न आए रात भर मेल ट्रेन। मैथिली कविता एक अंश देखें -

बइसल बइसल मेल ट्रेनक प्रतीक्षामेँ
बहार भए गेल आँखिक सूत
घंटा भरि लेट
आधा घंटा आओर लेट (जूनि अबउ भरि रति मेल ट्रेन)

[हिंदी अनुवाद : बैठा बैठा मेल ट्रेन की प्रतीक्षा में/ बाहर निकल आए हैं आँखों के डोरे/ घंटा भर लेट/ आधा घंटा और लेट (न आए रात भर मेल ट्रेन)।]

छात्रो! यह तो हुई 'यात्री' की बात। अब जरा 'नागार्जुन' के बारे में भी बात कर लें।

बोध प्रश्न

- यात्री उपनाम कैसे पड़ा?

मैथिली के 'यात्री' हिंदी साहित्य के लिए नागार्जुन हैं। हिंदी की पहली कविता 'राम के प्रति' (अनुपलब्ध) 1933 में लाहौर से प्रकाशित होने वाली साप्ताहिक 'विश्वबंधु' में प्रकाशित हुई। वैदेह के नाम से भी वे रचनाएँ लिखते थे। तो कुल मिलाकर बाबा, वैद्यनाथ मिश्र, ठक्कन, वैदेह, यात्री और नागार्जुन थे। इतने सारे नाम-उपनाम! इस संबंध में जब रामवचन राय ने उनसे पूछा तो बाबा हँसते हुए कहने लगे, "बहुत गड़बड़ हुआ है, ज्यादा नाम से। बेनीपुरी (रामवृक्ष बेनीपुरी) ने '45 में कहा है कि एक ही रखिए। तब से हम शुद्ध नागार्जुन है।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.170)

बोध प्रश्न

- किसके कहने पर नागार्जुन ने सिर्फ एक ही नाम का प्रयोग करने लगे?

हिंदी के साथ-साथ संस्कृत, मैथिली, बांग्ला और सिंहली में भी नागार्जुन ने कविताएँ लिखी हैं। यहाँ सिर्फ हिंदी रचनाओं की ही चर्चा करेंगे। 'युगधारा' (1953), सतरंगे पंखोंवाली (1959), 'प्यासी पथराई आँखें' (1962), 'तालाब की मछलियाँ (1974), 'तुमने कहा था' (1980), 'खिचड़ी विप्लव देखा हमने' (1980), 'हजार-हजार बाँहों वाली' (1981), 'पुरानी जूतियों का कोरस', 'रत्नगर्भ' (1984), 'ऐसे भी हम क्या! ऐसे भी तुम क्या!!' (1985), 'आखिर ऐसा क्या कह दिया मैंने' (1986), 'इस गुब्बारे की छाया में' (1990), 'भूल जाओ पुराने सपने' (1994), 'अपने खेत में' (1997) आदि उनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं। 'भस्मांकुर' और 'भूमिजा' प्रबंध काव्य हैं।

'रतिनाथ की चाची' (1948), 'बलचनमा' (1952), 'नयी पौध' (1953), 'बाबा बटेसरनाथ' (1954), 'वरुण के बेटे', 'दुखमोचन', 'कुंभीपाक', 'उग्रतारा', 'जमनिया का बाबा' और 'गरीबदास' प्रमुख उपन्यास हैं। 'आसमान में चंदा तैरे' कहानी संग्रह है तो 'एक व्यक्ति : एक युग' संस्मरण। 'अन्नहीनम् क्रियाहीनम्' और 'बम्भोलेनाथ' निबंध संग्रह हैं। 'कथा मंजरी भाग 1, भाग 2', 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम' और 'विद्यापति की कहानियाँ' उनके बाल साहित्य हैं।

छात्रो! नागार्जुन ने साहित्य के हर विधा में लेखन किया है। उनके साहित्य का फलक बहुत विस्तृत है। वे सही अर्थों में जनवादी भारतीय साहित्यकार हैं। नागार्जुन साहित्य अकादमी पुरस्कार, भारत भारती सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, राजेंद्र शिखर सम्मान, साहित्य अकादमी की सर्वोच्च फेलोशिप तथा राहुल सांकृत्यायन सम्मान से सम्मानित हो चुके हैं।

छात्रो! अब हम उनकी काव्य कृतियों पर संक्षिप्त चर्चा करेंगे।

युगधारा : नागार्जुन दीन-हीन जनता के पक्षधर थे। वे उन गरीब किसानों, मजदूरों और हरिजनों की आवाज थे जो समाज के पूँजीपति वर्ग द्वारा पीड़ित हैं। नागार्जुन उनके साथ रहकर उनकी पीड़ा का अनुभव किया था। उन्होंने उसी पीड़ा को काव्य के रूप में अभिव्यक्त किया। उन्होंने अपनी पहली काव्य कृति 'युगधारा' में किसानों के प्रति गहरे लगाव को दर्शाया है। 'रवि ठाकुर' शीर्षक कविता की पंक्तियाँ देखें जिनसे यह स्पष्ट होता है कि अभावों में जीता हुआ व्यक्ति अपने जीवन यापन के चक्र में इस तरह फँसा हुआ होता है कि उसे किसी दलगत राजनीति में पड़ने के लिए भी समय नहीं रहता। यथा-

पैदा हुआ था मैं-
दीन-हीन-अपठित किसी कृषक कुल में
आ रहा हूँ पीता अभाव का आसव ठेठ बचपन से

xxxxx

मेरा क्षुद्र व्यक्तित्व, रुद्ध है सीमित है-
आटा-दाल-नमक-लकड़ी के जुगाड़ में !

नागार्जुन ने मनोहर शाम जोशी से बातचीत करते समय यह स्पष्ट कहा, "हम सर्वहारा के साथ हैं, अपनी राजनीति में, अपने साहित्य में, किंतु हमें इस विषय में किसी की लगाई क़ैद मंजूर नहीं। हम गरीब किसान के साथ हैं, गरीब मजदूर के साथ हैं, हरिजन के साथ हैं, इनका उद्धार हो ऐसा हम चाहते हैं।" (मेरे साक्षात्कार, पृ.181)। वे हमेशा यही चाहते थे कि गरीब किसानों एवं मजदूरों का एक स्वतंत्र अस्तित्व हो। गरीबी के कारण ये लोग अपने बच्चों को शिक्षित नहीं कर पाते। ऐसे में यदि गूँगी और बाहरी हो तो! वह स्थिति और भी पीड़ादायक होगी। इसका चित्रण 'जया' शीर्षक कविता में देखा जा सकता है -

कैसा असह्य, कितना जर्जर
यह मध्यवर्ग का निचला स्तर!
मैंने झाँका तो यह देखा-
बाहर सफेद, अंदर धुँधला
क्या कर सकता वह बाप भला
बहरी-गूँगी उस बच्ची की शिक्षा-दीक्षा का इन्तजाम।

'कैसा असह्य', 'कितना जर्जर', 'मध्यवर्ग का निचला स्तर', 'बाहर सफेद', 'अंदर धुंधला' जैसे प्रयोग निस्सहाय स्थिति को मुखर रूप से व्यक्त करते हैं। नागार्जुन की भाषा में श्रमिक वर्ग से जुड़ाव को सहज अभिव्यक्तियों के रूप में देखा जा सकता है। वे निरंतर शोषकों के प्रति आक्रोश व्यक्त करते हैं। पर इसका अर्थ यह नहीं कि वे सारा दिन, सारी रात, साल-दर-साल निरंतर नफरत में ही सुलगते रहते हैं। इसीलिए 'पक्षधर' शीर्षक कविता के माध्यम से वे कहते हैं-

राह में रोड़े पड़े हैं अमित-अगणित
उन्हीं से अतलान्त गह्वर पाट डालो।

अन्यथा-
कुछ भी नहीं तुम कर सकोगे।

इसी प्रकार 'स्वदेशी शासक' शीर्षक कविता की कुछ पंक्तियाँ देखें जिनमें अभावग्रस्त जीवन जी रहे लोगों का चित्रण है जो भूख से पीड़ित हैं। साथ ही अनेक रोगों से ग्रस्त हैं -

हमारी जनता की भूखी आँतों को कब तक थामें?
जय जय हे कोसी महरानी!
जय जय जयति मलरिया मइया!
जय जय हे काला बुखार, पेचिश, संग्रहणी!
जय जय हे यमदूत, दीनजन बन्धु दयासागर करुणामय!
तुम सुनते हो जब न कहीं कोई सुनता है!!
हमें, हमारे घरवालों को, पड़ोसियों को दो छुटकारा
शीघ्र मुक्ति दो इस रौरव से
जहाँ न भरता पेट, देश वह कैसा भी हो, महानरक है

बोध प्रश्न

- नागार्जुन किसके पक्षधर हैं?
- नागार्जुन किसके प्रति आक्रोश व्यक्त करते हैं?

सतरंगे पंखोंवाली : इस संकलन की अधिकांश रचनाएँ 1956-58 की हैं। यात्री प्रकाशन से प्रकाशित इस संग्रह में बहुत दिनों के बाद, अकाल और उसके बाद, तन गई रीढ़, नीम की दो टहनियाँ, सौंदर्य-प्रतियोगिता, कालिदास, चातकी, सिंदूर तिलकित भाल, दंतुरित मुस्कान जैसी कविताएँ सम्मिलित हैं। इनमें कुछ कविताएँ कवि की वैयक्तिक जीवन को उजागर करती हैं तो कुछ उनके समाज के प्रति चिंता को उकेरती हैं।

'अकाल और उसके बाद' शीर्षक कविता में नागार्जुन ने अकाल की भीषण स्थिति का अंकन किया है। हमारा देश कृषि प्रधान देश है। किसान वर्षा पर ही आधारित रहते हैं। यदि बाढ़ आए तो भी किसानों की स्थिति दयनीय हो जाती है और अकाल में भी क्योंकि अतिवृष्टि और अनावृष्टि दोनों ही स्थितियाँ कृषि के लिए हानिकारक हैं। अकाल के समय अनाज का अभाव होता है। जब घर में अनाज नहीं होगा तो मनुष्य के साथ-साथ पशु-पक्षियों की स्थिति भी दयनीय हो जाती है। नागार्जुन कहते हैं कि अकाल स्थिति में कई दिनों तक चूल्हा रोता है और चक्की उदास रहती है। एक कानी कुतिया उसके पास लाचार होकर पड़ी रहती है। एक ओर छिपकलियों की गश्त है तो दूसरी ओर चूहों की हालत शिकस्त होती है। जब अनाज घर में आता है तो घर की आँखें चमक उठती हैं -

कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद

धुआँ उठा आँगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आँखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पाँखें कई दिनों के बाद।

छात्रो! ध्यान देने की बात है कि इस कविता में कहीं भी मनुष्य का जिक्र नहीं है, लेकिन चूल्हा और चक्की के माध्यम से परोक्ष रूप से उसकी उपस्थिति का अहसास कराया गया है। मनुष्य के साथ रहने वाले कुत्ता, छिपकली, चूहा और कौए के माध्यम से नागार्जुन ने अकाल की दयनीय स्थिति को मार्मिक ढंग से व्यक्त किया है। इस कविता में संवेदना मनुष्य के साथ-साथ मानवेतर प्राणियों के लिए भी प्रकट होती है।

छात्रो! नागार्जुन यायावरी थे। उनके पैर एक जगह नहीं टिकते थे। वे घर-परिवार से दूर यात्राओं में समय बिताते थे। जब कोई अपने घर से दूर होते हैं तो स्वाभाविक है कि उन्हें घर की याद सताती है। नागार्जुन को भी घर की याद आती थी। 'सिंदूर तिलकित भाल', 'दंतुरित मुस्कान', 'खुरदरे पैर' आदि कुछ कविताओं में उनके वैयक्तिक जीवन अंकित है। उनकी प्रसिद्ध कविता 'सिंदूर तिलकित भाल' का अंश द्रष्टव्य है -

घोर निर्जन में परिस्थिति ने दिया है डाल!
याद आता है तुम्हारा सिंदूर तिलकित भाल!
कौन है वह व्यक्ति जिसको चाहिए न समाज?
कौन है वह एक जिसको नहीं पड़ता दूसरे से काज?

इस संकलन में सम्मिलित कविता 'दंतुरित मुसकान' अपने ही पुत्र शोभाकांत की पहली भेंट पर मोहित पिता की अभिव्यक्ति है। कुछ पंक्तियाँ देखें -

तुम्हारी यह दंतुरित मुस्कान
मृतक में भी डाल देगी जान
×××
यदि तुम्हारी माँ न माध्यम बनी होती आज
मैं न सकता देख
मैं न पाता जान
तुम्हारी यह दंतुरित मुस्कान

पिता प्रवासी होने के कारण उसे अपने आत्मीय संबंधों से दूर जाने की पीड़ा सताती है -

चिर प्रवासी मैं इतर, मैं अन्य!
इस अतिथि से प्रिय तुम्हारा क्या रहा संपर्क?

बोध प्रश्न

- नागार्जुन ने अकाल और उसके बाद की स्थितियों को कैसे चित्रित किया है?
- किन कविताओं में नागार्जुन की वैयक्तिक जीवन को देखा जा सकता है?

खिचड़ी विप्लव देखा हमने : इस संग्रह में संकलित अधिकांश कविताओं में नागार्जुन की राजनैतिक एवं सामाजिक चेतना को देखा जा सकता है। वे पूछते हैं कि 'सत्ता की मस्ती में भूल गई बाप को?/ इंदु जी क्या हुआ आपको?' छात्रो! 1974 में पटना में छात्र आंदोलन शुरू हुआ था। इसे बिहार आंदोलन या जे.पी. आंदोलन के नाम से भी जाना जाता है। ध्यान देने की बात है कि शुरू-शुरू में छात्र ही इस आंदोलन के कर्ता-धर्ता थे। उनकी माँगें सुनने और पूरी करने के स्थान पर सरकार ने दमन की नीति अपनाई तो आंदोलन को आगे बढ़ाने के लिए कुशल नेतृत्व की जरूरत महसूस हुई। ऐसी स्थिति में छात्रों ने जयप्रकाश नारायण को चुना। वे 1942 की क्रांति के नायक माने जाते थे। उन्होंने उस आंदोलन का नेतृत्व किया। बिहार आंदोलन का नारा बना - 'हमला चाहे जैसा होगा, हाथ हमारा नहीं उठेगा।' नागार्जुन ने भी इस आंदोलन में सक्रिय भागीदारी निभाई। वे लिखते हैं - "एक और गांधी की हत्या होगी अब क्या?/ बर्बरता के भोग चढ़ेगा योगी अब क्या?/ पोल खुल गई शासक दल के महामंत्र की!/ जयप्रकाश पर पड़ीं लाठियाँ लोकतंत्र की।"

'खिचड़ी विप्लव देखा हमने' उनकी प्रसिद्ध क्रांति का आह्वान है। इस कविता में कवि गुहार लगाते हैं कि "खिचड़ी विप्लव देखा हमने/ भोगा हमने क्रांति विलास/ ×××/ तुम जनकवि हो, तुम्हीं बता दो/ खेल नहीं था, टक्कर था!"

'क्रांति सुगबुगाई है', 'अगले पचास वर्ष और', 'सूरज सहम कर उगेगा', 'अहिंसा', 'काश, क्रांति उतनी आसानी से हुआ करती', 'छोटी मछली शहीद हो गई' आदि अनेक क्रांतिकारी स्वर से युक्त कविताएँ इस संग्रह में संकलित हैं।

बोध प्रश्न

- छात्र आंदोलन का नेतृत्व जयप्रकाश नारायण ने क्यों किया?

6.3.3 काव्यगत विशेषताएँ

प्रिय छात्रो! अब तक आपने नागार्जुन के व्यक्तित्व और उनकी कुछ प्रमुख कविता संग्रहों के बारे में जान ही चुके हैं। लेकिन नागार्जुन के व्यक्तित्व को सही ढंग से समझने के लिए काव्यगत विशेषताओं को जानना जरूरी है। तो आइए, कुछ प्रमुख विशेषताओं की चर्चा करेंगे।

1. विसंगतियों का चित्रण

नागार्जुन समाज में व्याप्त विसंगतियों एवं विद्रूपताओं का चित्रण करते हैं। जनता के हित साधने के नाम पर लोग सेठ-साहूकारों के हित साधन में लगे हुए हैं। कुछ सत्ताधीशों के हाथों कठपुतली बनकर लोकतंत्र खोटा सिक्का बन चुका है। इस पर व्यंग्य करते हुए नागार्जुन कहते हैं कि -

डर के मारे न्यायपालिका काँप गई है
वो बेचारी अगली गति-विधि भाँप गई है
देश बड़ा है, लोकतंत्र है सिक्का खोटा

तुम्हीं बड़ी हो, संविधान है तुम से छोटा

स्वतंत्र भारत में जनहित के लिए अनेक योजनाएँ बनाई गईं। इन योजनाओं में पंचवर्षीय योजना भी एक है। भ्रष्टाचार के कारण ये योजनाएँ धीरे-धीरे धूल फाँकने लगीं। कागज तक सीमित रह गईं-

पाँच वर्ष की बनी योजना एक दो नहीं तीन
कागज के फूलों ने ले ली सबकी खुशबू छीन
बलिहारी कागजी खुशी की क्यों न बजाए बीन
कटे बाँध से बालू बोले हम भी हैं स्वाधीन

नागार्जुन जनता की आकांक्षाओं एवं सपनों को भलीभाँति जानते हैं। धोखाधड़ी और मक्कारी को वे सहन नहीं कर पाते। स्वतंत्रता से पहले और बाद की स्थितियों को उन्होंने नजदीकी से देखा। इसीलिए वे कहते हैं -

देश हमारा भूखा-नंगा घायल है बेकारी से,
मिले न रोटी-रोजी, भटके दर-दर बने भिखारी से,
स्वाभिमान सम्मान कहाँ हैं, होली है इंसान की,
बदला सत्य अहिंसा बदली लाठी, गोली, डंडे है,
निश्चय राज बदलना होगा शोषक नेताशाही का,
पद-लोलुपता दलबंदी का, भ्रष्टाचार तबाही का।

नागार्जुन राजनेता के छद्म का भी पर्दाफाश करते हैं। नेहरु, इंदिरा गांधी, मोरारजी देसाई से लेकर बर्तोल्त ब्रेख्त तक अनेक नेता उनके काव्य के एल्बम में उपस्थित हुए हैं।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन क्या नहीं सहन कर पाते थे?
- नागार्जुन के अनुसार सत्ताधीशों के हाथों कठपुतली बनकर लोकतंत्र क्या बन गया था?
- जनहित योजनाएँ क्यों धूल फाँकने लगीं?

2. जनक्रांति

नागार्जुन जनता के पक्षधर कवि हैं। उनकी चेतना निरीह, पिछड़े हुए, दुर्बल समुदाय की विवशताओं से ऊर्जा प्राप्त करती है। उन्हीं के शब्दों में कहें तो उन्हें "संघर्षशील जनता का विपन्न बहुलांश ही शक्ति प्रदान करता है।" (विजय बहादुर सिंह, नागार्जुन और उनका रचना संसार, पृ.11)। वे जन आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग लेते थे। 'दुश्मनों के लिए घृणा और दोस्तों से प्यार' उनका जीवन सिद्धांत है। वे उन लोगों को दुश्मन मानते थे जो निरीह जनता को परेशान करते थे। वे मुक्ति का सपना देखा करते थे। उनकी कविता में हर तरफ जनता की उपस्थिति को महसूस किया जा सकता है। उदाहरण के लिए उनकी कविता 'शासन की बंदूक' का यह अंश

देखिए। इसमें सत्ता द्वारा किए जा रहे दमन का चित्रण तो है ही, साथ ही जनता के अदम्य साहस की अभिव्यक्ति भी है -

"खड़ी हो गई चाँप कर कंकालों की हूक
नभ में विपुल विराट-सी शासन की बंदूक
उस हिटलरी गुमान पर सभी रहे हैं थूक
जिसमें कानी हो गई शासन की बंदूक
सत्य स्वयं घायल हुआ, गई अहिंसा की चूक
जहाँ-तहाँ दगने लगी शासन की बंदूक
जली ठूँठ पर बैठ कर गई कोकिला कूक
बाल न बाँका कर सकी शासन की बंदूक

नागार्जुन की आशा-आकांक्षा का केंद्र जनता ही है। उनका स्वप्न जनता से शुरू होता है और जनता से ही अंत होता है। 'घिन तो नहीं आती है' शीर्षक कविता में वे अभिजात्य लोगों की मानसिकता और उनकी श्रेष्ठता ग्रंथि पर परिहास करते हैं और सफेद लिबास वालों से पूछते हैं -

कुली-मजदूर हैं
बोझा ढोते हैं, खींचते हैं ठेला
×××
सपने में भी सुनते हैं धरती की धड़कन
आकर ट्राम के अंदर पिछले डिब्बे में
बैठ गए हैं इधर-उधर तुम से सटकर
आपस की उनकी बतकही
सच-सच बतलाओ,
नागदार तो नहीं लगती है?
जी तो नहीं कुढ़ता है?
घिन तो नहीं आती है?

बोध प्रश्न

- नागार्जुन की आशा-आकांक्षा के केंद्र में कौन है?
- 'हरिजन गाथा' शीर्षक कविता में किसकी मानसिकता पर परिहास किया गया है?

3. प्रतिबद्धता

नागार्जुन के काव्य-व्यक्तित्व की सबसे महत्वपूर्ण पक्ष प्रतिबद्धता है। अपनी कविता 'प्रतिबद्ध हूँ' में उन्होंने प्रतिबद्धता, संबद्धता और आबद्धता को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया है -

प्रतिबद्ध हूँ
संबद्ध हूँ
आबद्ध हूँ
प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ, प्रतिबद्ध हूँ -
बहुजन समाज की अनुपल प्रगति के निमित्त -
संकुचित 'स्व' की आपाधापी के निषेधार्थ...
अविवेकी भीड़ की 'भेड़या-धसान' के खिलाफ़...
अंध-बधिर 'व्यक्तियों' को सही राह बतलाने के लिए...
अपने आप को भी 'व्यामोह' से बारंबार उबारने की खातिर...
प्रतिबद्ध हूँ, जी हाँ, शतधा प्रतिबद्ध हूँ!

इससे स्पष्ट है कि नागार्जुन हर पल संकुचित 'स्व' की आपाधापी का निषेध करते हैं। वे यह घोषणा करते हैं कि वे निरीह जनता को सही राह दिखाना चाहते हैं। वे अपने आपको व्यामोह से उभारना चाहते हैं। वे प्रतिबद्ध हैं अपनी जिम्मेदारियों के प्रति। 'जनतंत्र' से गायब होते 'जन' को वे सुरक्षित रखना चाहते हैं।

नागार्जुन अपनी कविता 'हरिजन गाथा' में यह कहते हैं कि -

ऐसा कभी नहीं हुआ था कि
एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं -
तेरह के तेरह अभागे -
अकिंचन मनुपुत्र
जिंदा झोंक दिए गए हों
प्रचंड अग्नि की विकराल लपटों में
साधन संपन्न ऊँची जातियों वाले
सौ-सौ मनुपुत्रों द्वारा!

बोध प्रश्न

- नागार्जुन किसके प्रति प्रतिबद्ध दिखाई देते हैं?
- नागार्जुन किसे सुरक्षित रखना चाहते हैं?

4. राजनीतिक व्यंग्य

नागार्जुन राजनीतिक व्यंग्य उत्पन्न करने के लिए काव्य रूपों के नए-नए प्रयोग करते हैं। जीवंत शैली, भाषा-वैविध्य, छंदों की अनेकविध प्रस्तुतियाँ नागार्जुन की कविता की विशेषताएँ

हैं। वे अपने आपको जनता के उत्तरदायी मानते हैं, न कि किसी विशेष राजनीतिक दल के। उन्होंने यह देखा की आजादी के बाद जनता का मोहभंग हुआ। उन्होंने शासन व्यवस्था पर खुलकर प्रहार किया। देश की जनता में आक्रोश और जागरूकता के सह-अस्तित्व को देखा जा सकता है। रामराज्य का सपना टूटना, जनता का पाशविक दमन, साम्राज्यवादी विरोध संग्राम, उसके आगे घुटने टेकने वाली नीति पर व्यंग्य करते हुए नागार्जुन कहते हैं कि

लाज शरम रह गई न बाकी गांधी जी के चेलों में।
फूल नहीं लाठियाँ बरसतीं रामराज्य की जेलों में॥
भैया लंदन ही पसंद हाई आजादी की सीता को।
नेहरू जी अब उम्र गुजारेंगे अंगरेजी खेलों में॥

गांधी जी के स्वयंसेवक 'बिड़ला की कोठी' में तैनात रहते हैं। नागार्जुन उन्हें 'धनकुबेर के अथिति... नहीं ही जननायक' कहकर पूँजीवादी तत्व को उजागर करते हैं। वे यह प्रश्न करते हैं कि -

गांधी जी का नाम बेचकर
बतलाओ कब तक खाओगे?
यम को भी दुर्गंध लगेगी,
नरक भला कैसे जाओगे?

आपातकाल के समय इंदिरा गांधी की तानाशाही पर भी वे खुलकर प्रहार करते हैं -

आपकी चाल-ढाल देख-देख लोग है ढंग
हुकूमती नशे का वाह-वाह कैसा चढ़ा रंग

'रामराज्य' कविता में कवि गांधी जी की रामराज्य की कल्पना पर व्यंग्य करते हैं –

रामराज्य में रावण अब की नंगा होकर नाचा है
भारत माता के गालों पर कसकर लगा तमाचा है।

नागार्जुन का राजनैतिक व्यंग्य वस्तुतः उनके आक्रोश और विद्रोही प्रवृत्ति का परिचायक है। आजादी के पहले और बाद की स्थितियों को उन्होंने बहुत नजदीक से देखा। अतः वे राजनेताओं के अवसरवादी चरित्र पर व्यंग्य करते हैं।

बोध प्रश्न

- स्वयंसेवकों पर नागार्जुन कैसे व्यंग्य करते हैं?

6.3.4 हिंदी साहित्य में नागार्जुन का स्थान

नागार्जुन की कविताओं में अनेक विषयों को देखा जा सकता है। उनकी कविताओं का फलक अत्यंत विस्तृत है। उनकी कविताओं में दीन-हीन मानव के साथ-साथ मानवेतर प्राणियों को भी देखा जा सकता है। खटमल से लेकर कानी कुतिया तक, शालवन से लेकर दरख्तों की सघन बागीचे में नवजात शिशुओं को पीठ पर लटकाए खड़े आदिवासी मजदूरों तक को देखा जा

सकता है। सिंदूर तिलकित भाल है तो दंतुरित मुस्कान, गुलाबी चूड़ियाँ और खुरदरे पैर भी हैं। आक्रोश से भरा हुआ व्यक्ति है तो कुपित स्वरों की मिश्रित अनुगूँज भी है। पैने दाँतों वाली है तो प्रेत का बयान भी है और थकित-चकित-भ्रमित-भग्न मन भी है। नागार्जुन सही अर्थों में जन पक्षधर कवि थे। मैनेजर पांडेय का यह कथन उल्लेखनीय है - "नागार्जुन ने हिंदी कविता की भूमि का विस्तार किया है। उन्होंने अनेक विषयों पर कविताएँ लिखीं जिन पर पहले हिंदी में कविता नहीं लिखी जाती थी। नागार्जुन की कविता में विभिन्न सामाजिक वर्गों, समुदायों और जातियों से लेकर जीव-जंतुओं तक के लिए जगह है। वे अपनी कविता की दुनिया रचते समय बाहर की दुनिया की विविधता और व्यापकता को बराबर ध्यान में रखते हैं।" (मैनेजर पांडेय, संकलित निबंध, पृ.164-165)

नागार्जुन की कविताएँ जनता के बीच से उगी व्यथाएँ हैं। उनके काव्य-नायक धीर गंभीर क्रांतिकारी नायक नहीं है। वह साधारण सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधि है। जब-जब नागार्जुन ने क्रांति का चित्र खींचा है तब-तब उन्होंने जनता की भूमिका को ही प्रमुख स्थान दिया है। वे आशावादी साहित्यकार थे। उन्होंने एक साक्षात्कार में इस बात को स्पष्ट किया कि "मैं शत-प्रतिशत आशावादी हूँ। मुझे भावी-भारत में अंधकार नहीं दीखता।" 'लो देखो चमत्कार' शीर्षक कविता की कुछ पंक्तियाँ ही देख लें -

गोबर, महकू, बलचनमा और चतुरी चमार
सब छीन ले रहे स्वाधिकार
आगे बढ़कर सब जूझ रहे
रहनुमा बन गए लाखों के
अपना त्रिशंकुपन छोड़
इन्हीं का साथ दे रहा मध्यवर्ग

नागार्जुन की काव्य-भाषा जनसाधारण की भाषा है। रामविलास शर्मा कहते हैं कि "हिंदी भाषा क्षेत्र के किसान मजदूर जिस तरह की भाषा आसानी से समझते और बोलते हैं, उसका निखरा हुआ काव्यमय रूप नागार्जुन के यहाँ है" तो राजेश जोशी कहते हैं कि "उनकी भाषा में माटी की गंध और गंगा तट का ही संगीत नहीं, शिप्रा के तट की मालवी मिठास और बेतवा के तट की बुंदेली ठसक भी सुनाई पड़ती है।" यह इसलिए संभव हुआ, क्योंकि नागार्जुन राजमहलों में बैठकर कविता नहीं लिखते। जब कभी ग्रामांचलों के किनारे बसी हुई दलित बस्तियों के अंदर अथवा महानगरों के छोर पर बहती गंदे नालों के इर्द-गिर्द बसी हुई झुग्गियों की दुनिया में नागार्जुन झाँककर देखते थे तो उनका रोम-रोम "सुविधा प्राप्त वर्गों द्वारा परिचालित राजनीति के प्रति नफरत में सुलग उठता" था। लेकिन ऐसा भी नहीं है कि वे उसी मानसिकता में ही रहते थे।

बोध प्रश्न

- नागार्जुन की काव्य-भाषा कैसी है?

- नागार्जुन को जनपक्षधर कवि क्यों कहा जाता है?

6.4 पाठ सार

आधुनिक हिंदी कविता के क्षेत्र में नागार्जुन का विशिष्ट स्थान है। उनकी काव्य-भाषा बहुआयामी क्योंकि उन्होंने अपने जीवन की अनुभूतियों को कविताओं में अभिव्यक्त किया है। वे दीन-हीन गरीब के पक्षधर हैं। उनकी कविताओं का फलक विस्तृत है। उनकी कविताओं में प्रकृति के विभिन्न रंगों को देखा जा सकता है। वे एक ओर जहाँ वैयक्तिक चित्र उपस्थित है, वहीं दूसरी ओर प्रगतिशील विचारधारा है। वे लोक मानस के चितेरे हैं। वे जनता के दुख-दर्द को पहचानते हैं क्योंकि वे उन्हीं के संग-साथी हैं। इसीलिए उनकी कविता मिट्टी से जुड़ी हुई है। वे राजनीतिक छल-छद्म को अच्छी तरह पहचानते हैं। अतः व्यंग्य के सहारे भ्रष्ट तंत्र और अवसरवादी राजनेताओं पर प्रहार करते हैं। यदि यह कहें कि उनकी जीवन दृष्टि को उनकी कविताओं में भलीभाँति देखा जा सकता है, तो गलत नहीं होगा।

6.5 पाठ की उपलब्धियाँ

जनकवि नागार्जुन के व्यक्तित्व और कृतित्व से संबंधित इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. नागार्जुन प्रगतिशील विचारों के कवि हैं।
2. नागार्जुन की कविताएँ जनता की व्यथाएँ हैं।
3. नागार्जुन का काव्य-नायक धीर गंभीर क्रांतिकारी नायक नहीं है। वह साधारण सर्वहारा वर्ग का प्रतिनिधि है।
4. नागार्जुन आशावादी साहित्यकार थे। उन्हें भावी-भारत में अंधकार नहीं दीखता।
5. काव्य रूपों के नए-नए प्रयोग, जीवंत शैली, भाषा-वैविध्य, छंदों की अनेकविध प्रस्तुतियाँ नागार्जुन की कविता की विशेषताएँ हैं।

6.6 शब्द संपदा

1. अभिजात्य = अच्छे कुल में उत्पन्न
2. अस्तित्व = होने का भाव, वजूद
3. आपातकाल = राष्ट्र में संकट की स्थिति (इमर्जेंसी)
4. जनपक्षधर = जनता की तरफदारी करने वाला
5. तानाशाही = जबरन बात मनवाने की आदत
6. मानसिकता = किसी विशिष्ट दृष्टिकोण से सोचने की स्थिति
7. सर्वहारा = समाज का वह वर्ग जो मजदूरी करके जीव निर्वाह करता है

6.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. नागार्जुन के व्यक्तित्व के बारे में प्रकाश डालिए।
2. 'नागार्जुन की कविताएँ जनता के बीच से उगी व्यथाएँ हैं।' इस उक्ति को उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।
3. नागार्जुन की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
4. नागार्जुन की प्रमुख काव्य कृतियों का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'नागार्जुन राजनेताओं के अवसरवादी चरित्र पर व्यंग्य करते हैं।' इस पर टिप्पणी लिखिए।
2. हिंदी साहित्य में नागार्जुन के स्थान एवं महत्व पर प्रकाश डालिए।
3. नागार्जुन के काव्य संग्रह 'युगधारा' पर की समीक्षा कीजिए।
4. नागार्जुन की कविताओं में व्यक्त राजनैतिक व्यंग्य पर टिप्पणी लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नागार्जुन की आशा-आकांक्षा के केंद्र में कौन है? ( )
(अ) राजनेता (आ) जनता (इ) शासन (ई) भ्रष्ट तंत्र

2. नागार्जुन मैथिली में किस उपनाम से कविता लिखते थे? ( )
(अ) नागार्जुन (आ) ठक्कन (इ) वैजयनाथ (ई) यात्री

3. इनमें से कौन सी रचना नागार्जुन की नहीं है? ( )
(अ) सिंदूर तिलकित भाल (आ) गुलाबी चूड़ियाँ (इ) तोड़ती पत्थर (ई) हरिजन गाथा

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. नागार्जुन जनतंत्र से गायब होते ..... को सुरक्षित रखना चाहते हैं।
2. नागार्जुन का काव्य नायक ..... वर्ग का प्रतिनिधि है।
3. नागार्जुन ..... विचारों के कवि हैं।

4. खिचड़ी ..... देखा हमने।

III. सुमेल कीजिए -

1. लोकतंत्र	(अ) मृतक में भी डाल देगी जान
2. पंचवर्षीय योजना	(आ) खोटा सिक्का
3. दंतुरित मुसकान	(इ) कागज तक सीमित
4. राजनेता	(ई) घर भर की आँखें
5. चमक उठीं	(उ) अवसरवादी चरित्र

6.8 पठनीय पुस्तकें

1. नागार्जुन और उनका रचना संसार : विजय बहादुर सिंह
2. नागार्जुन - रचना संचयन : भूमिका एवं चयन राजेश जोशी
3. नागार्जुन : सुरेशचंद्र त्यागी
4. मेरे साक्षात्कार : नागार्जुन

इकाई 7 : नागार्जुन की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)

रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 मूल पाठ : नागार्जुन की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)
7.3.1 वो हमें चेतावनी देने आए थे
7.3.2 बहुत दिनों के बाद
7.3.2 बाघ आया उस रात
7.3.4 अकाल और उसके बाद
7.3.5 आए दिन
7.4 पाठ सार
7.5 पाठ की उपलब्धियाँ
7.6 शब्द संपदा
7.7 परीक्षार्थ प्रश्न
7.8 पठनीय पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

प्रगतिवादी विचारधारा के कवि नागार्जुन (असली नाम वैद्यनाथ मिश्र और उपनाम 'यात्री') ने अपनी अनेक कविताओं के द्वारा जन जन की भावनाओं को व्यक्त किया है। नागार्जुन सच्चे अर्थों में जनकवि हैं। नामवर सिंह ने ठीक ही कहा है कि "तुलसीदास के बाद नागार्जुन अकेले ऐसे कवि हैं, जिनकी कविता की पहुंच किसानों की चौपालों से लेकर काव्यरसिकों की गोष्ठी तक है।"

नागार्जुन की कविताओं में से चार पाँच प्रतिनिधि कविताओं का चयन करना जितना जरूरी है, उतना ही कठिन भी। इस इकाई में आप इनकी कुछ चयनित कविताओं की संदर्भ सहित व्याख्या का पाठ करेंगे। नागार्जुन ने अभाव और गरीबी को खुद भोगा था। सामाजिक अन्याय, ग्रामीण जीवन की गरीबी और लोगों की परेशानियों को खुद देखा था। इसीलिए कवि की कविताओं में इन सब स्थितियों पर खुलकर व्यंग्य किया गया है। आप देखेंगे कि उनकी कविता के संसार में लोक-जीवन के विविध रूप हैं। उनका काव्य-जगत अनूठा है और यदि उसे देखना हो तो आपको उनकी बहुरंगी दुनिया में जाना ही होगा। कवि को यदि बादल को घिरते देखना प्रिय है तो बच्चों की दंतुरित मुस्कान भी। रोज़मर्रे का संघर्ष भी कवि को प्रिय हैं तो बड़े आंदोलन भी। यहाँ तक कि तेलंगाना आंदोलन तथा नक्सलवादी आंदोलन को नागार्जुन ने कविता के शिल्प में प्रस्तुत किया। आप इनकी कविताओं में लोक भाषा की मिठास और ग्रामीण शब्दों की भरमार देखेंगे। वे हज़ार ढंग से नई से नई बात करते हैं। उनकी ये कविताएं केवल

प्रेरणा ही नहीं देती बल्कि उनके विचारों को परिभाषित भी करती हैं। नागार्जुन अपनी कई कविताओं में खुद अपने ऊपर हँसते हैं तो कुछ दूसरी कविताओं में दूसरों को भी अपने व्यंग्य का निशाना बनाने से नहीं चूकते। वे बड़ी बेबाकी और अधिकार से आज की व्यवस्था पर प्रहार करते हैं। व्यंग्य की अपनी विदग्धता ने नागार्जुन की अनेक तात्कालिक कविताओं को सदा के लिए अमर कर दिया है। इसी कारण आप नागार्जुन की इन कविताओं में कबीर की साखियों जैसी तेज धार और पैनापन देखेंगे। आप इन कविताओं में नाटकीयता, संवादनीयता और मुक्त छंद का प्रयोग भी नोट करेगे और देख सकेंगे कि उनकी कविता कैसे लाजवाब बनती चली गई है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- नागार्जुन की पाँच चयनित और प्रतिनिधि कविताओं की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगे।
- नागार्जुन की कविताओं की व्याख्या की अनेक दिशाओं को जान सकेंगे।
- इन कविताओं के माध्यम से 1936 के बाद की कविताओं में प्रगतिवाद आदि की विशिष्टताओं के बारे में जान सकेंगे।
- नागार्जुन की काव्य-भाषा को समझ सकेंगे।
- नागार्जुन की कविता की विशेषताओं को समझते हुए उन पर अपने विचार व्यक्त कर सकेंगे।

7.3 मूल पाठ : नागार्जुन की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ एवं व्याख्या)

7.3.1 वो हमें चेतावनी देने आए थे

(कवितांश एक) मध्य रात्रि में,
पहले तो
कुपित स्वरों की मिश्रित अनुगूँज
सुनाई पड़ी
वो अनुगूँज पास आती गई
बिलकुल करीब आ गई
कि यक-ब-यक प्रगट हुए
चार-पाँच खूंखार चेहरे -
भीम-भयंकर
कद्दावर काठी थी उनकी!

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।

इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्य पंक्तियाँ नागार्जुन द्वारा रचित कविता 'वो हमें चेतावनी देने आए थे' से ली गई हैं। इन प्रारंभिक पंक्तियों में कवि उन चार पाँच खूंखार चेहरों को बड़े नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करते हैं जो अचानक आधी रात को आकर हमें (आम आदमी) को चेतावनी दे जाते हैं।

व्याख्या : यह कवितांश अपने शीर्षक से ही गंभीरता और रहस्यमयता का लबादा औढ़े हुए है। कविता का शीर्षक 'वो हमें चेतावनी देने आए थे।' स्पष्ट है कि कवि विगत आधी रात में हुई एक घटना का बड़े नाटकीय ढंग से बयान करते हैं। वे कहते हैं कि आधी रात को पहले तो गुस्से से भरे कुछ लोगों के मिले जुले शोर को सुनते हैं। फिर उनकी मिली जुली आवाजें करीब आती जाती हैं। जब वे आवाजें करीब आती हैं तो उनकी शक्ल-सूरतें दिखाई देने लग जाती हैं। ये चार-पाँच कद्दावर लोग जिनकी वेषभूषा, कद-काठी और डील-डौल भयंकर और डरावना है वे जब यक-ब-यक अर्थात एक दम नमूदार हो जाते हैं तब उनको देखकर कोई भी भयभीत हो जाए। और सब भयभीत हो भी जाते हैं जब वे एक एक करके धमकी भरे शब्दों में चेतावनी देते हैं।

(कवितांश दो) 'क' आकृतिवाला पहला बोला:

'जाने कब से तू
हमारी ऐसी-तैसी करता आया!
तेरी करतूत अब बर्दाश्त नहीं होती
बोल क्या करूँ तेरा?"

'स' आकृतिवाला दूसरा गर्जा...
(वो और भी तैश में था)
"करना क्या है!

गला घोंट दे स्साले का"

तीसरे की आकृति 'प' जैसी थी
उनमें वही थोड़ा सभ्य लगा ....
उंसकी भाषा भी शिष्ट प्रतीत हुई ...
वो कह रहा था :
"आप तो काफी समझदार हैं!

हमारे प्रति आपके आचरण
इतने अशोभन क्यों हैं?
ज़रा खुद ही सोचिए तो
आखिर कब तक कोई चुप रहे?
सहनशीलता की भी कोई सीमा होती है

सोचिए तो खुद ही ...
आखिर में 'ज' आकृतिवाला
सामने आया ...
उसने दाँत पीसते हुए कहा:
साले, हमें सब पता है,
कहाँ-कहाँ जाता है तू!
भोपाल, जयपुर, पटना, चंडीगढ़,
लखनऊ, शिमला, नई दिल्ली ...
तेरे सारे ठौर ठिकाने
हमें मालूम हो चुके हैं
बोल क्या करें तेरा?

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए। इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : प्रस्तुत संवाद 'वे हमें चेतावनी देने आए थे' कविता का अंश है जिसमें कवि ने अमुक नाम वाले भीमकाय लोगों की आपसी बातचीत और उनमें से एक का कवि को सीधा सम्बोधन देते हुए अपनी मनस्थिति को पेश किया है।

व्याख्या : इन संवाद नुमा काव्य पंक्तियों में उन अचानक आ गए अनाम गुंडों को देखकर हक्का बक्का हो गए कवि की बेचारगी देखते ही बनती है। इन लोगों को अनाम रखते हुए कवि उनकी पहचान के लिए उन्हें देवनागरी वर्णमाला के कुछ अक्षरों से शोभित करता है। अमुक नामों में से पहला जिसे 'क' कहा गया है वह बड़ी बदतमीजी से बात करता है। सीधे तू तड़ाक पर उतर आता है। यह चेतावनी देता है कि वे उसके बारे में बहुत कुछ जानते हैं। वे जानते हैं कि वही उनके बारे में अनाप शनाप बकता रहता है। वे यह भी कहते हैं कि उसका यह व्यवहार या करतूत अब काबिले बर्दाश्त नहीं रही और वे यह पूछने पर मजबूर कि उसके साथ कैसा सुलूक किया जाए। साफ बात है कि वे धमकी दे रहे थे कोई प्रार्थना तो कर नहीं रहे थे।

इसलिए यह धमकी सुनकर 'स' आकृति वाला भी हाँ में हाँ मिलाते हुए गरज भरी आवाज में बोला कि उसके साथ सुलूक बस एक ही किया जाए। उसकी गर्दन मरोड़ दी जाए। तीसरा आदमी जिसकी आकृति 'प' जैसी थी वह कुछ तमीज से पेश आ रहा था। इसलिए वह 'तू-तड़ाक' से बात न करके शिष्टता पूर्वक बोला। 'आप' का प्रयोग करते हुए वह सीधे यही पूछ रहा था कि वे अब अधिक बर्दाश्त नहीं कर पाएंगे। वे अपने खिलाफ किसी तरह की आवाज को

कभी बर्दाश्त नहीं करेंगे। वे नहीं चाहते थे कि उनके प्रति किसी का भी और उसका भी आचरण और रवैया इतना गैर जिम्मेदाराना हो। इसलिए वे उसे एक मौका देना चाहते थे। आखिर में एक दूसरे गुंडे ने साफ बता दिया कि वे उनकी गतिविधियों को देख समझ रहें है। वे जानते हैं कि वह देश के तमाम महानगरों में जाकर उनके खिलाफ वक्तव्य देता है, भाषण देता है और खासो-आम को बरगलाता है। वह तो गाली-गुफ्तार पर उतर आता है और सुनने वाले (श्रोता - कवि) को भयभीत कर देता है।

(कवितांश तीन) अपना तो पसीना छूट रहा था ...
घिग्घी बंध गई थी
साँप सूंघ गया था
फिर हुआ यही कि
उन सबने थूका
मेरी तरफ मुँह करके
और, यह कहते हुए
अंधेरे में गुम हो गए:
“बस, अभी इतना काफी है!
अगली बार इसकी खबर लेंगे!”

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए। इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्य पंक्तियाँ नागार्जुन द्वारा रचित कविता ‘वो हमें चेतावनी देने आए थे” से ली गई हैं। इन प्रारम्भिक पंक्तियों में कवि उन चार पाँच खूंखार चेहरों को बड़े नाटकीय ढंग से प्रस्तुत करते हैं जो अचानक आधी रात को आकर हमें (आम आदमी) को चेतावनी दे जाते हैं।

व्याख्या : अचानक आ धमके कई गुंडे, अराजक तत्व, समाज विरोधी तत्व या तथाकथित नक्सल जैसे लोग जब कवि को आकर धमकाते हैं। अपमान भरे स्वर में उसे चुनौती देते है तो वह घबरा जाता है। उनका इरादा भी यही था। वे जब यह देख कर संतुष्ट हो गए कि कवि पेश्तर डर गया है और घबराहट में कुछ जवाब भी नहीं दे पा रहा है तो वे वहाँ से चले जाते हैं। चले क्या जाते हैं बल्कि अंधेरे में गुम हो जाते हैं। पर जाते-जाते यह कहते जाते हैं कि वे इस बार तो केवल धमकी ही दे रहें हैं । यदि उसने अपना तौर तरीका न बदला। अपना मुंह बंद न किया तो वे फिर आएंगे। फिर आकर वे उसे अच्छा सबक सिखाएँगे। दरअसल उनका इस बार का मकसद धमकाना भर था। वे चेतावनी देने आए थे। देकर चले गए।

(कवितांश चार) दरअसल यह सब

एक डरावना सपना था
मगर अपना तो
सचमुच बुरा हाल था
प्यास के मारे गला सूख रहा था ...
थर्मस से पानी निकालकर
हमने दो बार पिया
और, बाकी रात बैठे रहे!
सोचते रहे, सोचते रहे :
क्रांति, समता, प्रगति, जनवाद
- आजीवन हमने
इन शब्दों से काम लिया है!
वो हमें चेतावनी दे गए हैं!

संदर्भ : प्रस्तुत काव्य पंक्तियाँ 'वे हमें चेतावनी देने आए थे' कविता का अंश है जिसमें कवि ने अमुक नाम वाले भीमकाय लोगों की आपसी बातचीत और उनमें से एक का कवि को सीधा सम्बोधन देते हुए अपनी मनःस्थिति को पेश किया है।

व्याख्या : कवि कई अराजक तत्वों का आकर उसे धमकाने के प्रसंग को याद करके भी घबराने लगा है। वह समझ नहीं पाता कि यह सब कोई सच था या उसके द्वारा देखा गया कोई डरावना सपना। वह इस नतीजे पर पहुँचता है कि यह दरअसल एक खौफनाक सपना था। इस सपने को याद करके ही उसकी जान निकली जा रही थी। वह पानी पीकर अपने सूखे गले को तर कर रहा था। वे सारी रात फिर सो न सके। वे यही विचार करते रहे कि जो लोग उसे चेतावनी देने आए थे वे जो भी थे, थे बहुत खूंखार। पर वे खुद को शायद कुछ ओर समझते थे। वे शायद अपने विचारों, आदर्श और तौर तरीकों को ठीक समझते हैं। कवि कहता है कि वह तो अपने प्रगतिशील विचारों और आदर्श के अनुसार समतामूलक समाज के लिए क्रांति करने की बात करता आया है। उसके अनुसार यही शब्द और विचार समाज कल्याण के लिए बेहतर हैं। फिर क्यों ये लोग आकर उसे चेतावनी दे गए? वह समझने की पुरज़ोर कोशिश करता है।

विशेष : इस कविता में नागार्जुन अपने व्यंग्यकार के रूप में आते हैं। जब जब हमारी राजनीतिक व्यवस्था में भृष्टाचार, भाई-भतीजावाद, स्वार्थपरक शासन-तंत्र, और हिंसक माहौल रहा है, तब तब कविता के माध्यम से कवि ने अपना पक्ष रखा है। यह वह पक्ष है जो जनता का है। नागार्जुन की प्रतिबद्धता और पक्षधरता जनता के प्रति है। इसी कारण वे जन कवि हैं। घटना को संवाद के माध्यम से कविता के शिल्प में प्रस्तुत करना नागार्जुन के लिए आसान सा काम रहा होगा, यह इस कविता को पढ़कर लगता है।

बोध प्रश्न

- 'वे' कौन थे जो चेतावनी देने आए थे?

- वे किसे और क्यों चेतावनी देने आए थे?
- चेतावनी के बाद 'उसकी' क्या प्रतिक्रिया हुई?

7.3.2 बाघ आया उस रात

वो इधर से निकला
उधर चला गया
वो आंखे फैलाकर
बतला रहा था -
" हाँ बाबा, बाघ आया उस रात
आप रात को बाहर न निकलो
जाने कब बाघ फिर से बाहर निकाल जाए!"
"हाँ, वो ही, वो ही जो
उस झरने के पास रहता है
वहाँ अपन दिन के वक्त
गए थे न एक रोज़?
बाघ उधर ही तो रहता है
बाबा, उसके दो बच्चे हैं
बाघिन सारा दिन पहरा देती है
बाघ या तो सोता है
या बच्चों से खेलता है..."
दूसरा बालक बोला- " बाघ कहीं काम नहीं करता /
न किसी दफ्तर में
न कॉलेज में
छोटू बोला-
"स्कूल में भी नहीं..."
पाँच-साला बेटू ने
हमें फिर से आगाह किया
"अब रात को बाहर होकर बाथरूम न जाना"

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए। इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : प्रस्तुत काव्य-पंक्तियाँ नागार्जुन द्वारा रचित कविता 'बाघ आया उस रात' (1984) से ली गईं हैं।

व्याख्या : यह कविता अपने आप में एक बाल कविता सी सरल लगती है। किंतु इसके पाठ के कई स्तर हो सकते हैं। एक नज़र में बात इतनी सी है कि उस रात या बीती रात एक बाघ बस्ती में आ जाता है और उसे देखकर दो बच्चे भयभीत हो जाते हैं। बच्चों का खौफ स्वाभाविक है। वे बच्चे आपस में तो अपने डर को बताते ही हैं, उनमें से एक बच्चा अपने बाबा को भी आगाह कर देता है। एक ओर तो बच्चों का उनकी ही भाषा में अभिव्यक्ति है दूसरी ओर वे जीवन के संदर्भों और रोज़मर्रा के कामकाज को भी बड़ी बारीकी से देखते हैं।

इन पंक्तियों के माध्यम से कवि कह रहे हैं कि एक बच्चा बाघ के बारे में दूसरे को बताता है। वह कहता है कि बाघ कल रात इधर से निकला था और उधर की ओर चला गया। फिर उसने अपने बाबा को संबोधित करते हुए कहा कि बाबा! बाघ उस रात को आया था। आप रात को आदतन बाहर निकलते हो पर अब से बाहर मत निकला करो। क्योंकि वह बाघ जो उस रात आया था वह फिर से भी आ सकता है। वह पास के झरने की ओट में रहता है। बच्चा यह भी बता देता है कि एक दिन वे लोग वहाँ जाकर बाघ को देख आए हैं। वह अकेला नहीं। उसका परिवार है। बाघिन है और उनके दो बच्चे भी हैं। बाघिन अपने बच्चों की सुरक्षा करती है और उनके लिए पहरे पर तैनात और मुस्तैद रहती है। बाघिन बहुत कमेरी है पर बाघ या तो सोता रहता है या उन नवजात बच्चों के साथ खेलता रहता है।

बाघ के बारे में दूसरे बालक छोटू का भी अपना विचार है। वह भी देखकर आया है। वह बाघ की दिनचर्या को बड़ों की दिनचर्या से जोड़कर देखता है और समझाता है कि बाघ कोई काम-धंधा नहीं करता। वह न तो किसी स्कूल-कॉलेज में पढ़ने जाता है और न किसी ऑफिस में ही वह कोई काम करता है। वह हर समय घर पर ही टिका रहता है। पाँच साल का बेटू अपने पिता की आदत को जानता है। वह जानता है कि वे रात-बेरात बाथरूम जाते हैं। इसलिए उसे भय होता है कि कहीं उनका सामना बाघ से न हो जाए। बेटू बार-बार उन्हें आगाह करता है कि वे भूलकर भी रात में बाथरूम न जाएँ।

विशेष : यह कविता एक ओर तो बालकों के स्वाभाविक भय को बड़ी चतुराई से सरल भाषा में सामने रखती है, दूसरी ओर यह कविता जीव जंतुओं के प्रति हमारी सोच और पर्यावरण के प्रति हमारी लापरवाही की ओर भी संकेत करती है। जिस तरह से हम अपने जंगलों का अंधाधुंध सफाया कर रहें हैं और पशु-पक्षियों के लिए नियत अभयारण्यों पर भी अतिक्रमण करते जा रहें है तो उससे जंगल के बाशिंदों और नगर के तथाकथित बाशिंदों का आमना सामना होना स्वाभाविक है। खतरनाक भी है। पेड़ों को न काटकर जंगलों को सुरक्षित रखना, वन्य प्राणियों के अबाध जीवन में बाधा न पहुँचाना, जंगली जानवरों के आवासों को सुरक्षित रखना हमारी ज़िम्मेदारी है। हम यदि इसमें कोताही करेंगे और बच्चों की बातों को बचकानी समझने की भूल करेंगे तो जन-धन की हानि होने से हमें कोई न बचा सकेगा। कवि नागार्जुन की यह कविता एक

साथ ही आश्चर्य, भय, और अविश्वास के भाव को बालकों के माध्यम से सफलता और सहजतापूर्वक प्रस्तुत करती है।

बाल साहित्य में शुमार करने योग्य यह कविता आपके पाठ्यक्रम का हिस्सा है, यह देखकर आपको यह भी फिर से समझ लेना होगा कि नागार्जुन की कविताओं का चयन जितना जरूरी है, उतना ही मुश्किल भी है। ऊपर-ऊपर से देखने पर आपको जो वर्णन बहुत सरल और सपाट लगता होगा, वह ऐसा है नहीं। कवि नागार्जुन की यह कविता ही नहीं, प्रायः सभी कविताएँ अपने समूचे असर में इतनी असरकारी हैं कि उनके काव्यत्व की किसी एक जगह पर उंगली रखना बड़ा मुश्किल है। उदाहरण के लिए यह कविता है। बाघ आने की इस घटना में शायद वह कवित्व है, जिस पर नागार्जुन की निगाह जाकर ठहरी और कविता बनी। वरना आप कह सकते हैं कि इस घटना में भावुकता और कविताई की गुंजाइश है ही कहाँ?

बोध प्रश्न

- उस रात बाघ आने से बच्चे क्यों और किसके लिए चिंतित होते हैं?
- उस रात बाघ आने की घटना का निहितार्थ क्या है?

7.3.3 बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
अब की मैंने जी-भर देखी
पकी-सुनहली फसलों की मुस्कान
बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
अब की मैं जी-भर सुन पाया
धान कूटती किशोरियों की कोकिल कंठी तान
बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
अब की मैंने जी-भर सूँघे
मौलसिरी के ढेर-ढेर से ताजे-टटके फूल
बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
अब की मैं जी-भर छू पाया
अपनी गंवई पगडंडी की चंदनवर्णी धूल
बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
अब की मैंने जी-भर तालमखाना खाया
गन्ने चूसे जी-भर
बहुत दिनों के बाद

बहुत दिनों के बाद
अब की मैंने जी-भर भोगे
गंध-रूप-रस-शब्द-स्पर्श सब साथ साथ इस भू पर
बहुत दिनों के बाद!

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : 'बहुत दिनों के बाद' शीर्षक कविता 'सतरंगे पंखोंवाली' (1959) काव्य-संग्रह में संग्रह की गई है। कवि बहुत दिनों के बाद अपने गाँव लौटा है। वह लंबे समय तक गाँव से बाहर रहा था। गाँव लौटने पर उसे अपनी पुरानी बातों और यादों को एक बार फिर से महसूस करने का मौका मिला है।

व्याख्या : इस कविता में कवि अपने गाँव के प्रति लगाव को कई तरह पेश किया है। 'बहुत दिनों के बाद' की टेक से और 'गंध-रूप-रस-शब्द-स्पर्श' के आस्वाद से युक्त इस कविता में कवि ने साधारण को असाधारण बना कर पेश किया है। ग्रामीण जीवन का सामान्य परिवेश कवि बहुत दिनों के बाद अपने सामने पाता है तो वह उसको देखकर फिर से उसी पुरानी ललक को पा जाता है। उनकी तबीयत हरी हो जाती है। मन खिल उठता है और कवि हुलसकर कह उठते हैं कि वे जो भी कुछ देख रहें हैं वह उनके लिए वर्णनातीत है। शब्दों में बांधना मुश्किल है।

इस कविता के अलग अलग खंडों में अलग अलग अनुभव को जीने की अनुभूति व्यंजित है। पहले तो वे देखते हैं और देखते ही रह जाते हैं। बहुत दिनों के बाद जब वे पकी सुनहली फसलों को देखते हैं तो उनका मन प्रफुल्लित हो उठता है। फिर वे सुनते हैं। धान कूटती अनेक किशोरियों की मीठी तान और उस तान पर मुग्ध हो जाते हैं। अब नंबर आता है सूंघने का। और जैसे ही बहुत दिनों के बाद वे मौलश्री के टटके फूलों की गंध से सरोबार होते हैं तो बस उसमें खो जाते हैं। फिर वे स्पर्श करते हैं अपने गाँव की पगडंडी की उड़ती धूल को। यह धूल मामूली नहीं चंदनवर्णी है। इसका कोई मुक़ाबला नहीं। इसे जी भर छू लेने पर कवि इसमें रम जाता है। तालमखाने और गन्ने को जी भर खा-चूसकर स्वयं को तृप्त करते हुए कवि को इस बात का भान होता है कि उसने तो एक एक कर अपनी पांचों ज्ञानेन्द्रियों को तृप्त कर लिया। और इस अनुभव अद्वितीय को जो उसने फिर से पाया उसे सबको बताना चाहिए।

यह कविता और इसकी काव्य-पंक्तियाँ कवि के अपने हुलास की अभिव्यक्ति है। कवि अपने गंवई परिवेश के साथ को सबके साथ बांटने की खातिर इस कविता को रचता है। मनुष्य के लगाव की यह दुर्लभ होती जा रही अनुभूति इस कविता के द्वारा व्यंजित होकर रह गई है।

विशेष : इन काव्य पंक्तियों में कवि की गहरी ऐंद्रियता और सूक्ष्म सौंदर्य-दृष्टि का अहसास होता है - पाँच तन्मात्रा - शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध हैं । ये पांचों, पाँच ज्ञानेन्द्रिय- श्रोत्र, त्वचा, चक्षु रसना, नासिका के विषय हें। इसी प्रकार पाँच कर्मेन्द्रियां हें - वाक, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ। सभी दस ज्ञानेंद्रियाँ ओर कर्मेन्द्रियां मन के द्वरा नियंत्रित की जाती है।

बोध प्रश्न

- कवि ने अपने गाँव के सौंदर्य को शब्दों में किस प्रकार व्यक्त किया?

7.3.4 अकाल और उसके बाद

(कवितांश एक) **कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास**
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।
इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : 'अकाल और उसके बाद' कविता वर्ष 1952 में 'सतरंगे पंखोंवाली' कविता-संग्रह प्रकाशित हुई थी। कवि नागार्जुन की इस प्रसिद्ध और प्रतिनिधि कविता का प्रसंग अकाल की घटना से जुड़ा है। अकाल से बेबस ग्रामीण जीवन के सांकेतिक दृश्य इस कविता में वर्णित हुए हैं। यहाँ मनुष्य को सामने रखे बगैर अकाल की भयावहता को प्रस्तुत किया गया है।

व्याख्या : अति साधारण जीवन के लोगों के बारे में उन्हीं की भाषा बोली में कवि नागार्जुन ने उन्हीं के जीवन-प्रसंगों को लिखा है। कई दिनों तक चूल्हा रोया का अर्थ है कई दिनों तक चूल्हा जलाया ही न जा सका क्योंकि घर में अन्न था ही नहीं। चक्की भी उदास रही क्योंकि उसमें कुछ पिसा ही नहीं। 'कई दिनों तक कानी कुतिया सोयी उसके पास' पंक्ति में मानो सारा दर्द समा गया है। जब घर में अन्न का दाना तक न था तो कुतिया इधर उधर करती भी तो क्या करती। उस भूखी कुतिया ने भी अपने मालिक के साथ सहभागिता निभाने के लिए सोना सही समझा। कवि ने कुतिया को 'कानी' बताया है, इसकी वजह शायद यह है कि गरीब परिवार के पास कमजोर और असमर्थ कुतिया ही तो होगी। कोई धनी-मानी लोगों के द्वारा शौकिया खरीदकर पाल ली गई नस्ली-कुतिया कैसे होती? इसी तरह देखा जा सकता है कि अकाल में छिपकलियों

को भी खाने के लिए कीड़े न मिल सके क्योंकि घर में बत्ती न जली। इसी तरह चूहों की हालत भी खराब ही रही। गश्त और शिकस्त शब्दों का प्रयोग करके कवि ने जीवन-संग्राम में गरीब की पस्त हालत का जिक्र किया है। भूख के खिलाफ लड़ाई में जीव-जन्तु भी आदमी के साथ हैं।

अकाल में मनुष्य के अलावा अन्य प्राणियों की भी बहुत दुर्गति होती है। इस कविता में आए जीव-जन्तु-पशु-पक्षी - पदार्थ - वस्तु जैसे कानी कुतिया, छिपकलियां, चूल्हा, चक्की, चूहे, कौआ घरेलू वस्तुओं के शब्दचित्रों के सहारे अकाल की भयावहता पाठक के सम्मुख स्वाभाविक रूप में स्पष्ट हो जाती है। कविता के पूर्वार्ध की इन चार पंक्तियों में प्रारंभ में आए "कई दिनों" पद-बंध व्यंजित करते हैं कि यों ही हमारे देश में व्यक्ति के समक्ष अनेक परेशानियां घिरी हुई हैं, और ऊपर से यह अकाल।

उत्तरार्ध की इन पंक्तियों में यही पद-बंध प्रत्येक पंक्ति के अंत में आता हैं, जो बताता है कि इन समस्याओं का दुष्प्रभाव कई दिनों तक रहने वाला है। अकाल मनुष्य की जीवन को खतरे में डाल देता है। मनुष्य के आसपास रहनेवाले जीव-जन्तु भी इस भयावह समस्या से ग्रस्त होते हैं।

(कवितांश दो) **दाने आए घर के अंदर कई दिनों के बाद**
धुआं उठा आंगन से ऊपर कई दिनों के बाद
चमक उठी घर भर की आंखें कई दिनों के बाद
कौए ने खुजलाई पांखें कई दिनों के बाद। (1952)

संदर्भ : 'अकाल और उसके बाद' कविता वर्ष 1952 में 'सतरंगे पंखोंवाली' कविता-संग्रह प्रकाशित हुई थी। कवि नागार्जुन की इस प्रसिद्ध और प्रतिनिधि कविता का प्रसंग अकाल की घटना से जुड़ा है । अकाल से बेबस ग्रामीण जीवन के सांकेतिक दृश्य इस कविता में वर्णित हुए हैं। यहाँ मनुष्य को सामने रखे बगैर अकाल की भयावहता को प्रस्तुत किया गया है। इन चार पंक्तियों में कवि ने उस समय का चित्र प्रस्तुत किया है जब घर में अन्न के कुछ दाने आ जाते हैं।

व्याख्या : कविता की इन चार पंक्तियों में पहली चार लाइनों की लय या रंगत से अलग ही रौनक है। पहली चार लाइनों में गति सुस्त और हौसले पस्त हैं। इसका कारण है घर में अन्न का एक दाना भी नहीं है। पर अब घर में जब कुछ अनाज आ जाता है तो सारा माहौल बदल जाता है। एक बदलाव और परिवर्तन दिखाई देता है। आँगन में धुआं उठने से-कई दिनों के बाद कुछ पकाए जाने से घर भर की आँखें चमक उठती हैं। सब कुछ उदास की जगह सब कुछ चमक उठा है। अन्न देखकर घर के सब लोग तो जमा हो ही जाते हैं। कानी कुतिया, छिपकली, चूहे के साथ ही कौए महाराज भी आ धमकते हैं। कौआ शायद चालक था, भोजन की तलाश में मारा मारा-मारा फिर रहा होगा। अब फिर से आ धमका है और उम्मीद से है कि उसे भी कुछ मिलेगा। पंखों को खुजलाने में यही तो भाव है। अन्न का न होना और फिर उसका आना दोनों अलग-अलग स्थितियाँ हैं और कवि ने उनका वर्णन बड़ी खूबसूरती से किया है।

विशेष : शीर्षक से ही स्पष्ट है कि इस कविता का संबंध अकाल और उसके बाद की परिस्थियों से है। जैसे-जैसे स्थितियाँ बदलती हैं कविता का आकार भी बदलता जाता है। आठ पंक्तियों की यह कविता देखने में भले ही छोटी और सरल है किन्तु भावबोध और गहरी संवेदना को अपने में समेटे हुए है।

यह कविता ऊपर से देखने में बड़ी सरल और सपाट लगती है, किंतु वस्तुतः न तो वह सरल है, और न ही सपाट। संपूर्ण कविता अपनी आठ पंक्तियों में अनेक चित्रों के माध्यम से अकाल और उसके बाद की स्थिति की व्यंजना करती है। ये चित्र रोजमर्रा के जाने-पहचाने हैं। पर ये चित्र उन्हीं लोगों को स्पष्ट हो सकते हैं, जिन्होंने जिंदगी को खुलकर जिया है। जो आम आदमी हैं और जो उन स्थितियों से गुजरे हैं जिनका यहाँ चित्रण है। कविता में शीर्षक को छोड़कर कहीं अकाल शब्द नहीं आया है, पर कविता इसी अकाल और उसके बाद की कहानी है। कविता का एक-एक शब्द एक कहानी है, दृश्य है। कहीं भी कोई फेरबदल नहीं किया जा सकता।

1. नागार्जुन ने अपनी कविताओं में पदबंधों का पुनरुक्ति प्रयोग किया है, जिससे उनमें अनुभूति की तीव्रता आ गई है। ऐसे पदबंधों से विषय की मार्मिकता बढ़ गई है। यहाँ 'कई दिनों के बाद' पद की पुनरुक्ति से कविता में एक विशेष प्रकार का सौंदर्य आ गया है।
2. इस कविता में लोकबिंबों का प्रयोग हुआ है। कवि की संवेदना केवल मनुष्य के लिए ही नहीं बल्कि पहले चरण में तो मनुष्य कहीं है ही नहीं। परोक्ष रूप से चूल्हा चक्की के माध्यम से मनुष्य की उपस्थिति का आभास होता है। निरंतर मनुष्य के साथ रहने वाले, चूहे, छिपकलियाँ और कानी-कुतिया और कौआ ही है जिनके माध्यम से कवि ने अकाल की स्थिति को व्यक्त किया है।
3. 27 मात्राओं की पंक्तियों से इस कविता का निर्माण हुआ है। 16 और 11 मात्रा पर यति है। अंत में लघु है। यह सरसी छंद है। चौपाई का एक चरण (16 मात्रा) और दोहा का सम चरण (11 मात्रा) मिलाने से सरसी छंद बनता है।

बोध प्रश्न

- अकाल में गरीब की दुर्दशा का कवि कैसे चित्रण करते हैं?
- अनाज आने के बाद परिस्थितियाँ कैसे बदल जाती हैं और क्यों?

7.3.5 आए दिन

आए दिन
अरब अंचलों के तेली धन-कुबेरों को
दिन रात आती रहती हैं
डालरों की अपच से खट्टी डकारें
आए दिन
तीव्र उड़ान वाले विमानों से पहुँचते रहते हैं वहाँ

लंदन के बड़े बड़े डॉक्टर
अमीरों की चिकित्सा करते हैं मुस्तैदीपूर्वक
कदम-कदम पर काम आता है नाम
मिलता है हाथों की सफाई का अधिक से अधिक दाम
आए दिन
आए दिन
कोटिपति युवक सा अधेड़ पूँजीपुत्र
छिप छिपकर सेवन करता है
मिंगी और भांगुर मछलियाँ
तरुण बकरे की कलेजियां
आए दिन
यह सब देख सुनकर
अत्यधिक पुलकित हो उठता है
यह बनमानुष यह सत्तरसाला उजबक
उमंग में भरकर सिर के बाल
नोचने लग जाता है यह व्यक्ति
अपने ही सिर के बाल
अकेले में बजाने लगता है सीटियाँ
आए दिन (1976)

निर्देश : इस कविता का सस्वर वाचन कीजिए।

इस कविता का मौन वचन कीजिए।

संदर्भ : कवि नागार्जुन की सबसे अधिक मोहक और आत्मीय कविताओं में से एक कविता 'आए दिन' समकालीन जीवन पर सटीक टिप्पणी है।

व्याख्या : इस कविता में कुछ धन-कुबेरों के व्यक्ति चित्रों के माध्यम से कवि अपने ऊपर उनके प्रभाव का मनोरंजक वर्णन करते हैं। पहला चित्र है उन अमीरों का जो अरब-पति हैं। अरबों-खरबों की धन संपत्ति को उन्होंने पेट्रोल आदि बेचकर कमाई है। इन पैट्रो-डालरों से इनका पेट नहीं भरता और वे इसे उदर में भरते चले जाते हैं। इससे उन्हें अपच हो जाती है। अपनी अकूत धन संपत्ति को पचाने के न जाने कितने जुगाड़ करते हैं और इसे डकारने की भरपूर कोशिश करते हैं। इसके लिए वे न जाने कितने बड़े-बड़े सयाने डाक्टरों को विलावत से बड़ी-बड़ी फीस देकर हवाई मार्ग से तुरत फुरत बुलाते हैं। ये चतुर सयाने लोग अपनी हाथ की सफाई से इन नव-धनपतियों का इलाज करते हैं और बहुत सा धन कमाते हैं। गौर करने वाली बात यह है कि

कवि श्लेष के माध्यम से खाड़ी के देशों की अर्थ व्यवस्था पर कटाक्ष करता है। इस व्यवस्था में आए दिन पेट्रो डॉलर की अंधी कमाई की बंदर बाँट की खबरें आती हैं।

इस कविता के दूसरे अनुच्छेद में धनपतियों के एक दूसरे सुख सेवन पर कटाक्ष है। कवि नागार्जुन आए दिन ऐसे कई करोडपतियों के बारे में खबर सुनते रहते हैं जो अपने अपार धन का कुछ हिस्सा अधेड़ उम्र में खिसकती जा रही जवानी को कायम रखने के लिए काम में लाते हैं। वे मांस मछली का सेवन करते हैं। तरुण बकरे की कलेजियों को भोग लगाते हैं और वह भी छिपते-छिपाते। वे अपनी जवानी को अधेड़ और अशक्त होते जिस्म में कुछ दिन तक कैद रखने के लिए पूँजी लगाते हैं।

और कवि अपनी सत्तर साला जिंदगी के यूँ ही बीत जाने पर नासमझों की तरह ऐसे लोगों की बेवकूफाना हरकतों को देखकर कभी उन पर हँसते हैं और कभी उन पर। वे कभी गुस्से से अपने बाल नोचने लग जाते हैं और कभी खुश होकर सीटी बजाने लगते हैं। कहना यह है कि कवि अपने प्रति भी बहुत बेबाक और निर्मम है और दूसरों की पोल खोलने में भी कोई कसर उठा नहीं रखते। वे अधिकारपूर्वक और प्रमाण सहित आज की व्यवस्था और उस व्यवस्था के पीछे छिपे चेहरों को बेपर्दा करके रख देते हैं। इस प्रहार में धार लाने के लिए ही तो वे खुद को भी इस आवेशपूर्ण व्यंग्य यात्रा में शामिल और शुमार कर लेते हैं। आदमी के अनेक रूपों को कविता के शिल्प में प्रस्तुत करने वाले नागार्जुन ने यहाँ नग्न सत्य को बिना बीभत्स बनाए सुरुचिपूर्ण ढंग से कटाक्ष की चाशनी लगाकर पेश करते हैं।

बोध प्रश्न

- आए दिन कवि क्या देखता रहता है?
- 'सत्तरसाला उजबक' कौन है और उसकी बेहूदा हरकतों का क्या कारण है?

7.4 पाठ सार

इस पाठ में पाँच कविताओं के द्वारा कवि नागार्जुन की कविता की बानगी प्रस्तुत की गई है। आपने ध्यान दिया होगा कि नागार्जुन कविता के शिल्प में कभी तो सीधा सादा वक्तव्य देते हैं। कभी खुद से बातचीत करते हैं। कभी सीधे अपने पाठकों को संबोधित करते हैं। कभी आत्म विश्लेषण करते हैं। कभी सिर्फ वर्णन करते हैं। कभी कविता के भीतर संवाद करते हैं। कभी बच्चों जैसी सरलता दिखाते हैं। इन कुछ प्रतिनिधि कविताओं में बच्चों जैसी सरलता (बाघ आया उस रात), कविता के भीतर संवाद (वे हमें चेतावनी देने आए हैं), आत्म-विश्लेषण और खुद से बातचीत (आए दिन), वर्णन (अकाल और उसके बाद) और पाठकों से संवाद (बहुत दिनों के बाद) आदि की बानगी आपको मिलेगी। यह जरूरी नहीं कि ये ही बातें आप भी इन कविताओं में गौर करें। आप ध्यान देंगे तो कविताओं में पर्त-दर-पर्त अर्थ के वर्के से खुलते चले जाएँगे। बड़े-बड़े आलोचक और आम पाठकों से लेकर स्कूली छात्रों तक अपनी पहुँच बना चुकी इन कविताओं की विशेषताएँ आपको भी कवि का मुरीद बनाने में कामयाब होंगी।

नागार्जुन की इन कविताओं की विशेषता यह है कि ये कलात्मक होने के साथ ही लोकप्रिय भी हैं और डॉ राम विलास शर्मा के शब्दों में यह कहा जा सकता है, "नागार्जुन ने लोकप्रियता और कलात्मक सौंदर्य के संतुलन के संतुलन और सामंजस्य की समस्या को जितनी सफलता से हल किया है, उतनी सफलता से बहुत कम कवि-हिन्दी से भिन्न भाषाओं में भी हल कर पाएँ हैं।" अरुण कमल के शब्दों में - "नागार्जुन को पढ़ने का अर्थ है हिंदी भाषा के वास्तविक जगत में लौटना, हिन्दी के निजी स्वरूप और संस्कारों से परिचित होना। भाषा के इतने रूप, बोलियों के इतने 'मिक्सचर' उनकी कविताओं में मिलते हैं कि यदि उनके काव्य के अन्य प्रसंगों को तो सिर्फ अपनी भाषा के लिए वे हमेशा-हमेशा के लिए महत्वपूर्ण बने रहेंगे।"

7.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इन कविताओं के पाठ और अध्ययन से निम्न लिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए -

1. कवि नागार्जुन की कविताएँ सरल सहज होने के साथ-साथ ही अर्थ पूर्ण भी हैं।
2. कविताएँ अपने पाठकों से सीधे संवाद करती हैं और जीवन के विविध रंग-रूपों पक्षों को चित्रित करती हैं।
3. कवि की आस्था आम आदमी में है और वे खास आदमी को भी आम आदमी की नज़र से ही देखते हैं।
4. इन कविताओं में भाषा-शिल्प की रवानी तो है ही, अतुकांत होने पर भी अर्थ की लय हर पंक्ति में मौजूद है।
5. कवि अपनी कविताओं में प्रगतिवादी विचारधारा की झलक दिखाता है और गरीब के प्रति सहानुभूति।
6. इन कुछ कविताओं के आधार पर भी हम कवि नागार्जुन को जन कवि कह सकते हैं।

7.6 शब्द संपदा

1. कटाक्ष = वक्र दृष्टि, तिरछी निगाह,व्यंग्य
2. कद्दावर = बड़े डील डौल का, लंबा,चौड़ा
3. तात्कालिक = उसी या उस समय का, तत्काल का, तुरंत का, उसी समय का।
4. मुक्त छंद = मुक्तछन्द (Free verse या vers libre) कविता का वह रूप है जो किसी छन्दविशेष के अनुसार नहीं रची जाती न ही तुकान्त होती है। मुक्तछन्द की कविता सहज भाषण जैसी प्रतीत होती है। हिन्दी में मुक्तछन्द की परम्परा सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' ने आरम्भ की।
5. यक-ब- यक = अचानक, एकाएक, अकस्मात, एकदम
6. विदग्धता = चातुर्य विद्वत्ता पांडित्य विदग्ध होने का भाव
7. व्यंग्य = शब्द की व्यंजना शक्ति द्वारा निकला अर्थ, गूढ़ार्थ। ताना (जैसे - व्यंग्य कसना)।

7.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पठित कविताओं के आधार पर नागार्जुन की आम आदमी के प्रति आस्था को रेखांकित कीजिए।
2. 'अकाल और उसके बाद' कविता के आधार पर नागार्जुन की कविता के भाषिक सौन्दर्य का उदघाटन कीजिए।
3. 'बाघ आया उस रात कविता बाल कविता सी सरल होने के साथ ही पर्यावरण और पशु-पक्षी संरक्षण आदि समकालीन सरोकारों को काव्य रूप में प्रस्तुत करती है।' इस कथन के पक्ष में उदाहरण देते हुए अपने विचार व्यक्त कीजिए ।
4. 'आए दिन' कविता में 'सत्तर साला उजबक' कौन है और उसके लिए आए दिन की परेशानी क्या है?
5. 'बहुत दिनों के बाद कविता में कवि नागार्जुन की गहरी ऐंद्रियता और सूक्ष्म सौंदर्य-दृष्टि का परिचय मिलता है।' स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. कवि नागार्जुन अपनी कविताओं में किस तरह से दूसरों पर ही नहीं खुद पर भी हँसते हैं और व्यंग्य करते हैं?
2. कवि नागार्जुन की काव्य-भाषा पर सारगर्भित टिप्पणी कीजिए।
3. जनकवि के रूप में नागार्जुन की प्रतिष्ठा कीजिए।
4. नागार्जुन की कविता में संवाद-शैली (घटना को संवाद के माध्यम से कविता के शिल्प में प्रस्तुत करना) के प्रयोग का उदाहरण देकर औचित्य सिद्ध कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. नागार्जुन का असली नाम क्या है? ( )
   (अ) शेरशाह यात्री (आ) वैद्य नाथ मिश्र (इ) उजबक (ई) इनमें से कोई नहीं

2. 'बहुत दिनों के बाद' कवि ने क्या देखा-महसूसा? ( )
   (अ) रूप-रस (आ) गंध-स्पर्श (इ) स्वाद (ई) ये सभी

3. 'आए दिन' कविता के आधार पर बताएँ कि आए दिन क्या होता रहता है? ( )

(अ) महंगाई और बेरोजगारी (आ) धनिकों का आत्म-प्रदर्शन

(इ) नेताओं के भाषण (ई) ये सब

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. भूख के खिलाफ लड़ाई में ..... भी आदमी के साथ हैं।
2. 'बहुत दिनों के बाद' कविता में ..... के आस्वाद से कवि ने साधारण को असाधारण बना कर पेश किया है।
3. नागार्जुन की प्रतिबद्धता और पक्षधरता .....के प्रति है, इसलिए वे ..... कवि हैं।
4. 'वो हमें चेतावनी देने आए थे" कविता में 'वो' ..... है और 'हम' ..... है ।

III. सुमेल कीजिए -

1. बच्चों जैसी सरलता	(अ) अकाल और उसके बाद
2. कविता के भीतर संवाद	(आ) आए दिन
3. आत्म-विश्लेषण और खुद से बातचीत	(इ) बहुत दिनों के बाद
4. पाठकों से संवाद	(ई) वो हमें चेतावनी देने आए थे
5. वर्णन	(उ) बाघ आया उस रात

7.8 पठनीय पुस्तकें

1. नागार्जुन की कविता : अजय तिवारी
2. प्रतिनिधि कविताएँ : नागार्जुन
3. नागार्जुन-दस प्रतिनिधि कविताएँ : सं. नामवर सिंह

इकाई 8 : रघुवीर सहाय : एक परिचय

रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 उद्देश्य
8.3 मूल पाठ : रघुवीर सहाय : एक परिचय
8.3.1 जीवन परिचय
8.3.2 रचना यात्रा
8.3.3 रघुवीर सहाय के काव्य की विशेषता
8.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्व
8.4 पाठ-सार
8.5 पाठ की उपलब्धियाँ
8.6 शब्द संपदा
8.7 परीक्षार्थ प्रश्न
8.8 पठनीय पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

आधुनिक हिन्दी कविता में रघुवीर सहाय का महत्वपूर्ण स्थान है। रघुवीर सहाय एक सफल पत्रकार होने के साथ-साथ एक सफल साहित्यकार भी थे। उनकी कविताओं में आधुनिक युग की विसंगतियों को देखा जा सकता है। ये विसंगतियाँ पाठकों को सत्ता की चालबाज़ियों, नेताओं द्वारा जनता का शोषण, किए गए वादों का अस्वीकरण, बहलाना-फुसलाना आदि से संबंधित हैं। इसीलिए रघुवीर सहाय को एक राजनीतिक कवि के रूप में देखा जाता है। वह लोकतंत्र की विडम्बनाओं का खंडन करते हैं। राजनीतिक कवि होने का कदापि ये अर्थ नहीं है कि वह कवि किसी राजनीतिक दल या पार्टी का समर्थक हो, बल्कि उसे हम इस रूप में देखते हैं कि वह किसी सत्ता या पार्टी के हक़ में खड़ा तो नहीं है। ऐसे में अगर कवि किसी पार्टी या सत्ता के हक़ में खड़ा हुआ दिखे तो उसकी विचारधारा अलग दिखती है। लेकिन रघुवीर सहाय न किसी सत्ता या किसी पार्टी के पक्ष में नहीं दिखते, बल्कि वे जनता के कवि हैं। जनता की पीड़ाओं, उन पर हुए अत्याचार का और शोषण का उनकी कविता में रूप-स्वरूप मुखरित होता है। स्वतंत्रता पूर्व भारतीय जनमानस को जो सब्ज़ बाग़ दिखाया गया था आज़ादी प्राप्ति के बाद वह सब्ज़ बाग़ कहीं गुम हो गया। परिस्थितियों में कोई परिवर्तन दिखा ही नहीं, तब ऐसे में रघुवीर सहाय की कविता सत्ता और सत्ताधारियों पर तीखा प्रहार और प्रश्न करती दिखाई पड़ती है। रघुवीर सहाय की कविताएँ समाज में दोयम दर्जे की समझी जाने वाली स्त्रियों पर भी हैं। वे स्त्रियों के शोषण और अत्याचार के विरुद्ध खड़े दिखते हैं। उनकी कई कविताओं में स्त्रियों के समान अधिकार की बात दृष्टिगोचर होती है। इसके अतिरिक्त उनकी कविताएँ भाषाई अनेकता और हिन्दी-अंग्रेज़ी के

मध्य श्रेष्ठ-अश्रेष्ठ को भी रेखांकित करती हैं। प्रस्तुत इकाई में हम रघुवीर सहाय का जीवन परिचय, कृतियाँ और साहित्यिक विशेषताओं के साथ-साथ पत्रकारिता का भी अध्ययन करेंगे।

8.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- रघुवीर सहाय के जीवन और व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- रघुवीर सहाय के कृतित्व से अवगत हो सकेंगे।
- रघुवीर सहाय की कविताओं से परिचित हो सकेंगे।
- रघुवीर सहाय के काव्य की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- रघुवीर सहाय की रचनाओं में व्यक्त सामाजिक समस्याओं से अवगत हो सकेंगे।

8.3 मूल पाठ : रघुवीर सहाय : एक परिचय

8.3.1 जीवन परिचय

रघुवीर सहाय का जन्म दिसंबर 1929 ई. में लखनऊ, उत्तर प्रदेश में हुआ था। यहीं से इन्होंने अंग्रेजी साहित्य में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। रघुवीर सहाय अपने लेखन में आजीवन सक्रिय रहे हैं। रघुवीर सहाय ने लगभग 1950 ई. से 'नव जीवन' दैनिक से पत्रकारिता का आरम्भ किया। सन् 1951 ई. में दिल्ली चले गए और 'प्रतीक' के सहायक संपादक का पदभार ग्रहण किया। 1953-1957 ई. तक आकाशवाणी के समाचार विभाग में अपनी सेवाएँ प्रदान की। अज्ञेय के साथ 'वाक्' अंग्रेज़ी त्रैमासिक पत्रिका का सन् 1959 ई. में संपादन किया। सन् 1959-1963 तक आकाशवाणी में संवाददाता के रूप में कार्यरत रहे। सन् 1963-1968 और 1970-1983 ई. तक क्रमशः 'नव भारत टाइम्स' और 'दिनमान' के संपादक रहे। 1990 ई. तक रघुवीर सहाय स्वतंत्र लेखन करते रहे और सन् 1990 ई. में ही इनका देहांत हो गया।

रघुवीर सहाय की गणना ऐसे कवियों में की जाती है जिनकी भाषा और शिल्प में पत्रकारिता का प्रभाव होता था और रचनाओं में आम आदमी की पीड़ा झलकती थी। 'अंत का प्रारंभ' रघुवीर सहाय की पहली कविता थी जो सन् 1946 ई. में प्रकाशित हुई। 1949 का 'दूसरा सप्तक' में रघुवीर सहाय को अज्ञेय ने स्थान दिया। ज़ाहिर है कि अज्ञेय ने उनके रचनाकर्म में नएपन से प्रभावित होकर उन्हें 'तार सप्तक' में स्थान दिया।

बोध प्रश्न

- रघुवीर सहाय द्वारा सम्पादित पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
- रघुवीर सहाय किस 'तार सप्तक' के कवि थे?

8.3.2 रचना-यात्रा

रघुवीर सहाय की सम्पूर्ण कविताएँ निम्नलिखित काव्य-संग्रहों में संकलित हैं-

सीढ़ियों पर धुप में -1960
आत्महत्या के विरुद्ध-1967
हँसो हँसों जल्दी हँसो-1975
लोग भूल गए हैं-1982
कुछ पते कुछ चिट्ठियाँ-1989
एक समय था-1994

नोट. रघुवीर सहाय की अंतिम कविता संग्रह उनकी मृत्यु के पश्चात प्रकाशित किया गया था।

काव्य के क्षेत्र में सक्रिय रहने के साथ-साथ रघुवीर सहाय ने गद्य की विविध विधाओं में भी रचनाएँ की हैं। कहानी, निबन्ध, बाल साहित्य एवं अनुवाद के क्षेत्र में इनकी लेखनी का विस्तार दृष्टिगोचर होता है।

कहानी संग्रह :

रास्ता इधर से है
जो आदमी हम बना रहे हैं

निबन्ध संग्रह :

दिल्ली मेरा परदेस
लिखने का कारण
ऊबे हुए सुखी
वे और नहीं होंगे जो मारे जायेंगे
भँवर
लहरे और तरंग
अर्थात
यथार्थ का अर्थ

अनुवाद :

बरनमवन (शेक्सपियर के नाटक 'मैकबेथ' का अनुवाद), तीन हंगारी नाटक

बोध प्रश्न

- रघुवीर सहाय का अंतिम कविता संग्रह कौन सा है?
- रघुवीर सहाय की पाँच कहानियों के नाम लिखिए।

8.3.3 रघुवीर सहाय के काव्य की विशेषता

रघुवीर सहाय की कविता का केंद्र बिंदु आम जनता है। स्वाधीन भारत में आम जनता का शोषण उन्हें चिंताग्रस्त करता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात लोकतंत्र की बहाली हुई, जनता ने जिस स्वप्न की आशा की थी उन स्वप्नों में परिवर्तन नहीं दिखा। उनकी स्थिति जैसी थी वैसी ही

रही। दिन-ब-दिन स्थितियाँ भयावह होती गयीं। आज़ादी के पचहत्तर वर्ष हो जाने पर भी लोकतंत्र की विसंगतियों के बीच आम जनता पिसती जा रही है। इन्हीं विसंगतियों में तड़पती और शोषित जनता के हिमायती बनकर रघुवीर सहाय खड़े होते हैं और उनकी कविता सत्ता की विद्रूपताओं पर तीखा प्रहार करते हुए प्रश्न करती हुई दिखती है। रघुवीर सहाय की कविता किसी घटना पर आधारित न होकर वह जन साधारण की अनुभूतियों, अभिव्यक्तियों, मानवीय संवेदनाओं पर केन्द्रित है।

आधुनिक हिन्दी कविता की एक प्रमुख विशेषता यह भी रही है कि वह राजनैतिक परिस्थितियों से साक्षात्कार करती है। राजनीति से साक्षात्कार का यह अर्थ नहीं है कि वह कविता किसी राजनीतिक दल के विचारों से प्रभावित है, बल्कि वर्तमान राजनीतिक परिस्थितियों में आम जनता के जीवन से जुड़े मुद्दों को सत्ता के समक्ष प्रस्तुत करती है। ऐसे में साहित्यकारों द्वारा ऐसे प्रश्नों पर प्रश्नचिन्ह लगाना स्वाभाविक है। मुक्तिबोध, धूमिल, रघुवीर सहाय, नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिंह, उदय प्रकाश, चंद्रकांत देवताले, लीलाधर जगूड़ी आदि ऐसे कवि हैं जिनकी कविताएँ सत्ता से सम्बंधित और उनसे जुड़ी समस्याओं पर प्रश्न खड़ा करती हैं।

बोध प्रश्न

- रघुवीर सहाय के काव्य की विशेषता पर चर्चा कीजिए।
- रघुवीर सहाय का काव्य आम जनता की पीड़ा पर केन्द्रित है, स्पष्ट कीजिए।

रघुवीर सहाय की विचारधार का झुकाव लोहिया के समाजवाद की तरफ होते हुए भी उन्होंने कभी समाजवादी दल की शरण नहीं ली और न ही उस दल से प्रभावित रहे। उनका कहना था कि कवियों को राजनीतिक दल में शामिल नहीं होना चाहिए, इससे उनमें पारदर्शिता नहीं रहेगी। रघुवीर सहाय ने हर उस दल से अपना लगाव महसूस किया जिसने भी मानवाधिकार या जनता से जुडी समस्याओं, समानता-असमानता और न्याय की लड़ाई लड़ी या उसमें भूमिका निभाई हो।

जहाँ तक रघुवीर सहाय के काव्य की बात है तो उनके काव्य में राजनीतिक चेतना की ध्वनि स्पष्टतः देखी जा सकती है। ऐसा प्रतीत होता है कि उनकी अधिकांश कविताओं का मूल स्वर ही व्यवस्था में पनप रहे पाखंड का विरोध है।

“राष्ट्रगीत में भला कौन वह
भारत-भाग्य-विधाता है
फटा सुथन्ना पहने जिसका
गुन हरचरना गाता है।” (कविता: अधिनायक, ‘सीढ़ियों पर धूप में’ काव्य संग्रह से।)

भारतीय उपमहाद्वीप अपनी विविधताओं के साथ विकासशील देशों की गिनती में आता है। लोकतंत्र के बहाल होने के उपरांत जनमानस में सामाजिक-आर्थिक गैर-बराबरी से मुक्ति की

आकांक्षा थी। किन्तु लोकतान्त्रिक मूल्यों का लगातार हो रहा विघटन लोकतंत्र की बिडम्बना को दिखाता है, जिसको कवि ने उक्त कविता में उद्घाटित करने की कोशिश की है।

साहित्य में दिखने वाला यथार्थ रचनाकार के जीवन संघर्ष और युग-बोध से अछूता नहीं होता है। जीवन संघर्ष और युग बोध उसके समसामयिक यथार्थ तत्व से जुड़ कर सामाजिक-राजनीतिक वस्तुस्थितियों का एक रचनात्मक प्रासाद निर्मित करता है, जो खास तौर पर समकालीन साहित्य की विशेषता भी है।

रघुवीर सहाय की कविता में राजनीतिक संदर्भ और प्रतिरोध की विशेष रूप से अभिव्यक्ति हुई है। जिस दौर में इनकी कविताएं साहित्यिक पटल पर आती है वो राजनीतिक रूप से उथल-पुथल का दौर है। जैसा कि पहले के अध्याओं में स्पष्ट किया जा चुका है कि रघुवीर सहाय किसी राजनीतिक पार्टी के प्रति प्रतिबद्ध नहीं रहे। उनकी प्रतिबद्धता समाज के जन सरोकार से जुड़ा है। आम आदमी के जीवन का फैसला राजनीतिक स्तर पर होता है। ऐसे में लेखक का राजनीतिक होना नैसर्गिक है। आम आदमी के जीवन संघर्ष, व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार और अपराधीकरण को चिन्हित करते हुए लिखते हैं-

"दस मन्त्री बेईमान और कोई अपराध सिद्ध नहीं
काल रोग का फल है अकाल अनावृष्टि का
यह भारत एक महागद्दा है प्रेम का
ओढ़ने-बिछाने को, धारण कर
धोती महीन सदानन्द पसरा हुआ"

(कविता- नयी हँसी, काव्य संग्रह-आत्महत्या के विरुद्ध)

राजनीतिक रूप से सत्ता परिवर्तन के लिए समाज का स्वयं भी राजनीतिक होना जरूरी है। समकालीन राजनीति में निराशा, असंतोष और विद्रोह का साहस प्रधान सामाजिक चेतना रहे हैं। बिना मजबूत इच्छाशक्ति, बड़े परिवर्तन की उम्मीद बेकार है, इस संदर्भ में ये काव्य पंक्तियाँ महत्वपूर्ण है-

"कुछ होगा कुछ होगा अगर मैं बोलूँगा
न टूटे न टूटे तिलिस्म सत्ता का मेरे अंदर एक कायर टूटेगा।" (आत्महत्या के विरुद्ध)

बोध प्रश्न

- रघुवीर सहाय की राजनीतिक प्रतिबद्धता स्पष्ट कीजिए।
- रघुवीर सहाय की कविताओं में राजनीति किस प्रकार उद्घाटित हुआ है?

एक पत्रकार के तौर पर उनके लिए सबसे चुनौतीपूर्ण काम रहा खबरों की सपाट बयानी से बचना। दरअसल समाज इस कदर अमानुषिक और संवेदनहीन होता जा रहा है कि व्यक्ति के जीवन की त्रासदी एक सूचना से अधिक और कुछ नहीं है। समाचार पत्रों और टेलीविजन में

जिस तरह का संवाद स्थापित हो रहा है, उसका देश के सामान्य नागरिक के जन सरोकार से कोई लेना देना नहीं है।

खबरों में आए दिन किसी की हत्या होना कोई गंभीर बात नहीं है, बल्कि एक सूचना है। सब कुछ पहले से तय किया जा चुका है। नागरिक मौत का उत्सव देखने को पलकें बिछाए हुए है। 'रामदास' कविता में कुछ इन्हीं बातों की अभिव्यक्ति हुई है।

"खड़ा हुआ वह बीच सड़क पर
दोनों हाथ पेट पर रखकर
सधे कदम रख करके आए
लोग सिमट कर आँख गड़ाए
लगे देखने उसको जिसकी तय थी हत्या होगी"

प्रस्तुत काव्य पंक्तियाँ संवेदनहीन होते समाज को दिखाता है। किसी अपराध के खिलाफ सच बोलने का साहस मनुष्य को मौत की तरफ ले जा रहा है। रघुवीर सहाय ने अखबारी रिपोर्ट के नीरस शब्दों को अपनी कविताओं के माध्यम से जीवंत कर दिया, उसमें करुणा और संवेदना भर दी है।

वर्तमान समय में पर्यावरण में आ रहे बदलाव किसी बड़े खतरे की तरफ इशारा करते हैं। मूक दिखने वाली प्रकृति बीच-बीच में संभलने का संकेत करती है, बशर्ते की मनुष्य इन संकेतों को समझे। माना जाता है कि तीसरा विश्वयुद्ध अगर होगा तो पानी के लिए होगा। यह कितना दुर्भाग्यपूर्ण होगा की पानी की कमी से मानव सभ्यता का नाश हो जाएगा। विदित है कि ग्रामीण समाज की जीवनचर्या में नदियों के पानी की महत्वपूर्ण भूमिका बनती है। फसलों की सिंचाई से लेकर रोजमर्रा की जरूरतों में इसका इस्तेमाल होता है लेकिन पानी के लगातार दूषित होने से अनभिज्ञ ग्रामीण और आदिवासी समाज पानी के रूप में जहर को अपना आहार बना रहा है। कारखानों से निकलने वाले जहरीले द्रव्य पदार्थ लगातार पानी को विषैला बना रहे हैं।

"पानी पानी
बच्चा बच्चा मांग
माँग रहा है
हिन्दुस्तानी
जो पानी के मालिक हैं
भारत पर उनका कब्ज़ा है
जहाँ न दें पानी वाँ सूखा
जहाँ दें वहाँ सब्ज़ा है" (पानी पानी, काव्य संग्रह-'हँसो हँसो जल्दी हँसो')

शायद किसी ने यह कल्पना भी नहीं की होगी की पानी की वजह से देश-दुनियाँ संकटग्रस्त होगी। पानी का अधिकार आम जनता के हाथ से निकल कर बड़े उद्योगपतियों के पास जा रहा है। गौरतलब है कि शहरों में रहने वाली बहुसंख्यक आबादी पानी खरीद के पीती है।

इन मुद्दों के अलावा रघुवीर सहाय ने स्त्री जीवन की त्रासदी व विसंगतियों पर भी कुछ जरूरी बातें अपनी कविता के माध्यम से कही हैं। स्त्री जीवन की पराधीनता को चिन्हित करते हुए उन्होंने कई कविताएं लिखी हैं।

"पढ़िए गीता
बनिए सीता
फिर इन सबमें लगा पलीता
किसी मूर्ख की हो परिणीता
निज घर बार बसाइए।
होंय कँटीली
आँखें गीली
लकड़ी सीली, तबीयत ढीली
घर की सबसे बड़ी पतीली
भरकर भात पसाइए।" (कविता-पढ़िए गीता, काव्य संग्रह- 'सीढ़ियों पर धूप में')

स्त्री जीवन की नियतिवादी स्थिति की जकड़न एक खास ढर्रे पर चलती है, जिसका रूप प्रस्तुत काव्य-पंक्तियों में उद्घाटित किया गया है। रघुवीर सहाय उन कवियों में से नहीं हैं जो स्त्री को अबला मान कर उसके प्रति महज दया भाव रखते हैं। उस स्थिति को अपनायें रखने के लिए वो स्त्री समुदाय पर कटाक्ष करते हैं और संवेदना भी व्यक्त करते हैं। इसी भावना को व्यक्त करते हुए 'उम्र' कविता में लिखते हैं-

जब तुम बच्ची थीं
तो
मैं तुम्हें रोते हुए नहीं देख सकता था
अब तुम रोती हो
तो
देखता हूँ मैं !

इस तरह देखा जाए तो रघुवीर सहाय वर्तमान युग की राजनीतिक विषमताओं के साथ-साथ अपनी कई रचनाओं में स्त्री को केंद्र में रख कर लिखी है।

8.3.4 हिंदी साहित्य में स्थान एवं महत्त्व

हिंदी साहित्य में रघुवीर सहाय का स्थान उल्लेखनीय है। इन्होंने पत्रकार और साहित्यकार दोनों भूमिकाएं साथ-साथ निभाई। देश की आज़ादी के पूर्व से ये साहित्यिक जगत में प्रवेश कर

चुके थे। 'दूसरा सप्तक' में इनका आना इनके जीवन की ऐतिहासिक घटना रही, ऐसा इसलिए भी कि 'दूसरा सप्तक' में संकलित सात कवियों में रघुवीर सहाय सबसे कम उम्र के थे।

रघुवीर सहाय का सहित्यकार के अलावा एक पत्रकार के रूप में भी विशेष सम्मान है। साल 1951 में अंग्रेजी से एम.ए करने के फ़ौरन बाद अज्ञेय के आग्रह पर दिल्ली चले आए जहाँ इन्होनें 'प्रतीक' पत्रिका के सहायक संपादन का पदभार उठाया। इसके उपरांत अंग्रेजी पत्रिका 'वाक्' त्रैमासिक निकाला तथा 'नवभारत टाइम्स' के विशेष संवादाता और 'दिनमान' के संपादक के रूप में जुड़े रहे। इन सबके इतर स्वतंत्र पत्रकार के रूप में भी सक्रिय रहे।

अपनी राजनितिक चेतना की वजह से साहित्य में इनका विशेष स्थान रहा। नयी कविता के कवियों में प्रमुख कवि के रूप में अपनी पहचान स्थापित की है।

बोध प्रश्न

- रघुवीर सहाय की रचनाओं में किन-किन समस्याओं पर बात की गयी है?
- रघुवीर सहाय के काव्य में पर्यावरण के बदलते स्वरूप को कैसे चिह्नित किया गया है?

रघुवीर सहाय के काव्य में भाषा-शैली का प्रयोग

अपनी काव्य-शैली में रघुवीर सहाय ने सरल, सहज और सधी हुई भाषा का प्रयोग किया। यहां तक कि उनकी भाषा शहरी होते हुए भी बहुत ही सहज व्यवहार वाली है, सजावट की वस्तु नहीं। इनकी भाषा में बौद्धिकता का आतंक नहीं है। बहुत कठिन सवालों पर भी सहज भाषा में कविताएं लिखी गई है। व्यंग्यात्मक शैली में इन्होंने सत्ता की बखिया उधेड़ी है। इनकी कविताएं संवाद करती है, प्रश्न करती है और साहस भी देती है। इनकी भाषा 'सपाटबयानी' होने के बावजूद बिखरी हुई या नारे की तरह नहीं है, उसमें अनुभूति की शीतल धारा बहती है।

भाषा में ऐसी स्पष्टता के लिए इनके पत्रकार व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण योगदान है। पत्रकारिता की भाषा को इन्होंने कविता की भाषा बना दी।

मारो मारो मारो शोर था मारो

एक ओर साहब था

सेठ था सिपाही था

एक ओर मैं था

मेरे पास आकर खड़ा हुआ एक राही था

एक ओर आकाश में हो चला था भोर। (मेरे प्रतिनिधि)

बोध प्रश्न

- रघुवीर सहाय की भाषा शैली क्या है, स्पष्ट कीजिए।

8.4 पाठ-सार

प्रस्तुत पाठ के सारांश को समझना चाहें तो कह सकते हैं कि रघुवीर सहाय जनता के लेखक हैं। उनकी लेखनी में सामान्य जन के छोटे दिखने वाले बड़े सवालों और समस्याओं पर बात की गयी है। जीवन की सच्चाइयों को बिना अतिरिक्त तामझाम के पेश करने की ये कला उनके साहित्य को और विशिष्ट बनता है।

पत्रकारिका की भाषा में क्षीण होती संवेदना को अपनी कविता में स्थान दे कर रघुवीर सहाय ने कविता का एक मार्मिक कोलाज बनाया है साथ ही एक नए तरह की काव्य प्रवृत्ति की शुरुआत भी की है। व्यक्ति का राजनितिक होना पसंद या विकल्प का मामला नहीं है बल्कि जरूरत है, खुद अपने लिए और समाज के लिए भी। राजनीति इस कदर हमारे जीवन का हिस्सा हो चुकी है कि उससे मुह मोड़ के रहने से काम नहीं चल सकता। जीवन के हर प्रसंग में राजनीति का हस्तक्षेप है, ऐसे में व्यक्ति का राजनितिक होना जरूरी है।

पर्यावरण के प्रति लेखक की चिंता हमें आने वाले बड़े खतरे के लिए आगाह कर रहा है। विकास के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का लगातार दोहन हो रहा है। पानी जैसी जरूरी वस्तु भी जनता की पहुँच से दूर जा रहा है।

रघुवीर सहाय की दृष्टि बहुआयामी है। स्त्रियों के जीवन संघर्ष और विडम्बनाओं पर भी इन्होंने बहुत कुछ लिखा है। इनकी कई कविताएँ स्त्रियों को विषय बना कर लिखी गई हैं। उन कविताओं में परम्परागत दृष्टिकोण से अलग स्त्री को देखने का प्रयास लेखक द्वारा किया गया है। स्त्री उत्पीड़न के ब्राह्मणवादी और पितृसत्तात्मक नजरिए पर भी बात की गयी है एवं इस स्थिति में बने रहने के लिए स्त्री समुदाय की आलोचना भी की गयी है।

इन बिन्दुओं को देखते हुए कहा जाना चाहिए की रघुवीर सहाय एक सार्थक कवि हैं। और इनकी कविताएँ समाज को बेहतर दिशा दिखने में कारगर साबित हो सकती है।

8.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

- रघुवीर सहाय आजादी के बाद की हिन्दी कविता में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं ।
- रघुवीर सहाय 'दूसरा सप्तक' के माध्यम से हिंदी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत हुए।
- रघुवीर सहाय ने दैनिक जीवन की सामान्य घटनाओं को कविता का विषय बनाया।
- रघुवीर सहाय के काव्य में सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना बहुत स्पष्ट है।
- रघुवीर सहाय के काव्य की भाषा-शैली सरल तथा सहज है।

8.6 शब्द संपदा

1. अनुभूति = महसूस करना
2. अभिव्यक्ति = व्यक्त करना

3. आम जनता = सामान्य लोग
4. धरातल = जमीन
5. प्रहार = आक्रमण
6. लोकतंत्र = एक प्रकार की शासन व्यवस्था जो कि जनता द्वारा चुने प्रतिनिधियों के नेतृत्व में होता है।
7. विद्रूपता = कुरूपता
8. विसंगति = असंगत
9. संवेदना = सहानुभूति
10. स्वाधीन = स्वतंत्र

8.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. रघुवीर सहाय के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
2. रघुवीर सहाय के रचनाकर्म को रेखांकित कीजिए।
3. रघुवीर सहाय एक राजनीतिक कवि के रूप में जाने जाते हैं। स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रघुवीर सहाय के गद्य लेखन की आलोचना कीजिए।
2. तार सप्तक से आप क्या समझते हैं ? लिखिए।
3. रघुवीर सहाय की पत्रकारिता पर संक्षिप्त नोट लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. रघुवीर सहाय का जन्म कब हुआ। ( )
   (अ) 1917 (आ) 1922 (इ) 1929 (ई) 1931
2. रघुवीर सहाय किस तार सप्तक कवि थे। ( )
   (अ) तार सप्तक (आ) दूसरा सप्तक (इ) तीसरा सप्त (ई) चौथा सप्तक

3. 'एक समय था' काव्य संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था। ( )
(अ) 1960 (आ) 1982 (इ) 1989 (ई) 1994

4. 'लोग भूल गए हैं' किस विधा की रचना है- ( )
(अ) कहानी (आ) निबन्ध (इ) काव्य (ई) अन्य

5. दूसरा सप्तक का समय है ( )
(अ) 1943 ई. (आ) 1951 ई. (इ) 1959 (ई) कोई नहीं

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. रघुवीर सहाय का जन्म ..... हुआ था।
2. रघुवीर सहाय ..... के सह संपादक थे।
3. ..... पत्रिका का अज्ञेय के साथ संपादन किया।
4. रघुवीर सहाय को ..... कहा जाता है
5. आत्महत्या के विरुद्ध ..... का कविता संग्रह है।

III सुमेल कीजिए -

1. दिनमान	(अ) जन्म
2. वाक्	(आ) संपादक
3. आकाशवाणी	(इ) अंग्रेजी
4. लखनऊ	(ई) समाचार

8.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक कवि : विश्वम्भर 'मानव'
2. रघुवीर सहाय का रचना कर्म : सुरेश शर्मा
3. रघुवीर सहाय संचयिता : सं. कृष्ण कुमार
4. हिंदी साहित्य का इतिहास : डॉ. नगेन्द्र

इकाई 9 : रघुवीर सहाय की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ और व्याख्या)

रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 उद्देश्य
9.3 मूल पाठ : रघुवीर सहाय की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ और व्याख्या)
9.3.1 रघुवीर सहाय का कवि परिचय
9.3.2 'मौका' कविता का वाचन और व्याख्या
9.3.3 'पराजय' कविता का वाचन और व्याख्या
9.3.4 'इतिहास' कविता का वाचन और व्याख्या
9.3.5 'उसकी ऊब' कविता का वाचन और व्याख्या
9.3.6 'हिंदुस्तानी अमीर' कविता का वाचन और व्याख्या
9.4 पाठ सार
9.5 पाठ की उपलब्धियाँ
9.6 शब्द संपदा
9.7 परीक्षार्थ प्रश्न
9.8 पठनीय पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

रघुवीर सहाय (जन्म 9-12-29 और निधन 30-12-90) को आप हिंदी साहित्य में 'दूसरा सप्तक' के एक कवि के रूप में पाओगे। वे समकालीन हिंदी कविता के संवेदनशील 'नागर' चेहरा भी कहे जाते हैं। आपने जटिल होते हुए कवि कर्म को सरल बनाया। पत्रकार होने की वजह से आपकी ज़्यादातर कविताओं में आपको कोई न कोई खबर मिलेगी। वे आपको दीन-दुनिया की खबर लेते दिखाई देंगे। उन्होंने सड़क, चौराहा, दफ्तर, अखबार, संसद, बस, रेल, और बाज़ार पर उन्हीं की बेलौस भाषा में कविताएँ लिखीं। रघुवीर सहाय का अंतिम कविता संग्रह 'एक समय था' (1995) है। आपको जो कविताएँ अध्ययन के लिए यहाँ दी जा रहीं हैं वे सब इस संग्रह में मौजूद हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि ये कविताएँ उन्होंने अपने जीवन के अंतिम वर्षों में लिखी थीं। एक तरह से ये कविताएँ उनके संपूर्ण कविता लेखन का आदि, मध्य और अंत हैं। इन कविताओं में बीसवीं सदी के सीमांत पर भारतीय मनुष्य की जिंदगी का हाल है। भाषा के लिहाज से ये सब कविताएँ बहुत सरल हैं पर भाव इन सबका बड़ा गंभीर है। आपको इन कविताओं को पढ़ते समय - इनकी व्याख्या करते समय - यह ख्याल रखना है कि ये सब कविताएँ आज भी ताजी हैं। ये 'कविता में लिखी खबरें' हैं। इसीलिए कवि-आलोचक अशोक वाजपेयी रघुवीर सहाय को 'सार्वजनिक कविता लिखने वाला कवि' कहते हैं और विश्व नाथ प्रसाद तिवारी के अनुसार रघुवीर सहाय का काव्य संसार मामूली, अभाव-ग्रस्त और उपेक्षित

जिंदगी का संसार है। आज के वक्त में आम आदमी का सिर उठाकर जीना मुश्किल हो गया लगता है। ये कविताएँ इस स्थिति की पहचान आपको कराएंगी। आप को बस अपने शब्दों में इस सर्जनात्मक खबरधर्मी पत्रकार रघुवीर सहाय की इन कविताओं का अंतरंग पाठ करना है, बाकी सब अपने आप होता चलेगा।

9.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- रघुवीर सहाय की कविताओं से परिचित हो सकेंगे।
- इन कविताओं में निहित काव्य सौंदर्य को उद्घाटित कर सकेंगे।
- इन कविताओं में निहित चिंता और चेतनाओं की चर्चा कर सकेंगे।
- इन कविताओं के माध्यम से कवि की भाषिक और शैली संबंधी विशेषताओं को उद्घाटित कर सकेंगे।
- कवि रघुवीर सहाय की जीवन दृष्टि से परिचित हो सकेंगे।
- अध्येय कविताओं की संदर्भ सहित व्याख्या कर सकेंगे।

9.3 मूल पाठ : रघुवीर सहाय की पाँच प्रतिनिधि कविताएँ (संदर्भ और व्याख्या)

9.3.1 रघुवीर सहाय का कवि परिचय

आपने यह तो पढ़ ही लिया कि रघुवीर सहाय अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' के कवि हैं। आपने कविता के अलावा, कहानी, निबंध, पत्रकारिता, अनुवाद आदि विषयों में भी लेखन किया है। लेकिन उनके कवि रूप की ही ज्यादा चर्चा होती है। और आप यहाँ भी कवि की कुछ प्रतिनिधि कविताओं का पाठ करने वाले हैं। उनके द्वारा लिखे गए कविता संग्रहों में एक को तो साहित्य अकादमी ने पुरस्कृत ही किया। वे पत्रकारिता के बीच भी एक कवि की हैसियत से लगातार सक्रिय और खबरदार रहते हैं। यही कारण है कि उन्होंने अपना ज़्यादातर लेखन पत्रकारिता के इलाके में पूरा किया है। यही उनका जीवन था। इसलिए उनकी रचनाओं को खबर धर्मी कहा जाता है। राह चलते, बस में बैठे, सभा में भाषण सुनते, कभी कभी कविता सुनते हुए ही वे कागज पर गोद गाद कर कविता बना लेते थे। समय समय पर लिखी गईं असम्बद्ध टिप्पणियाँ और अधूरे वाक्य कविता के रूप में आते हैं। रघुवीर सहाय अपनी कविताओं के द्वारा हिंदी कविता के क्षेत्र में एक नए युग की शुरुआत करते हैं। वे अपनी कविता में लगातार खबरे लिखते हैं। ध्यान से देखें गे तो आपको यहाँ पढ़ने के लिए संकलित की गई ज़्यादातर कविताओं में एक न एक खबर अवश्य है। वे नए अनुभवों की खबर कविता के द्वारा देते हैं। आपकी काव्य भाषा खबर की भाषा है। इन कविताओं में वक्तव्य है, विवरण है और संक्षेप में खबर है । सहाय जी का पत्रकार व्यक्तित्व और कवि-व्यक्तित्व एक दूसरे से मिल गए हैं। उनकी कविता में परेशान आदमी की जिंदगी का हाल दर्ज़ है। कवि के सातों संकलनों में कविता के जितने भी रंग हैं सभी अखबारी कागज के केनवास पर फैले से लगते हैं जिसमें जिंदगी का

मटमैलापन उभर-उभर आता है। कवि, खबरनवीस और मूल मनुष्य के अंतःसंघर्ष के बीच यहाँ कविता उपजती है।

आप इस बात पर भी गौर करते हुए पढ़ें कि रघुवीर सहाय की अधिकांश कविताओं को बोले हुए गद्य की तरह, उपयुक्त विराम चिन्हों के साथ लिखा जा सकता है ।

आइए, आप अब अपने पाठ्यक्रम में निर्धारित रघुवीर सहाय की 'मौका' (एक समय था, पृष्ठ 33), 'पराजय के बाद' (पृष्ठ 35), 'इतिहास' (पृष्ठ 51), 'उसकी ऊब' (पृष्ठ 59) और 'हिंदुस्तानी अमीर' (पृष्ठ 87) कविताओं का पाठ करें। एक-एक कविता को अलग-अलग देखें। हर कविता के सही-सही पाठ से आपको उसके अर्थ और उसमें दिये गए भाव और संवेदना का परिचय होगा। कविताएँ बहुत सरल हैं और इन्हें तो बड़े-बड़े आलोचकों ने भी 'गद्य-कविता' कहा है। फिर भी सब कविताओं की पदानुसार व्याख्या आपने लिए प्रस्तुत है। इसे आप ध्यान से पढ़ें। साथ में एक पेंसिल भी रखें जिससे आप अपनी बात भी वहीं नोट कर सकें।

9.3.2 'मौका' कविता का वाचन और व्याख्या

नेता ने कहा कि सब भ्रष्ट हो गया है सो ठीक कहा
हिम्मत की
पर हिम्मत नहीं थी लोग यह पहले ही जान चुके थे
अब यह केवल स्वीकार था कि मैं पिछड़ गया हूँ
समाज को समझने में।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मौका' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : यहाँ कवि एक आम आदमी का प्रतिनिधि बनकर दूसरे आम आदमी को अपने समय की राजनीति और नेताओं की मानसिकता को बता रहा है। वह नेता के उस कथन की चर्चा कर रहा है जिसमें कहा गया था कि चारो ओर भ्रष्टाचार फैला है। हर नेता भ्रष्ट है। इस नेता ने बस इतनी हिम्मत की कि सच बोल दिया। कुछ छिपाया नहीं। वे आपस में यह भी कह रहें हैं कि इसमें कोई खास बात नहीं। यह कोई भेद भरी बात भी नहीं। नेताओं के भ्रष्ट आचरण के बारे में अब कौन नहीं जानता। जो नहीं जानता वह एक तरह से मूर्ख या नासमझ ही है।

नेता कुछ **बता नहीं रहा**
जो जनता अभी नहीं देख रही
और यह तो बिल्कुल नहीं कह रहा कि यह जो पतन है
वह किस अर्थनीति का नतीजा है
वह केवल उसी अर्थ नीति में विरोध की बात करता है
जिसका मतलब है अभी जो शासक है वैसा ही बनेगा
सिर्फ भ्रष्ट नहीं होगा, ऐसा कहता है ।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मौका' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : आम आदमी के रूप में कवि की समाज और राजनीति पर टिप्पणी है कि जब कोई नेता नेताओं के बीच फैले भ्रष्टाचार के बारे में कहता है तो कोई भेद नहीं खोलता। यह कोई ऐसा रहस्य नहीं जिसे कोई न जानता हो। नेता जी ये नहीं कह रहे कि यह आचरण पैसे या धन के कारण है। वे तो यह कह रहें हैं कि पुरानी सरकार की गलत नीतियों के कारण कुछ घोटाले हुए। शायद वह यह कहना चाहता है कि कोई दूसरा भी आ जाए वह वैसा ही रहेगा। किन्तु भ्रष्ट न हो सकेगा। बस इतना ही हो सकेगा यदि कोई आमूल चूल परिवर्तन न हो।

इस बार नेता का पतन राजनीति के द्वारा रोका नहीं जा सकता
जब तक कि राजनीति बदली नहीं जाती
एक बड़ी विपदा के छोटे-छोटे घेरों में कौन अच्छा कौन बुरा
उसकी किस पहचान का आखिर क्या मतलब ?

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मौका' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कवि आम आदमी के विचारों को शब्द और स्वर देते हुए कहता है कि नेता आदतन भ्रष्ट होते हैं। वे इसके अनेक अवसर जो पाते हैं। उन्हें भ्रष्ट होने के अनेक मौके जो मिलते हैं। वर्तमान राजनीति का चलन ही ऐसा है। जब तक राजनीति के इस पुराने ढर्रे में बदलाव नहीं आता तब तक मामलात संगीन ही रहेंगे। एक उदाहरण देकर बात को समझा जा सकता है। हरेक दल अपने इर्द गिर्द एक घेरा बनाकर उसमें खुद को कैद कर लेता है। उस घेरे में क्या नेता और क्या दूसरे लोग सब गोल-गोल घूमते रहते हैं। उससे बाहर आने से डरते हैं। यह घेरा जाति, धर्म, संप्रदाय, भाषा आदि किसी का भी हो सकता है। यही उसकी पहचान हो जाती है जो बेमतलब जरूर है, फिर भी लोग उस पहचान को लिए फिरते हैं। वे एक ओर तो अपने घेरे से जुड़ते हैं तो दूसरी ओर दूसरों के बनाए घेरों की आलोचना करते हैं।

तब नेता का यह कथन कि देखो यह वर्तमान
लोगों को उकसा रहा है कि वे अतीत को भूल जाएँ
और भविष्य के लिए आशंका ग्रस्त हों
यदि शासक अपने कामों से पराजय को प्राप्त हो
तो वह जनता की जीत नहीं है :
वह एक और पतन के लिए
एक और भ्रष्टाचार में लूट के लिए
किसी और नेता को मौका देने की बात है।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मौका' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कवि कहता है कि ऐसी हालत राजनीति, समाज और देश की हो गई है कि कोई किसी दूसरे की नहीं सुनता। नेता गण एक दूसरे को बुरा कहते हैं। यदि कोई यह कहता है कि वर्तमान को देखो तो दूसरा कहेगा कि ये तो अतीत और भविष्य को भूलने को कहता है। या भविष्य का डर दिखा रहा है। लोगों को इतिहास या बीते हुए समय की बातों को भूलने का पाठ पढ़ा रहा है। कवि एक आम आदमी के विचारों से सहमत होते हुए यह कह रहा है कि हमें बहुत सावधान रहना होगा। ये नेता और शासक एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। एक से हैं। इनमें कोई खास अंतर नहीं है। यदि एक भ्रष्ट नेता को जनता हटा देती है। वोट के द्वारा जनता किसी दूसरे को उसके पद पर बैठा देती है, तो भी कोई जरूरी नहीं कि वह भ्रष्ट न होगा। कवि तो यह कहता है कि मानसिकता बदले बगैर नेता बदलने से भ्रष्टाचार में कमी नहीं आएगी। यह तो एक भ्रष्ट नेता को हटाकर दूसरे को मौका देना भर है।

लोग जानते हैं सब मगर जान लेना सब
राजनीति छोड़ ही देना है पतन के सहारे
क्योंकि जनता ने सब जाना , केवल विकल्प नहीं जाना
कोई विकल्प नहीं हो सकता उस समाज में जहां
लोग सब जानते हैं केवल उसी का अस्वीकार होता है
कोई तो बताए वह जो अभी लोगों को पता नहीं
लोगों को याद कोई यह दिलाए कि जो बीता
वह उनका किया था क्योंकि वे कुछ नहीं करते थे ।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'मौका' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कवि ने इस कविता के द्वारा राजनीति और नेताओं के नैतिक पतन को विस्तार से बताया है। कवि कहता है कि प्रजातंत्र में जनता का कार्य होता है वोट देना। और वोट देने का काम करके वे अलग-अलग दलों के नेताओं को मौका देते हैं कि वे कुछ काम करें। पर वे नेता उस मौके का फायदा उठाकर बारी-बारी से अपने हित में काम करते हैं। अपना उल्लू सीधा करते हैं। जनता को उसके हाल पर छोड़ देते हैं। इन पंक्तियों के द्वारा कवि लोगों को यह बता देना चाहते हैं कि जनता को 'विकल्प' की पहचान होनी चाहिए। उन्हें समझना होगा कि बदलाव केवल कहने भर को न हो। जिसको लाया जाए उसे देख समझकर लाया जाए। वरना चेहरे बदल जाएँगे और एक के बाद एक दूसरे इस बात का मौका पा जाएँगे कि वे हमारा हित करने के बजाय खुद का फायदा करें। चुनाव करने वाले जब तक सही आदमी का चुनाव करना नहीं सीखेंगे, तब तक एक के बाद दूसरे को भ्रष्टाचार करने का मौका देते रहेंगे। किसी को तो पहल करनी होगी जो लोगों को उनकी यह आदत छुड़ाए। कोई जब तक इस यह नहीं बताएगा कि पहले जो कुछ ठीक न हुआ उसके पीछे उन लोगों का हाथ है जिन्होंने खुद के लिए बहुत कुछ किया किंतु जिनके वे प्रतिनिधि थे उनके लिए कुछ न किया।

बोध प्रश्न

- आम जनता नेताओं को क्या मौका देती है?
- आम जनता को बदलाव के लिए क्या करना होगा?

9.3.3 'पराजय' कविता का वाचन और व्याख्या

पराजय के बाद
तुमको लोग भूले जा रहें हैं
क्योंकि तुम जाने जाते रहे हो अपने अत्याचारों के कारण
और आज तुम हाथ खींचे हुए हो
कि तुम्हारे अत्याचारों को लोग भूल जाएँ
पर लोग तुम्ही को भूले जा रहें हैं

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'पराजय' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : इन पंक्तियों के द्वारा कवि जनता को नहीं बल्कि जन प्रतिनिधियों को सलाह देता है। वह कहता है कि जनता ने तुम्हें फिर से उन्हें लूटने का मौका नहीं दिया। यही नहीं, वे तुम्हारी हार के बाद धीरे धीरे तुम्हें भूलते चले जा रहें हैं। वे तुम्हें भूलते जा रहें हैं क्योंकि तुमने उनके लिए कोई भलाई का काम नहीं किया। पर वे तुम्हारे द्वारा किए गए गलत कामों और तुम्हारे अत्याचारों को नहीं भूले। कवि कहता है कि यदि नेता यह समझता है कि उसकी हार के बाद उसके अत्याचारों को लोग धीरे-धीरे भूल जाएँगे क्योंकि वो खुद अब उन्हें परेशान नहीं करेगा तो वह भूल कर रहा है। तुम चाहते थे लोग तुम्हारे अत्याचारों को भूल जाएँ, पर वे उन्हें दिल में रखकर उन्हीं की वजह से तुम्हें भूले जा रहें हैं। इसके लिए तुम्हें कुछ करना होगा। अपने बुरे व्यवहार और अत्याचार को कुछ समय के लिए रोकना भर काफी नहीं।

करो कुछ जिससे कि वह शक्ति दुष्टता की
लोग फिर देखें और लोग भयंकर मुग्ध हों

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'पराजय' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कवि हारे हुए जन प्रतिनिधि को सलाह देता है कि उसे कुछ ऐसा करना होगा जिससे कि लोग फिर से उसके बारे में चर्चा करें। उसे अपनी दुष्टता की शक्ति पर तो भरोसा होगा ही जिसके कारण वह पहले सफल हुआ था। इस बार पराजय मिली जरूर फिर भी उसे भरोसा रखकर कुछ ऐसा जाल फैलाना होगा कि लोग उसकी बातों में आ जाएँ। फिर से उसके चंगुल में फंस जाएँ। कवि वास्तव में आम जनता को भी सचेत कर रहा है कि पराजय के बाद हारा हुआ भ्रष्ट अत्याचारी नेता फिर से उन्हें अपनी मीठी मीठी बातों में फंसा सकता है। उन्हें सावधान रहना होगा।

एक राष्ट्र के पतन का लक्षण है कि
वे जो जीवन भर परोपजीवी रहे
सत्ता के तंत्र में
आज उससे बाहर होकर यह भ्रम फैला सकते हैं कि
वे किसी दिन यह समाज बदल देंगे
और अभी सिर्फ मौका देखते हुए बैठे हैं ।

9 जून 1961 (एक समय था, पृष्ठ 35)

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'पराजय' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कवि जन-प्रतिनिधियों के मनोविज्ञान से आम जनता को खबरदार करते हैं। वे कहते हैं कि आम जनता को यह समझना होगा कि कुछ सफ़ेदपोश नेता जो अपने अत्याचारों और भ्रष्टाचार के कारण चुनाव हार जाते हैं वे बाद में भी जनता को बरगला सकते हैं। एक बार जब वे सत्ता का स्वाद चख लेते हैं, सुविधाभोगी हो जाते हैं तो वे एक दिन भी उसके बिना नहीं रह पाते। वे आरामतलब हो जाते हैं। दूसरों की कमाई का जीवन भर फायदा उठाने वाले नेता जब चुनाव हार जाते हैं तो वे मतदाताओं को फिर से अपना शिकार बनाने के लिए ताक लगाकर बैठ जाते हैं। वे जनता को यह बता कर भरमाने की कोशिश करते हैं कि उनके पास समाज में फैली बुराइयों को दूर करने का नुस्खा है। एक बार उन्हें फिर से मौका मिलेगा तो वे यह करके दिखा देंगे। सच में तो यह होता है कि वे अपनी हार के बाद फिर से उसे जीत में बदलने का मौका ढूँढ़ रहे होते हैं।

बोध प्रश्न

- पराजय के बाद जन प्रतिनिधि किस खुशफहमी का शिकार होता है?
- पराजय के बाद जन प्रतिनिधि क्या भ्रम फैला सकते हैं और क्यों?

9.3.4 'इतिहास' कविता का वाचन और व्याख्या

इतिहास का हम करते क्या हैं
जब कुछ करते हैं तभी
इतिहास बनता है नहीं तो हम उसके उच्छिष्ट होकर
रहने को बाध्य हैं।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'इतिहास' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : इन चार पंक्तियों में सूत्र रूप से कवि खुद से और खुद के बहाने हम सब से एक प्रश्न करता है। वह खुद ही इस प्रश्न का उत्तर भी देता है। प्रश्न है, "इतिहास का हम क्या करते हैं?"

और इस सीधे से सवाल का जवाब है कि हम इतिहास का कुछ न कुछ अच्छा बुरा इस्तेमाल करते जरूर हैं। यदि इतिहास न हो तो हमारी गिनती न हो। आज जो लोग हैं वे इतिहास बना रहें हैं। यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। यदि ऐसा न हो तो हम सब इतिहास की जूठन बनने को अभिशप्त होंगे।

टूटते हुए समाज का रोना जो रोते हैं
उनके कल और परसों के आँसुओं का
प्रमाण मेरे पास लाओ
मुझे शक है ये टूटते समाज में
हिस्सा लेने आए हैं, उसे टूटने से रोकने नहीं

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'इतिहास' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : इन कुछ पंक्तियों में कवि समाज से यह आशा करता है और माँग करता है कि वे लोग जो समाज के टूटने का रोना रोते हैं और रोते ही चले जाते हैं, उनसे यदि आमने सामने बात हो तो पता चले। पता चलेगा कि आखिर ये माजरा क्या है। क्यों लोग रोते हैं समाज के विघटन के बारे में। कवि कहता है कि इन लोगों का रोना धोना असली नहीं। ये रोने का नाटक करते हैं। सच तो ये है कि ये लोग टूटते समाज का अंग रहे पर तनिक भी उसे सुधारने या टूटन से बचाने की कभी कोशिश न की। कवि उन लोगों से सावधान और बचकर रहने की सलाह देता है जो अपने समाज में फैली बुराइयों में शामिल हो रहते हैं, उनकी चर्चा भी खूब करते हैं पर उन्हें दूर करने का रत्ती भर प्रयत्न नहीं करते। ऐसे लोग बस रोते हैं करते कुछ नहीं।

इतिहास का एक क्षण होता है
जब सारी शक्तियाँ
मिल जाती हैं उसे अपने पक्ष में पलट लेने के लिए
और जिनको निकाल बाहर कर दिया है
धीरे धीरे
उनसे यह कहती है
कि तुम अब हमारे अधीन होकर रहो
सांप्रदायिकता को मान लो
नहीं मानते हो तो
सब शक्तियों के आक्रमण सहने को तैयार रहो।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'इतिहास' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कविता की इन अंतिम पंक्तियों में कवि समाहार करते हुए बहुत मार्के की बात कहता है। वह समझता है कि इतिहास या तवारीख बीते हुए वक्त का रोजनामचा है। वक्त का तक़ाज़ा

है कि उसके हर पल पर ध्यान दिया जाए। हर पल कुछ कहता है। इतिहास में ऐसे पल भी आते हैं जब बड़े-बड़े फैसले करने की जरूरत होती है। कुछ ऐसी मुसीबत या वक्त का तक़ाज़ा होता है कि गलत निर्णय हो जाते हैं। उदाहरण के लिए कोई वक्त होता है जब सांप्रदायिक ताक़तें सिर उठाकर ज़ोर जबर्दस्ती करके और आतंक फैला कर हमें अपने बस में करना चाहती हैं। ऐसे वक्त में या तो सब सहने को तैयार रहना होगा या उनके खिलाफ आवाज बुलंद करनी होगी। इतिहास बनने से पहले उस पल में सही निर्णय लेना जरूरी है वरना इतिहास कभी माफ नहीं करता।

9.3.5 'उसकी ऊब' कविता का वाचन और व्याख्या

जब मैं पूरी बात कह लेता हूँ तो
वह कहता है अय
जब वह कोई बात सुनता है तो जरा से अजब शब्द पर हँसता है
हर वक्त उसे किसी तरह
एक ऊब से छूटने की बेचैनी है
सोच की ऊब फिक्र की ऊब

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'उसकी ऊब' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : रघुवीर सहाय की ये पंक्तियाँ 'उसकी ऊब' का विवेचन विश्लेषण करती हैं। यहाँ सबसे पहले तो यह समझा जाना चाहिए कि यह ऊब 'उसकी' है। अफसर या बड़े अधिकारी की है जो अपने मातहतों की बातों का कोई माकूल जवाब नहीं देता। बस टाल-मटौल करता रहता है। उसकी ऊब से 'मैं' अर्थात आम कर्मचारी परेशान हैरान होता है। अधिकारी का काम अपने अधीनस्थों को सुविचारित सलाह और निर्देश देना होता है किन्तु अधिकारी खुद चिंतन करने से चिंतित नज़र आता है। वह कुछ पूछने पर आँय बाँय या अंट-शंट जवाब देता है। इस पर सब हैरान होते हैं। अधिकारी सोचने की ऊब और फिक्र की ऊब से खुद तो परेशान है ही अपने आधे अधूरे बयानों से सबको पशोपेश में डाल देता है।

कवि सरकारी कर्मचारियों विशेषकर अफसरों के बीच फैली इस बीमारी पर हँसता है। समझना-समझाना चाहता है कि किसी काम को लगातार करते रहने से जो आलस या ऊब तारी हो जाती है उसका इलाज़ क्या है। यहाँ आम आदमी या अफसर का मातहत इस परेशानी में है कि वह ऐसे वक्त कैसे अपने आप को समझाकर रखे। कितना मुश्किल और फिक्रमंद करने वाला है यह मंज़र जिसमें ऊब से बचने में भी इसी ऊब के सहारे की दरकार है।

बोध प्रश्न

- 'सोच की ऊब फिक्र की ऊब' से क्या तात्पर्य है?

9.3.6 'हिंदुस्तानी अमीर' कविता का वाचन और व्याख्या

किस तरह की सरकार बना रहे हैं
यह तो पूछना चाहिए
किस तरह का समाज बना रहे हैं
यह भी पूछना चाहिए
हमारे घरों की लड़कियों को देखिए
हर समय स्त्री बनने के लिए तैयार
सजी बनी

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'हिंदुस्तानी अमीर' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : कवि 'हिंदुस्तानी अमीर' कविता की शुरुआती पंक्तियों में कुछ प्रश्न उठाते हैं कि हमारे समाज की कई विडंबनाएं हैं। वे कहते हैं कि हमें समाज में फैली कई रूढ़ियों को देखना चाहिए। यही काफी नहीं कि हम प्रजातांत्रिक व्यवस्था के अनुसार ठीक ठाक सरकार बनाने में अपना योगदान दें। हमें यह भी देखना होगा कि हम अपने समाज की बेहतरी के लिए भी लगातार काम करें। वे एक उदाहरण देते हैं। हमारे घरों में लड़कियां आजकल अपने बनाव शृंगार पर कुछ ज्यादा ही ध्यान रखती हैं। कभी-कभी तो उनकी सज धज को देखकर ऐसा लगता है कि वे विवाह से पहले ही स्त्री या विवाहिता बनाने और दिखने को तैयार हैं। कवि अपने समाज में बढ़ती जा रही दिखावे की आदत पर गौर करने के लिए कहते हैं। देखा जाए तो इसमें समाज की बेहतरी के लिए एक विचारणीय बिन्दु है।

हिंदुस्तानी अमीर की भूख
कितनी घिनौनी होती है
बड़े बड़े जूड़े काले चश्मे
पाँव पर पाँव चढ़ाए
हवाई अड्डे पर एक लूट की गंध रहती है
चिकने गोल-गोल मुँह
अँग्रेजी बोलने की कोशिश करते हुए
हर किस्म का भारतीय अमीर होकर
एक किस्म का चेहरा बन जाता है
और अगर विलायत में रहा हो तो
उसका स्वास्थय इतना सुधर जाता है
कि वह दूसरे भारतीयों से
भिन्न दिखाई देने लगता है
उनमें से कुछ ही थैंक यू अँग्रेजी ढंग से कह पाते हैं
बाकी अपनी-अपनी बोली के लहजे लपेट कर छोड़ देते हैं ।

संदर्भ : प्रस्तुत पंक्तियाँ 'हिंदुस्तानी अमीर' नामक कविता से ली गई हैं जिसके रचयिता रघुवीर सहाय हैं। मूलतः यह कविता उनके काव्य संग्रह 'एक समय था' (सं. सुरेश शर्मा) में संकलित है।

व्याख्या : इन पंक्तियों में कवि रघुवीर सहाय ने हिंदुस्तानी अमीरों अर्थात विदेश से कमाई करके आए लोगों के बारे में खुलकर बात की है। यह कविता उन भारतीयों या हिंदुस्तानियों पर खुलकर व्यंग्य है जो आजकल एन आर आई के नाम से विख्यात हैं। उन हिंदुस्तानियों पर सीधे चोट है जो देश से बाहर जाकर धन कमाकर लाए हैं और अमीरी उनके चेहरे मोहरे पर झलक रही है। वे जब बोलते हैं तो उनका लहज़ा मिला जुला होता है। वे अपनी बोली बानी में बोलते हैं तो अँग्रेजी के रोज़मर्रा के जुमलों को चाहे ठीक से बोल भी न पाएँ फिर भी बोलते चले जाते हैं। कवि इन काव्य पंक्तियों में हवाई अड्डे पर आ जा रहे उन हिंदुस्तानी अमीरों के चोंचले और बनावटीपन के पीछे छिपे चेहरों को देखता है। उसके दिल पर उनका एक अक्स सा तारी हो जाता है। उसे लगता है कि वे सब देशी हिंदुस्तानी अमीर - विदेशी चाल ढाल में कुछ अजीब सी रंगत बिखेरते हैं। खास तौर से वे भारतीय जो कुछ दिन विदेश में रहकर अच्छा खाने पीने से चुस्त तंदरुस्त दिखाई देते हैं। उनका एक मिला जुला सा खाका दिल पर बनता है। इससे लगने लगता है जैसे वे सब मिलकर एक हो गए हों। अपनी भाषा और संस्कृति से बेखबर या लापरवाह ये लोग विदेशी चाल में ढलते जा रहें हैं। कह सकते हैं कि ये हिंदुस्तानी अमीर भारत के लोगों का बेहूदा रूप पेश करते हैं। चाहे वे कितनी भी कोशिश करें फिर भी वे अपनी चाल ढाल लहजे और तौर तरीकों पर आ ही जाते हैं। खास तौर से अंतराष्ट्रीय हवाई अड्डों पर इनको देखना गैरमामूली नहीं पर है तो यह गैरत भरा ही।

बोध प्रश्न

- 'हिंदुस्तानी अमीर की भूख' से कवि का क्या तात्पर्य है?
- 'हवाई अड्डे पर लूट की गंध' को अपने शब्दों में व्यक्त कीजिए।

9.4 पाठ सार

आपने इस इकाई के अंतर्गत आधुनिक कविता के सुप्रसिद्ध कवि रघुवीर सहाय की पाँच प्रतिनिधि कविताओं को पढ़ा। उनकी व्याख्या की ओर ध्यान दिया। इन कविताओं का कथ्य अलग अलग है। इन कविताओं का रचना काल भी भिन्न भिन्न है। 'मौका' शीर्षक कविता लोगों बताती है कि जनता को 'विकल्प' की पहचान होनी चाहिए। उन्हें समझना होगा कि बदलाव केवल कहने भर को न हो। वरना चेहरे बदल जाएंगे और एक के बाद एक दूसरे इस बात का मौका पा जाएंगे कि वे हमारा हित करने के बजाय खुद का फायदा करेंगे। 'पराजय के बाद' द्वारा कवि जनता को नहीं बल्कि जन प्रतिनिधियों को सलाह देता है कि जनता ने उन्हें फिर से लूटने का मौका नहीं दिया। यही नहीं, वे हार के बाद धीरे धीरे उन्हें भूलते चले जा रहें हैं। 'इतिहास' में समझाया गया है कि इतिहास या तवारीख बीते हुए वक्त का रोजनामचा है। वक्त का तक़ाज़ा है कि उसके हर पल पर ध्यान दिया जाए। 'उसकी ऊब' में सरकारी कर्मचारियों विशेषकर अफसरों के बीच फैली इस बीमारी को समझना-समझाना चाहा गया है। किसी काम

को लगातार करते रहने से जो आलस या ऊब तारी हो जाती है उसका इलाज़ क्या है। अंतिम कविता 'हिंदुस्तानी अमीर' उन भारतीयों या हिंदुस्तानियों पर खुलकर व्यंग्य है जो आजकल एन आर आई के नाम से विख्यात हैं। उन हिंदुस्तानियों पर सीधे चोट है जो देश से बाहर जाकर धन कमाकर लाए हैं और अमीरी उनके चेहरे मोहरे पर झलक रही है। वे अपने देश की हँसी करते हैं और इससे खुद भी हँसी के बायस बनते हैं। इन कविताओं में मध्य वर्ग से लेकर अमीर या उच्च वर्ग तक ही नहीं पूरा राष्ट्र बोलता हुआ लगता है, संसद के गोल महल तक की सीलन और अवसाद यहाँ है। आज जब साहित्य ही अखबार नवीसी से लगातार प्रभावित होता जा रहा है तब भाषा के साथ अनुभव को जोड़कर सीधी कविता बनाने वाले कवि रघुवीर सहाय जीवन की अव्यवस्था में व्यवस्था लाने की कोशिश करते हैं। कविताओं की सरलता इनका वह गुण है जो इन्हें संप्रेषणीय बनाती है। यही इन कविताओं को पढ़ने और इनकी व्याख्या करने से प्रतीत होता है।

9.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से प्राप्त उपलब्धियों को निम्नवत सूचीबद्ध किया जा सकता है-

1. उनकी पाँच चयनित कविताओं के पाठ, इन कविताओं की पूर्णतः सभी अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या से इनके अर्थ का ज्ञान होता है।
2. इन कविताओं के कथ्य और शैली शिल्प का बोध होता है।
3. इन कविताओं के कुछ अंशों की संदर्भ सहित व्याख्या लिखने का प्रारूप समझ में आता है।
4. कविताओं के आधार पर कवि और कवि के आधार पर कविताओं पर पूछे गए प्रश्नों का साधिकार उत्तर लिखने का अभ्यास होता है।

9.6 शब्द संपदा

1. अतीत = बीता हुआ, व्यतीत
2. उच्छिष्ट = उत्+ शिष्ट, बचा हुआ, शेष पदार्थ, जो भोजन आदि कार्य के बाद बचा रहता है।
3. ऊब = ऊबने का भाव, मन उचट जाने की स्थिति, उकताहट, बोरियत, उदासी, एकरसता से उपजी बेचैनी, खिन्नता।
4. पतन = निंदनीय आचरण करने में प्रवृत्त होना, गिरनेवाला।
5. पराजय = हार, शिकस्त।
6. परोपजीवी = दूसरे के सहारे जीवित रहनेवाला।
7. विकल्प = विभिन्नता, उपाय (जैसे-समस्या का अब कुछ भी विकल्प नहीं है)। वह अवस्था जिसमें कई विषयों या बातों में से कोई एक विषय या बात चुनने का अधिकार हो।

9.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. पठित कविताओं के आधार पर रघुवीर सहाय की कविताओं में निहित राजनीतिक और सामाजिक चेतना पर विचार कीजिए।
2. रघुवीर सहाय की कविताओं में व्यंग्य पर टिप्पणी लिखिए।
3. रघुवीर सहाय की कविताओं में कमाल की संप्रेषणशीलता है। सिद्ध कीजिए।
4. पठित कविताओं के आधार पर रघुवीर सहाय के कवि कर्म का विवेचन कीजिए।
5. "एक ऊब से छूटने की बेचैनी है, सोच की ऊब फिक्र की ऊब" निहितार्थ बताइए

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'हिंदुस्तानी अमीर' कविता के आधार पर उसका एक शब्द चित्र प्रस्तुत कीजिए।
2. 'मौका' कविता में किस मौके की ओर इशारा है और क्यों?
3. अधिकारीवर्ग की अन्यमनस्कता को 'ऊब' कविता किस प्रकार रेखांकित करती है? स्पष्ट कीजिए।
4. 'इतिहास' कविता का प्रतिपाद्य अपने शब्दों में लिखिए।
5. परोपजीवी कहकर 'पराजय' कविता में किसको चिन्हित किया गया है और क्यों?
6. "जब मैं पूरी बात कह लेता हूँ तो, वह कहता है अय" 'ऊब' शीर्षक कविता की इन पंक्तियों में 'अय' पर ध्यान देते हुए 'मैं' और 'वह' की मनस्थिति की चर्चा कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. रघुवीर सहाय की रचना नहीं है- ( )

   (अ) सीढ़ियों पर धूप में (आ) आत्महत्या के विरुद्ध (इ) हँसो हँसो जल्दी हँसो (ई) आँसू

2. रघुवीर सहाय किन लोगों से सावधान और बचकर रहने की सलाह देते हैं? ( )

   (अ) बुरे (आ) क्रोधी (इ) मतलबी (ई) ईमानदार

3. रघुवीर सहाय के अनुसार हवाई अड्डे पर किसकी गंध रहती है? ( )

(अ) कचरे की (आ) इत्र की (इ) लूट की (ई) शराब की

4. रघुवीर सहाय ने किसे आजकल के जमाने में भ्रष्ट बताया है? ( )

(अ) नेता (आ) उद्योगपति (इ) साधु (ई) आम व्यक्ति

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. रघुवीर सहाय का काव्य संसार ..... जिंदगी का संसार है।
2. रघुवीर सहाय की कविता को बड़े बड़े आलोचकों ने ..... कहा है।
3. कवि के साथ साथ रघुवीर सहाय पेशे से ..... भी थे।
4. हमारे घरों की ..... को देखिए, हर समय ..... बनने को तैयार।

III. सुमेल कीजिए -

1. मौका	(क) अँग्रेजी भाषा का अशुद्ध प्रयोगकर्ता
2. पराजय	(ख) किंकर्तव्यविमूढ़ अधिकारी
3. इतिहास	(ग) विकल्पहीन
4. उसकी ऊब	(घ) सांप्रदायिकता को मनवाने का झांसा देने वाला
5. हिंदुस्तानी अमीर	(च) परोपजीवी

9.8 पठनीय पुस्तकें

1. एक समय था : रघुवीर सहाय (संपादक सुरेश शर्मा)

इकाई 10 : आलोचना - अवधारणा और स्वरूप (काव्यालोचन का विशेष संदर्भ)

रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 मूलपाठ : आलोचना अवधारणा और स्वरूप (काव्यालोचन का विशेष संदर्भ)
10.3.1 'आलोचना' : अर्थ और परिभाषा
10.3.2 'आलोचना' के भेद और उपभेद
10.3.3 हिंदी आलोचना का उद्भव और विकास
10.4 पाठसार
10.5 पाठ की उपलब्धियाँ
10.6 शब्द संपदा
10.7 परीक्षार्थ प्रश्न
10.8 पठनीय पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

जब हम किसी व्यक्ति को देखते हैं तो उसके विषय में कुछ विचार बना लेते हैं। कुछ लोगों के प्रति हमारी धारणा भी बन जाती है कि ये व्यक्ति ऐसा है। हम उस व्यक्ति की अच्छाइयों और बुराइयों पर बात करते हैं। इसी तरह किसी रचनाकार के संदर्भ में उसके लेखन या व्यक्तिगत जीवन की अच्छाइयों और बुराइयों पर भी विचार किया जाता है। उसकी किसी रचना का कुछ सिद्धांतों के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है। उस रचना में अभिव्यक्त बातों के आधार पर उसकी कमियों और अच्छाइयों पर नजर डाली जाती है। यह सब करना आलोचना कहलाता है।

10.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप-

- 'आलोचना' अर्थ और परिभाषा से अवगत हो सकेंगे।
- 'आलोचना' के भेद-उपभेद के विषय में जान सकेंगे।
- 'आलोचना' के उद्भव और विकास से परिचित हो सकेंगे।
- विभिन्न युगों यथा- भारतेंदुयुगीन आलोचना, द्विवेदी युगीन आलोचना, शुक्ल युगीन आलोचना आदि के विषय में जान सकेंगे।
- विभिन्न आलोचकों की आलोचना दृष्टि का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- आलोचना के समकालीन परिदृश्य को जान सकेंगे।

10.3 मूल पाठ : आलोचना - अवधारणा और स्वरूप (काव्यालोचन का विशेष संदर्भ)

10.3.1 'आलोचना' शब्द का अर्थ, परिभाषा और उद्देश्य

'आलोचना' शब्द 'लोचृ' धातु से बना है, 'लोचृ' का अर्थ है देखना- अतः आलोचना का अर्थ है 'देखना'। किसी वस्तु या कृति की सम्यक व्याख्या उसका मूल्यांकन आदि करना ही आलोचना है। डॉ. श्यामसुंदरदास लिखते हैं 'साहित्य-क्षेत्र में ग्रंथ को पढ़कर उसके गुणों और दोषों का विवेचन करना और उनके संबंध में अपना मत प्रकट करना आलोचना कहलाता है। यदि हम साहित्य को जीवन की व्याख्या मानें तो आलोचना को उस व्याख्या की व्याख्या मानना पड़ेगा।' जहां तक आलोचना के उद्देश्य का सवाल है तो गुलाबराय ने लिखा है 'आलोचना का मूल उद्देश्य कवि की कृति का सभी दृष्टिकोणों से आस्वाद कर पाठकों को इस प्रकार के आस्वादन में सहायता देना तथा उसकी रुचि को परिमार्जित करना, साहित्य की गति निर्धारित करने में योग देना है।'

बोध प्रश्न

- 'आलोचना' शब्द का अर्थ बताइए।

10.3.2 आलोचना के भेद और उपभेद

आलोचना के मुख्यतः दो भेद किए जा सकते हैं - (1) साहित्यिक समीक्षा (2) वैज्ञानिक समीक्षा

(1) साहित्यिक समीक्षा- इस समीक्षा में समीक्षक का लक्ष्य व्यक्तिगत दृष्टि (subjective- सब्जेक्टिव) से कृति के संबंध में सुनिश्चित और संतुलित निर्णय देना होता है। साहित्यिक समीक्षा जहां कला या साहित्य की कोटि में आती है।

(2) वैज्ञानिक समीक्षा– इस समीक्षा में वस्तुगत (objective- अब्जेक्टिव) दृष्टि से कृति का प्रामाणिक विवेचन, विश्लेषण करते हुए उसके संबंध में सुनिश्चित और संतुलित निर्णय देने का होता है। वैज्ञानिक समीक्षा में शैली या पद्धति भावात्मक न होकर विचारात्मक होती है। वैज्ञानिक समीक्षा में शैली या पद्धति भी भावात्मक न होकर विचारात्मक होती है। वैज्ञानिक समीक्षा विज्ञान या अनुसंधान की श्रेणी में रखी जा सकती है। इनके भी कई भेद और उपभेद हैं। ऐतिहासिक, सैद्धांतिक, एवं व्यावहारिक।

समीक्षक के द्वारा प्रयुक्त दृष्टिकोणों के आधार पर इन सबके तीन-तीन उपभेद और किए जा सकते हैं। जैसे- शास्त्रीय, मनोविश्लेषणात्मक, समाजवादी। इसके अलावा अन्य भी कई भेद और उपभेद हैं।

बोध प्रश्न

- साहित्यिक समीक्षा किसे कहते हैं?

10.3.3 हिंदी आलोचना का उद्भव और विकास

भारतेन्दु युगीन आलोचना

हिंदी आलोचना का इतिहास रीतिकाल के थोड़ा पहले शुरू होता है। सच तो यह है कि रीतिकाल का रीतिबद्ध साहित्य रीतिवादी आलोचना से प्रभावित है, और लक्षणों के उदाहरण रूप में रची गई है। आधुनिक काल में भारतेन्दु जी ने जो 'नाटक अथवा दृश्य काव्य सिद्धांत' शीर्षक निबंध लिखा था उसका आलोचना के क्षेत्र में विशेष महत्व है। भारतेन्दु युग में आलोचना पत्र-पत्रिकाओं के लेखों, टिप्पणियों तथा निबंधों के जरिए आगे बढ़ी। वजह थी वैचारिकता का आग्रह। आलोचना उन विधाओं में से है जिसका विकास पश्चिमी साहित्य की नकल पर नहीं हुआ। यह भारत में अपने साहित्य पर विचार करने, उसकी उपादेयता को समझने की जरूरत के कारण विकसित हुई। भारतेन्दु ने 'हिंदी के नाटकों का स्वरूप कैसा होना चाहिए' इस बात को अपने ज़ेहन में रखकर अपने विचार प्रकट किए हैं। विचारों के इस प्रकटीकरण को हिंदी आलोचना का विकास माना जा सकता है।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने 'नाटक अथवा दृश्य काव्य सिद्धांत' शीर्षक आलोचनात्मक निबंध में नाटक पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है। इसमें आलोचना के प्रारम्भिक बिन्दु भी दिखते हैं। वे लिखते है 'नाटक शब्द का अर्थ है नट लोगों की क्रिया। नट कहते हैं विद्या के प्रभाव से अपने वा किसी वस्तु के स्वरूप के फेर कर देने वाले को, वा स्वयं दृष्टि रोचन के अर्थ फिरने को। नाटक में पात्रगण अपना स्वरूप परिवर्तन करके राजादिक का स्वरूप धारण करते हैं वा वेषविन्यास के पश्चात रंगभूमि में स्वकीय कार्यसाधन के हेतु फिरते हैं।'

आलोचना के अंतर्गत किसी सम्पूर्ण कृति के गुण-दोषों का कार्य हिंदी में बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन' तथा बाल कृष्ण भट्ट के द्वारा प्रारंभ हुआ। 'आनंद कादंबिनी' के एक अंक में प्रेमघन जी ने बाणभट्ट की कादंबरी की आलोचना एक लेख में की थी। 1885 ई. में 'आनंद कादंबिनी' पत्रिका में प्रेमघन जी ने बाबू गदाधर सिंह द्वारा किए गए 'बंग-विजेता' नामक बांग्ला उपन्यास के हिंदी अनुवाद की आलोचना की। प्रेमघन जी ने इस अनुवादित उपन्यास के अंतरंग-बहिरंग दोनों पक्षों पर विचार करने का काम किया है।

प्रेमघन जी ने लाला श्रीनिवास दास के नाटक 'संयोगिता स्वयंवर' की समालोचना आनंद कादंबिनी पत्रिका में की थी। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ लोगों ने इस नाटक की जरूरत से ज्यादा तारीफ कर दी थी। संयोगिता स्वयंवर की ही कड़ी आलोचना 'हिंदी प्रदीप' नामक पत्रिका में बाल कृष्ण भट्ट ने की थी। आलोचना का शीर्षक था- 'सच्ची समालोचना'। यह आलोचना सच्ची तो थी ही कटु भी थी। बाल कृष्ण भट्ट जी ने ही श्रीधर पाठक द्वारा अनूदित गोल्ड स्मिथ की रचना 'हरमिट' की भी समालोचना 'हिंदी प्रदीप' में की थी। यह समालोचना प्रशंसात्मक थी। विश्वनाथ त्रिपाठी जी लिखते हैं 'प्रेमघन और भट्ट जी ने वस्तुतः भारतेन्दु के कार्य को आगे बढ़ाया। भारतेन्दु ने यद्यपि 'नाटक' पर एक लेख लिखकर हिंदी में आलोचना का सूत्रपात किया।'

बोध प्रश्न

- नाटक तथा नट के विषय में भारतेन्दु हरिश्चंद्र के विचार लिखिए।

द्विवेदी युगीन आलोचना

मिश्रबंधु

हिंदी आलोचना के क्षेत्र में मिश्रबंधु (गणेश बिहारी मिश्र, शुकदेव बिहारी मिश्र और श्याम बिहारी मिश्र) का नाम बहुत ही सम्मान के साथ लिया जाता है। हालांकि उनकी जिस पुस्तक के आधार पर उन्हें ये सम्मान मिलता है असल में वह पुस्तक कविवृत्त संग्रह है। इन्होंने प्रसिद्ध कवियों पर स्वतंत्र रूप से निबंध लिखे थे जो 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हुए थे। नौ कवियों का चयन कर उनकी जीवनियों के साथ उनके काव्यगत वैशिष्ट्य को उद्घाटित किया गया था। यही कारण है कि इन्होंने इस पुस्तक का नाम 'हिंदी नवरत्न' रखा था। हिंदी नवरत्न में निम्नलिखित कवियों को स्थान दिया गया था- गोस्वामी श्री तुलसीदास, महात्मा सूरदास, महाकवि देवदत्त देव, महाकवि बिहारीलाल, त्रिपाठी बंधु - भूषण और मतिराम, महाकवि केशवदास, महात्मा कबीरदास, महाकवि चंदबरदाई और भारतेन्दु बाबू हरिश्चंद्र।

उन्होंने आलोचना के संबंध कहा है कि आलोचना 'रचना का मर्म प्रकट करने वाली और उसके गुण-दोष की परख करनेवाली' होनी चाहिए। मिश्र बंधु बिहारी के प्रशंसक होते हुए भी देव को उनसे बाद कवि मानते हैं।

बोध प्रश्न

- 'मिश्रबंधु' में तीनों भाइयों के नाम लिखिए।

कृष्ण बिहारी मिश्र

कृष्ण बिहारी मिश्र ने 'देव और बिहारी' में दोनों कवियों की काव्य विवेचना के अतिरिक्त शृंगार के रस राजत्व पर भी विस्तृत विचार किया। वे 'रसराज' नामक अध्याय के प्रारंभ में ही लिखते हैं 'कविता का उद्देश्य हमारी राय में आनंद प्रदान करना है।' उन्होंने शृंगार रस को रसराज सिद्ध करने का प्रयास किया, आगे बढ़े और सिद्ध भी किया। उन्होंने इस संदर्भ में लिखा है 'स्त्री-पुरुष की प्रीति का स्थायित्व इतना दृढ़ है कि सृष्टिपर्यंत इन स्थायी (permanent passions) का कभी नाश नहीं हो सकता। इसीलिए कवि लोग नायक-नायिका के आलंबन को लेकर स्त्री-पुरुष की प्रीति का वर्णन करने लगे, करते रहे और करते रहेंगे।' शृंगार को रसराज कहते समय कृष्ण बिहारी मिश्र प्रेम के आदर्श की उच्चता को नहीं भूलते। विश्वनाथ त्रिपाठी लिखते हैं, 'रसराज' पढ़कर ऐसा लगता है कि पं. कृष्ण बिहारी मिश्र नामोल्लेख के बिना आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की नैतिक प्रधान साहित्यिक मान्यताओं का विरोध कर रहे हैं।' उन्होंने लिखा भी है 'हम कुरुचि प्रवर्तक कविता के समर्थक नहीं हैं। परंतु शृंगार-कविता के विरुद्ध जो आजकल धर्म-युद्ध-सा जारी कर रखा गया है, उसकी घोर नींद करने से भी नहीं हिचकते हैं... कविता के लिए केवल रस-परिपाक चाहिए, उपयोगितावाद के चक्कर में डालकर ललित कला

का सौन्दर्य नष्ट करना ठीक नही।' कृष्ण बिहारी मिश्र जी ने केशव, बिहारी, देव, मतिराम, पद्माकर, के साथ-साथ तुलसी और सूर को भी शृंगारी कवियों की कोटि में रखा है। लेकिन 'देव और बिहारी' इन शृंगारी कवियों के नेता हैं।' वे स्पष्ट रूप से देव को बिहारी से बाद कवि मानते हैं।

पद्मसिंह शर्मा

पद्मसिंह शर्मा संस्कृत, प्राकृत, हिंदी, फारसी और उर्दू साहित्य के मर्मज्ञ थे। इन्हें तुलनात्मक आलोचना का प्रवर्तक माना जाता है। बिहारी उनके प्रिय कवि थे। 'बिहारी सतसई:तुलनात्मक अध्ययन' नामक उनकी पहली पुस्तक 1918 में प्रकाशित हुई। शर्मा जी ने सतसई के उद्भव और विकास पर प्रकाश डालते हुए मुक्तकों को कविता शक्ति की पराकाष्ठा माना है। शर्मा जी ने सतसई का सौष्ठव, बिहारी का विरह-वर्णन, बिहारी का कवित्व और व्यापक पांडित्य, दोष परिहार पर विचार किया है तथा सर्वत्र बिहारी की प्रशंसा की है, उनकी तुलना में अन्य कवियों को हीन बताया है। 'सतसई संहार' नामक वृहत लेख पंडित ज्वाला प्रसाद मिश्र द्वारा लिखी गई बिहारी सतसई की टीका की समीक्षा है। इसमें शर्मा जी ने विस्तार से मिश्र जी के दोष दिखाए हैं। आज कल की भाषा में ध्वंसात्मक समीक्षा की गई है। इन्होंने बिहारी के दोहों की तुलना गाथा सप्तशती और आर्या सप्तशती से की है।

लाला भगवान 'दीन'

लाला भगवान 'दीन' अपने नाम के आगे 'दीन' उपनाम भी जोड़ते थे। उन्होंने कृष्ण बिहारी मिश्र की पुस्तक 'देव और बिहारी' के उत्तर में 'बिहारी और देव' लिखी। बिहारी के बाद उनकी पसंद के दूसरे कवि केशवदास थे। केशव की तुलना में भी वे देव को निकृष्ट कवि सिद्ध करने को कटिबद्ध दिखाई देते हैं। बिहारी की आलोचना पर वे बहुत क्षुब्ध हुए और लिखा 'एक बिहारी पर चार-चार बिहारियों -मिश्रबंधु- श्यामबिहारी, गणेश बिहारी, शुकदेव बिहारी और चौथे कृष्ण बिहारी का धावा देखकर बेचारा हिंदी साहित्य संसार घबड़ा गया है। लखनऊ प्रांत के निवासी बिहारियों ने रसिकराज कृष्ण बिहारी की जन्मभूमि मथुरा नगर के निवासी की कविता को हल्की ठहराकर देव पर बेतरह आसक्ति दिखाई है।' बिहारी और देव के संबंध में 'दीन' जी के महत्वपूर्ण विचार कुछ इस तरह के थे- 'बिहारी की कविता बहुत ऊंचे दर्जे की है, देव उस ऊंचाई तक नहीं पहुंचे।', 'बिहारी प्राकृतिक कवि थे, देव ठुक पिटकर कवि बन थे।', 'बिहारी सच्चा और पवित्र बुद्धिवाला सरस्वती पुत्र था। देव गंदा कुपुत्र था (पर था जरूर सरस्वती पुत्र)', 'हम बिहारी को एक महाकवि मानते हैं। और देव को टुक्कड़ कवि (पर टुक्कड़ों में अच्छा)।' उस काल में बिहारी और देव पर जो विवाद हुए उस संदर्भ में नन्द किशोर नवल लिखते हैं ' 'देव और बिहारी' नामक पुस्तक की रचना शर्मा जी की पुस्तक 'बिहारी सतसई : तुलनात्मक अध्ययन' की प्रतिक्रिया में हुई, लेकिन इन दोनों आलोचकों का मतभेद वस्तुतः घरेलू मतभेद था। दोनों रीतिवादी आलोचक थे और इस बात को लेकर झगड़ रहे थे कि बिहारी बड़े कवि हैं, या देव।'

बोध प्रश्न

- बिहारी और देव के संबंध में लाला भगवान 'दीन' के विचार बताइए।

श्याम सुंदरदास

कुछ आलोचक ऐसे हुए हैं जिन्होंने विद्यार्थियों को किताब उपलब्ध कराने के उद्देश्य से पाठ्यक्रम के अनुसार आलोचनात्मक किताबें लिखीं। उन्हीं में श्याम सुंदरदास जी भी हैं। उन्होंने खुद स्वीकार किया है कि 'साहित्यालोचन' नामक पुस्तक को उन्होंने एम. ए. के पाठ्यक्रम के लिए लिखा था। विश्वनाथ त्रिपाठी लिखते हैं 'हिंदी की आलोचना को आधुनिक और गंभीर साहित्यांग के रूप में विकसित करने का प्रयास करने वाला वह संभवतः प्रथम ग्रंथ है।' पाठ्यक्रम में चंद बरदाई, कबीर और तुलसीदास शामिल थे। इसी दृष्टि से उन्होंने 'पृथ्वीराज रासो' के संक्षिप्त संस्करण और 'कबीर ग्रंथावली' के संपादन के साथ इन ग्रंथों की विस्तृत भूमिकाएँ लिखी और तुलसीदास पर भी खोजपूर्ण निबंध लिखे।

महावीर प्रसाद द्विवेदी

महावीर प्रसाद द्विवेदी ने कई निबंध लिखे जो बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। 'कवि और कविता', 'कविता तथा कवि कर्तव्य' ऐसे निबंध हैं जिनसे हमें आचार्य द्विवेदी की काव्य-विषयक धारणाओं का पता चलता है। 'कवि और कविता' मौलाना अल्ताफ हुसैन 'हाली' के 'मुकद्दमा शेरो-शायरी' के आधार पर लिखा गया है। उन्होंने रीतिकालीन कवियों पर 'नायिका-भेद' शीर्षक निबंध में बड़ी ही गंभीर टिप्पणी की है 'राजाश्रय मिलन की देरी, राजा जी को सब प्रकार की नायिकाओं के रसास्वादन का आनंद चखाने के लिए कवि जी को देरी नहीं। 10 वर्ष की अज्ञात यौवना से लेकर 50 वर्ष की प्रौढ़ तक के सूक्ष्म से सूक्ष्म भेद बतलाकर और उनके हाव, भाव, विलास आदि की सारी दिनचर्या वर्णन करके ही कविजन को संतोष होना चाहिए, मालिन, नाइन, धोबिन इत्यादि में से इस काम के लिए कौन सबसे अधिक प्रवीण होती है, इन बातों का भी वर्णन करने से वे नहीं चूकते थे।'

द्विवेदी जी रीतिकालीन साहित्य के विरोधी थे। उन्होंने साफ तौर पर सवाल उठाया था कि केवल नायक-नायिका पर ही नहीं लिखा जाना चाहिए। वे लिखते हैं 'कविता का विषय मनोरंजक और उपदेशजनक होना चाहिए। यमुना के किनारे-किनारे केलि-कौतूहल का अद्भुत-अद्भुत वर्णन बहुत हो चुका। न परकीयाओं पर प्रबंध लिखने की कोई आवश्यकता है और न स्वकीयाओं के 'गतागत' की पहेली बुझाने की। चींटी से लेकर हाथी पर्यंत पशु, भिक्षुक से लेकर राजा पर्यंत मनुष्य, बिन्दु से लेकर समुद्र पर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पृथ्वी - सभी पर कविता हो सकती है, सभी से उपदेश मिल सकता है और सभी से मनोरंजन हो सकता है।' कुछ लोग भले ही उन्हें भाषा संशोधक और कठोर संपादक समझें लेकिन वे प्रगतिशील और सुधारवादी दृष्टि के जान पड़ते हैं। द्विवेदी जी काव्य रसिक थे। एक आलोचक के रूप में उनका मुख्य कार्य काव्य की आलोचना और संपादक के रूप में हिंदी खड़ी बोली की काव्य भाषा के

रूप में प्रतिष्ठा और उसके कवियों की खोज से संबंधित है। उन्होंने इतिहास, पुरातत्व, विज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति सहित विविध विषयों पर लेखन किया है।

बोध प्रश्न

- महावीर प्रसाद द्विवेदी के अनुसार कविता किन-किन विषयों पर हो सकती है?

शुक्लयुगीन आलोचना

आचार्य रामचंद्र शुक्ल

शुरुआत में आलोचना इस रूप में नहीं थी। इसका धीरे-धीरे विकास हुआ। प्रारंभ में केवल रचना के गुण-दोष आदि तक बात होती थी। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है 'किसी कवि या पुस्तक के गुण-दोष या सूक्ष्म विशेषताएँ दिखाने के लिए एक दूसरी पुस्तक तैयार करने की चाल हमारे यहाँ नहीं थी।' वे अन्यत्र लिखते हैं 'हमारे हिंदी साहित्य में समालोचना पहले-पहल केवल गुण-दोष दर्शन के रूप में प्रकट हुई।' शुक्ल जी की आलोचनात्मक दृष्टि को उनके 'हिंदी साहित्य का इतिहास', भ्रमरगीत सार, गोस्वामी तुलसीदास, जायसी ग्रंथावली और निबंधों में देखा जा सकता है। एक आलोचक के रूप में शुक्ल जी की सबसे महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी भूमिका यह थी की निजी पसंद-नापसंद वाली आलोचना खारिज करके उन्होंने साहित्य के वस्तुवादी दृष्टिकोण का विकास किया और सामाजिक विकास की समांतरता में साहित्य को देखने परखने पर बल दिया।

शुक्ल जी का ग्रंथ 'हिंदी साहित्य का इतिहास' 1929 ई. में प्रकाशित हुआ। यह 'हिंदी शब्द सागर' की भूमिका के रूप में लिखा गया था। फिर उसका दूसरा संस्करण 1940 में आया। हिंदी साहित्य के सभी कालों प्रवृत्तियों के रचनात्मक विकास और लेखकों पर यहाँ उनकी टिप्पणियाँ हैं। भक्ति के संबंध में शुक्ल जी लिखते हैं 'ज्ञान-प्रसार के भीतर ही भक्ति होती हैं। जहां तक हम ईश्वर को जान पाते हैं वहीं तक उसकी भक्ति कर सकते हैं।' सगुण मार्गी भक्त के विषय में लिखते हैं 'सगुण मार्गी भक्त के लिए भगवान की ओर ले जाने वाला रास्ता इसी संसार के बीच से होकर जाता है।' तुलसीदास के मूल्यांकन के संदर्भ में उनके बीज शब्द हैं-'समन्वय' और 'सर्वांगपूर्णता'। तुलसी के विषय में वे बताते हैं कि तुलसी भक्ति मार्गी थे, अतः उनकी वाणी में भक्ति के गूढ रहस्यों को ढूँढना ही अधिक फलदायी होगा। ज्ञान मार्ग के सिद्धांतों को वहाँ ढूँढने से कोई लाभ नहीं है।'

शुक्ल जी सूफी कवि जायसी पर भी गंभीरतापूर्वक विचार करते हैं। सूफियों के संबंध में शुक्ल जी का कथन द्रष्टव्य है 'इनकी रचनाओं के द्वारा हिन्दू और मुसलमानों में भावात्मक संबंध स्थापित हुए। इन रचनाओं में प्रकट हुआ कि जिस प्रकार एक मत वालों के हृदय में प्रेम की तरंगें उठती हैं उसी प्रकार अन्य मत वालों के हृदय में भी। बाह्य विभेद रहने पर भी मनुष्य मात्र में भावना के स्तर पर समानता है। ... सूफी कवि 'प्रेम की पीर की व्यंजना' करते थे।' सूरदास को उन्होंने प्रेम का-जिसके अंतर्गत पालन और रंजन आते हैं, कवि माना हैं और तुलसीदास को करुण का-जिसके अंतर्गत लोक रक्षा का भाव आता है, कवि माना है। विश्वनाथ त्रिपाठी लिखते

हैं 'तुलसी और सूर तो पहले से ही अत्यधिक लोकप्रिय कवि थे। सूफी कवि जायसी उतने लोकप्रिय नहीं थे। वे सूफी थे। आज हिंदी साहित्य के इतिहास का पाठक मुस्लिम कवि जायसी को सूर-तुलसी की कोटि में पाता है। जायसी मुस्लिम सूफी कवि थे लेकिन शुक्ल जी उन्हें भक्तों की कोटि में परिगणित किया है।' शुक्ल जी ने जायसी के पद्मावत को रामचरित मानस के बाद स्थान दिया है। जायसी के बाद शुक्ल जी ने सूर पर गम्भीरतापूर्वक लिखा है। सूर को जीवनोत्सव का कवि कहा है। सिद्ध, नाथ, कबीर और छायावाद के संदर्भ में उनकी बातों पर अवश्य ही प्रश्न चिह्न लगाया जाता है। छायावाद पर तो उनके शिष्य नन्ददुलारे वाजपेयी भी शुक्ल जी के विचारों से सहमत नहीं थे।

कविता क्या है? निबंध में वे लिखते हैं 'जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की यह मुक्तावस्था रस दशा कहलाती है। हृदय की इसी मुक्ति की साधना के लिए मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है उसे कविता कहते हैं।' शुक्ल जी के बाद आलोचना काफी विकसित हो गई है लेकिन आज भी उनके कई निष्कर्ष उसी तरह से मान्य हैं जिस प्रकार से उस समय मान्य थे।

बोध प्रश्न

- आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'कविता' किसे कहा है?

शुक्लयुगीन अन्य आलोचक

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

वे रसवादी आलोचक थे। शुक्ल जी के निधन के बाद उनकी 'सूरदास' और 'रस-मीमांसा' नामक किताब इन्हीं के संपादन में प्रकाशित हुई थी। उन्होंने रीतिकाल के प्रमुख कवियों यथा- केशव, घनानन्द, बिहारी, भूषण, रसखान आदि का मूल्यांकन किया साथ ही भिखारीदास की रचनाओं का भी संपादन किया। मिश्रजी रीतिकाल की व्याख्या 'शृंगारकाल' के रूप में करते हैं। बहुत सारे फुटकल कवियों को मिश्र जी मुख्यधारा में लेकर आए। उन्होंने रीतिकाल को 'रीतिबद्ध', 'रीतिमुक्त' और 'रीतिसिद्ध' के रूप में बाँटा।

बाबू गुलाबराय

गुलाबराय ने कई छात्रोपयोगी पुस्तकें लिखी हैं। इन पुस्तकों के माध्यम से वे विद्यार्थियों को रस, रीति, लक्षण, व्यंजन, अलंकारों आदि का सामान्य विवेचन करते हैं। इसके अलावा इनकी अन्य पुस्तकें यथा- 'हिंदी काव्य विमर्श', 'साहित्य समीक्षा', 'अध्ययन और आस्वाद' जैसी पुस्तकें भी हैं। उनके विषय में रामदरश मिश्र का यह कथन बहुत ही महत्वपूर्ण है 'गुलाबराय की समीक्षाएँ शुक्ल जी की समीक्षाओं की अपेक्षा अधिक उदार हैं क्योंकि वे समन्वयवादी थे। वे नए-पुराने, पूर्वी-पश्चिमी आचार्यों के मतों के लंबे-खोजने के लंबे उद्धरण देकर उनमें एक समन्वय खोजने के पक्षपाती रहे हैं।'

आचार्य चंद्रबली पांडेय

पांडेय जी ने उसी आलोचना की परंपरा का विकास किया जिसका विकास श्याम सुंदरदास और रामचंद्र शुक्ल ने किया था। हाँ जिसका रूप और प्रकृति काफी भिन्न थी। पांडेय जी संस्कृत और फारसी के प्रकांड विद्वान थे। उनकी बड़ी ही महत्वपूर्ण पुस्तक है 'तसव्वुफ़ अथवा सूफ़ीमत'। इस पुस्तक में संभवतः पहली बार इस विषय पर हिंदी में मौलिक और गंभीर सामग्री प्रस्तुत की गई। इसके अलावा इनकी एक प्रसिद्ध मौलिक पुस्तक 'मुसलमान' भी है। इस पुस्तक की समाप्ति के अंतिम पृष्ठ पर उन्होंने मौलाना अबुल कलम आजाद के उद्धरण को लिया है।

छायावाद युगीन कवियों/कवयित्री की आलोचना दृष्टि

जयशंकर 'प्रसाद'

प्रसाद जी मूलतः कवि थे लेकिन उनके निबंधों, भूमिकाओं आदि से हमें उनके आलोचक दृष्टि का भी पता चलता है। प्रसाद जी छायावाद और रहस्यवाद के पक्षधर थे। उन्होंने इस विषय पर जो निबंध लिखे थे उसका पुस्तकाकार प्रकाशन 'प्रसाद' जी की मृत्यु के बाद 1939 में नन्ददुलारे वाजपेयी की भूमिका के साथ हुआ। उन्होंने किसी आलोचक का नाम लिए बिना ही 'छायावाद' और 'रहस्यवाद' पर सवाल उठाने वालों को जवाब दिया। वे 'रहस्यवाद' का विवेचन भारतीय अद्वैतवाद की मानववादी धारा से जोड़कर करते हैं। वे रस को काव्य की आत्मा के रूप में स्वीकृति देते हैं।

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

निराला जी असल में कवि के रूप में विख्यात हैं। लेकिन 'गद्य जीवन संग्राम की भाषा है' और 'कविता परिवेश की पुकार है' लिखने वाले एक आलोचक भी हैं। आलोचक निराला का प्रखरतम रूप 'पंत और पल्लव' में प्रकट हुआ है। असल में यह प्रतिक्रिया स्वरूप लिखा गया था। विश्वनाथ त्रिपाठी लिखते है 'हिंदी खड़ी बोली के साहित्य में ऐसा संयोग दुर्लभ रहा है कि एक ही धारा के एक समर्थ कवि ने अपने समकालीन अन्य समर्थ कवि की ऐसी पैनी आलोचना की हो।' 'पंत और पल्लव' में पंत की रचनाओं की व्यावहारिक समीक्षा भी की गई है। व्यावहारिक समीक्षा में निराला ने केवल अपनी अंतर्दृष्टि का ही नहीं अपने प्रतिस्पर्धी कवि के गुणों को देख पाने की दुर्लभतम दृष्टि का भी परिचय दिया है। दोष देखकर वे तीव्र आलोचना करते हैं तो गुण देखकर मुक्त कंठ से प्रशंसा।'

सुमित्रानंदन पंत

पंत भी असल में कवि के रूप में ही जाने जाते हैं लेकिन उनकी आलोचक दृष्टि का पता हमें उनके काव्य संग्रह 'पल्लव' और आलोचना कृति 'छायावाद:पुनर्मूल्यांकन' में पता चलती है। 'पल्लव' की लंबी भूमिका में उन्होंने 'ब्रज' और 'खड़ी बोली' के शब्द सौकुमार्य इत्यादि पर विचार किया है। पूर्ववर्ती और नवीन छंदों की विशेषताओं और उनके औचित्य का भी विवेचन

किया है। उन्होंने भक्तिकालीन और रीतिकालीन साहित्य पर विचार करते हुए आधुनिक युग की विशेषताओं के अनुरूप होने के कारण खड़ी बोली का औचित्य सिद्ध किया है। पंत जी ने काव्य को परिभाषित करते हुए लिखा है 'कविता हमारे परिपूर्ण क्षणों की वाणी है।', और 'कविता विश्व का अंतरतम संगीत है, उसके आनंद का रोमहास है, उसमें हमारी सूक्ष्मतम दृष्टि का मर्म प्रकाश है।' छंदों के चुनाव के विषय में वे लिखते हैं 'हिंदी का संगीत केवल मात्रिक छंदों ही में अपना स्वाभाविक विकास तथा स्वास्थ्य की संपूर्णता प्राप्त कर सकता है।' उनकी कृति 'छायावाद : पुनर्मूल्यांकन' में उन्होंने सम्पूर्ण छायावादी काव्य का मूल्यांकन किया है। लेकिन कुल मिलाकर दृष्टि छायावाद की पक्षधरता ही रही है।

महादेवी वर्मा

महादेवी वर्मा मूलतः कवयित्री हैं लेकिन उनकी रचनाओं की भूमिकाओं यथा-'संधिनी' आदि की भूमिका, 'शृंखला की कड़ियाँ' 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध' शीर्षक रचनाओं में उनके आलोचक रूप को साफ तौर पर देखा जा सकता है। 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (1962)' शीर्षक पुस्तक में विज्ञप्ति के अलावा आठ आलोचनात्मक निबंध हैं। इनके शीर्षक हैं- 'साहित्यकार की आस्था', 'काव्य-कला', 'छायावाद' , 'रहस्यवाद', 'गीतिकाव्य', 'यथार्थ और आदर्श', 'सामयिक समस्या' और 'हमारे वैज्ञानिक युग की समस्या'।

छायावाद बदलाव का दौर रहा है। प्रारंभ में भाषा का बदलना एक बड़ी समस्या थी। इस समस्या को महादेवी अनुभव कर रही थीं इसीलिए छायावाद शीर्षक निबंध में उन्होंने लिखा था। 'काव्य की भाषा बदलना सहज नहीं होता और वह भी ऐसे समय जब पूर्वगामी भाषा अपने माधुर्य में अजेय हो, क्योंकि एक नवीन अनगढ़ शब्दों में काव्य की उत्कृष्टता की रक्षा कठिन हो जाती है।' वे आगे लिखती हैं 'पालयनवृत्ति के संबंध में हमारी यह धारणा बन गई है कि वह जीवन संग्राम में असमर्थ छायावाद की अपनी विशेषता है। सत्य तो यह है की युगों से, परिचित से अपरिचित, भौतिक से अध्यात्म, भाव से बुद्धिपक्ष, यथार्थ से आदर्श आदि की ओर मनुष्य को ले जाने और उसी क्रम से लौटाने का बहुत कुछ श्रेय इसी पालयनवृत्ति को दिया जा सकता है।' तत्कालीन छायावादी युग को उन्होंने गीत प्रधान कहा है। सवाल उठता है कि गीत किसे कहते हैं? 'गीतिकाव्य' शीर्षक निबंध में लिखती हैं 'सुख-दुख की भावा वेशमायी अवस्था विशेष का, गिने चुने शब्दों में स्वर-साधना के उपयुक्त चित्रण कर देना ही गीत है।' इस निबंध में उन्होंने गीतों में यथार्थ की अभिव्यक्ति को भी बताया है।

बोध प्रश्न

- महादेवी वर्मा की किताब 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध' में कौन-कौन से निबंध शामिल हैं?

परशुराम चतुर्वेदी

चतुर्वेदी जी पेशे से वकील होते हुए भी साहित्य में इतनी गहरी पकड़ और समझ रखते थे कि कहना ही क्या? उनकी उल्लेखनीय पुस्तकों में 'उत्तरी भारत की संत परंपरा', 'भारतीय

प्रेमाख्यान की परंपरा', 'संत साहित्य की भूमिका', 'कबीर साहित्य की परख', 'वैष्णव धर्म', 'रहस्यवाद', 'मध्यकालीन प्रेम साधना' आदि प्रमुख हैं। वे सूफी काव्य के गंभीर अध्येता थे। सूफी साधकों की भक्ति का स्वरूप, रहस्यवाद, सूफ़ीमत और भारतीय सूफियों के सांस्कृतिक योगदान की वे सराहना और चर्चा करते हैं। मीराबाई के महत्व को स्थापित करने वाले प्रारम्भिक आलोचकों में उनका नाम बहुत ही सम्मान के साथ लिया जाता है।

प्रमुख शुक्लोत्तर आलोचक

नन्ददुलारे वाजपेयी

शुक्ल जी की सीमाओं को वाजपेयी जी ने उद्घाटित किया। छायावादी काव्य के संदर्भ में शुक्ल जी के दृष्टिकोण को नवीन साहित्यिक संवेदना के उपयुक्त नहीं माना। वाजपेयी जी की समीक्षात्मक दृष्टि के निर्माण में छायावादी काव्य का प्रमुख योग रहा है। उसकी नूतन कल्पना-छवियों, भावों और भाषा रूपों की ओर वे विशेष रूप से आकृष्ट हुए। उनके अंदर एक प्रखर आलोचक दिखता था। 1941 में जब वे काशी हिन्दू विश्व विद्यालय आए तब से उनकी दृष्टि कुछ कुंठित सी नजर आने लगती है। या कहें की वे कुछ संयमित से नजर आने लगते हैं। इस दौर में उनके कई ग्रंथ प्रकाशित हुए यथा- 'आधुनिक साहित्य', 'नया साहित्य नए प्रश्न', 'कवि निराला', 'राष्ट्रीय साहित्य तथा अन्य निबंध' आदि।

'आधुनिक साहित्य' और 'नया साहित्य नए प्रश्न' में संगृहीत निबंधों में उनका संतुलन देखा जा सकता है। साकेत, कामायनी, प्रेमचंद, गोदान, आदि निबंध इसलिए लिखे जान पड़ते हैं कि बीसवीं शताब्दी में लिखे संकलित निबंधों को संतुलित किया जा सके। काव्य में उन्होंने सौन्दर्यानुसंधान जीवन चेतना से संपृक्त है किन्तु कथा और नाटक के आलोचना क्षेत्र में वे मुख्य रूप से मूल जीवन चेतना और सामाजिक प्रभाव तथा उसके परिदृश्य का आकलन करते हैं। नए छायावादी काव्य के मार्ग में पड़ने वाले सभी अवरोधक तत्वों का वाजपेयी जी ने जबरदस्त विरोध किया। रस की अलौकिकता को उन्होंने पाखंड कहा। उन्होंने लिखा है 'काव्य के दोनों पक्षों का-कवि की संवेदना और उसकी अभिव्यक्ति का-समन्वित विवेचन ही काव्य समीक्षा के लिए उपादेय हो सकता है।' बच्चन सिंह लिखते हैं 'वाजपेयी जी को प्रायः छायावादी, स्वच्छंदतवादी, सौष्ठववादी, रसवादी, अध्यात्मवादी समीक्षक कहा गया है। ये सारे नाम इस बात के सूचक हैं कि उनकी समीक्षा पर किसी वाद का अधिकार नहीं रहा है। छायावाद, रहस्यवाद, प्रगतिवाद में खासी दिलचस्पी लेते हुए भी वे वाद गुही नहीं थे।' उनका साफ कहना था की 'कविता की संवेदनाएँ कैसी हैं, किस कोटि की हैं-उसका बाह्य और अंतरंग सौंदर्य हमारी चेतना और सौन्दर्य दृष्टि को किस रूप में किस कारण प्रभावित करता है-मेरे लिए इतना ही ज्ञातव्य है।'

हजारी प्रसाद द्विवेदी

द्विवेदी जी ने 1940-1941 के पहले ही लिखना शुरू कर दिया था। इनकी महत्वपूर्ण पुस्तक है 'हिंदी साहित्य की भूमिका (1940)'। इस पुस्तक को द्विवेदी जी के सिद्धांतों की

बुनियादी पुस्तक कहा जा सकता है। इस पुस्तक में उन्होंने शुक्ल जी की बातों का खंडन करते हुए कहा 'ऐसा करके मैं इस्लाम के महत्व को भूल नहीं रहा हूँ, लेकिन ज़ोर देकर कहना कहता हूँ कि यदि भारत में इस्लाम नहीं आया होता तो भी इस साहित्य का बारह वैसा ही होता जैसे आज है।' इस पुस्तक में उन्होंने आलोचना की ऐतिहासिक पद्धति की प्रतिष्ठा की। उनकी पुस्तक 'सूर साहित्य' में अवश्य ही छायावादी भावुकता का प्राधान्य दिखता है। इसलिए विचार का पक्ष कुछ दब गया है। इसी तरह से अपनी पुस्तक 'हिंदी साहित्य का आदिकाल' में उन्होंने सिद्धों और नाथों की रचनाओं को साहित्य की कोटी में स्वीकार किया है। उनकी पुस्तक 'कबीर' कबीर के संदर्भ में एक अत्यंत महत्वपूर्ण पुस्तक है। कबीर के अध्ययन में उनके दृष्टिकोण का प्रायोगिक रूप स्पष्ट हुआ है। उन्होंने कबीर के सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, और साहित्यिक नैरंतर्य को व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखा है। इसके अलावा इनकी एक महत्वपूर्ण आलोचनात्मक पुस्तक है- 'हिंदी साहित्य:उद्भव और विकास'।

वास्तव में द्विवेदी जी का मूल्यांकन व्यावहारिक समीक्षा के आधार पर किया ही नहीं जाना चाहिए। बच्चन सिंह लिखते है 'हिंदी साहित्य के आदिकाल का पुनर्मूल्यांकन करना, कबीर के विवेचन में परंपरा मुक्त काव्य संबंधी स्थिर मान्यताओं पर प्रश्न चिह्न लगाना, बिहारी की रीति बद्धता या रीति सिद्धता सिद्ध करना आदि उपलब्धियाँ हैं, जो उन्हें उन समीक्षकों की कोटि में रखती हैं, जो समय-समय पर युगानुरूप नए मूल्यांकन पर ज़ोर देते हैं'।

बोध प्रश्न

- हजारी प्रसाद द्विवेदी की आलोचना के विषय में लिखिए।

डॉ. नगेन्द्र

नगेन्द्र ने हिंदी आलोचना को व्यावहारिक एवं सैद्धांतिक दोनों दृष्टियों से संवर्धित किया है। यदि वाजपेयी जी, द्विवेदी और नगेन्द्र जी की आलोचनाओं के वृत्त बनाए जाएँ तो वाजपेयी जी की स्थिति मध्यवर्ती ठहरती है। उनकी वृत्तपरिधि एक ओर द्विवेदी जी की वृत्त-परिधि का स्पर्श करती है, तो दूसरी ओर नगेन्द्र की। सबसे पहले उन्हें छायावादी आलोचक के रूप में ही ख्याति मिली। प्रीति और विस्मय से समन्वित छायावादी काव्य की अंतर्मुखी साधना, सौन्दर्य चेतन और कलात्मक छवियों से वे विशेष आकृष्ट थे। 'सुमित्रानंदन पंत' शीर्षक पुस्तक इसी मनोदशा का परिणाम है। 'सुमित्रानंदन पंत' के एक वर्ष बाद ही 'साकेत: एक अध्ययन' का प्रकाशन उनकी शास्त्रीय रुचि का ही परिचायक है। आधुनिक हिंदी नाटक विचार और अनुभूति, आधुनिक हिंदी कविता की मुख्य प्रवृत्तियाँ आदि ग्रंथों में उनकी तीखी मनोवैज्ञानिक दृष्टि का पता लगता है।

नगेन्द्र ने रीतिकाल को महान नहीं कहा है। लेकिन उसे काव्य मानने में उन्हें ऐतराज नहीं है क्योंकि उससे आनंद की उपलब्धि होती है। उनके रस्वादी सिद्धांत पर छायावादी काव्य आंदोलन तथा पश्चिमी आलोचकों में आई.ए. रिचर्ड्स का प्रभाव दिखाई पड़ता है। बच्चन सिंह लिखते हैं-'नगेन्द्र की मान्यताओं से बहुतों का काफी मतभेद है। पर उनकी ईमानदारी, गहन

विश्लेषण क्षमता, वैचारिक एकतानता के संबंध में दो मत नहीं हो सकते। किसी साहित्यिक समस्या या विचार के विविध आयामों को वे सहज ही पकड़ लेते हैं और एक-एक का विश्लेषण काफी गहराई तक करते जाते हैं।' नगेन्द्र जी के विश्लेषण का दूसरा गुण है-निश्छल आत्माभिव्यक्ति। अपनी बात को कहने में किसी प्रकार का दुराव नहीं करते। अपनी मान्यताओं के प्रति वे पूर्णतः ईमानदार हैं। इसे कोई चाहे तो यों भी कह सकता है कि उनमें लचीलापन कम है। उनका विश्लेषण स्पष्ट, पैना और गहन होता है।

प्रगतिवादी/मार्क्सवादी आलोचना

डॉ. रामविलास शर्मा

शर्मा जी के आलोचनात्मक विकास को दो चरणों में विभक्त किया जा सकता है- 1955 के पहले का चरण और 1955 के बाद का चरण। 1955 में उनकी पुस्तक 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिंदी आलोचना' प्रकाशित हुई थी। यहीं से उनकी आलोचना का नया अध्याय शुरू होता है। उनकी आलोचना पहले की अपेक्षा अधिक गंभीर और संयमित व साहित्यिक हो उठती है। रामविलास शर्मा के लेखन को लेकर सदैव विवाद की स्थिति बनी रही। इसके बावजूद यही विवाद उन्हें एक नई ऊर्जा प्रदान करते रहे हैं और उनकी आलोचना निखरती चली गई। 1934 में उनका निराला पर पहला आलोचनात्मक निबंध और 1941 में 'प्रेमचंद' शीर्षक पुस्तक पर भी विवाद की स्थिति बनी। 'भारतेन्दु युग' (1943), 'भारतेन्दु हरिश्चंद्र' (1953) नामक पुस्तकों में उनकी मूल धारणा यही रही है कि राजभक्ति का स्वर इस युग के साहित्यकारों में जब-तब भले ही सुनाई पड़ता हो, मुसलमानों के प्रति भी अनेक आपत्ति जनक वक्तव्य उनके यहाँ मिलते हैं फिर भी यदि उनके साहित्य का गंभीर अनुशीलन किया जाए तो उनका राष्ट्रीय और लोकवादी रूप स्पष्ट दिखाई देने लगता है। इस राष्ट्रीय और लोकवादी दृष्टि से ही वे भारतेन्दु हरिश्चंद्र और उनके सहयोगी लेखकों के मूल्यांकन में प्रवृत्त होते हैं।

प्रेमचंद पर 'प्रेमचंद' (1941) और 'प्रेमचंद और उनका युग' (1952) उनकी महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं। इसमें प्रेमचंद और उस युग की गंभीर पड़ताल की गई है। 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल और हिंदी आलोचना' असल में शुक्ल जी के विरोधियों को दिए गए जवाब के रूप में है। निराला पर उनकी पुस्तक 'निराला' (1946), 'निराला की साहित्य साधना' (तीन खंडों में) में है। जो निराला को समझने और उनपर काम करने वालों के लिए किसी दीपस्तम्भ से कम नहीं है। इसी तरह से 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण' (1977) लिखकर उन्होंने इस धारणा को ध्वस्त किया कि द्विवेदी जी महज नीतिवादी कठोर संपादक और भाषा संशोधक मात्र थे। एक ओर वे रीतिवाद के समर्थकों से टकराते हैं तो दूसरी ओर उन लोगों का भी विरोध करते हैं जो छायावाद को राष्ट्रीय संदर्भों से काटकर अन्य अनेक कारणों से उसका समर्थन करते हैं। मार्क्सवादी आलोचकों से भी अनेक मुद्दों पर उनका भीषण टकराव होता है जिनमें परंपरा के मूल्यांकन का सवाल सबसे महत्वपूर्ण है। मधुरेश लिखते है 'उनके निबंधों का संकलन 'परंपरा का मूल्यांकन', इस दृष्टि से, मार्क्सवादी हिंदी आलोचना का संदर्भ कोष भी कहा जा सकता है।' रामविलास शर्मा की आलोचना पद्धति की आलोचना करते हुए मधुरेश लिखते हैं 'रामविलास

शर्मा की आलोचना पद्धति सामान्यतः अपने अनुकूल तथ्यों एवं साक्ष्यों की संपूर्ण उपेक्षा या फिर उन्हें विकृत करके प्रस्तुत करने वाली पद्धति है।'

विजय मोहन सिंह लिखते हैं 'जहां तक डॉ. राम विलास शर्मा की समीक्षा का प्रश्न है उन्होंने न तो कोई महत्वपूर्ण सिद्धांत स्थापित किए और न कोई विश्लेषणात्मक व्यावहारिक समीक्षा ही लिखी।' बच्चन सिंह लिखते हैं 'अपनी कमियों के बावजूद वे शुक्ल जी के बाद दूसरे दीपस्तम्भ हैं जिसके प्रकाश में आलोचना का मार्ग प्रशस्त होता है। इधर के आलोचकों में वे ऐसे व्यक्ति हैं जिनका सर्वाधिक प्रभाव आज की आलोचना पर पड़ा है और पड़ रहा है। हिंदी आलोचना उनकी ऐतिहासिक दृष्टि से सम्पन्नतर हुई है, उसे अकादमीय जगड़वाल से मुक्त एक नई भाषा मिली है जो व्यंग्य-विनोद से जीवंत हो उठी है। भाषाई रीतिबद्धता से आलोचना को उन्होंने वैसे ही मुक्त किया है जैसे निराला ने कविता को छंदों के बंधन से।'

डॉ. नामवर सिंह

नामवर सिंह जी की एक आलोचक के रूप में पहचान 'छायावाद' (1955) से ही बनी। बाद में 'इतिहास और आलोचना' (1962) में संकलित उनके अधिकांश निबंध लिखे गए।उनकी महत्वपूर्ण पुस्तकों में 'हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग'(1952),'आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ' (1954), 'छायावाद'(1955), 'इतिहास और आलोचना' (1962), 'कहानी नई कहानी'(1966), 'कविता के नए प्रतिमान'(1968), 'दूसरी परंपरा की खोज'(1982), और 'वाद-विवाद संवाद' (1989) आदि। 'छायावाद' पुस्तक का उद्देश्य छायावाद के काव्यगत वैशिष्ट्य के साथ ही उसमें निहित सामाजिक सत्य का उद्घाटन है। छायावाद संबंधी अपने विवेचन में वे यह सवाल भी उठाते हैं कि जिस स्वानुभूति की चर्चा छायावादी काव्य के संदर्भ में प्रायः की जाती है वह भक्तिकालीन संत और भक्त कवियों की स्वानुभूति से किस रूप में भिन्न है।

छायावाद हिंदी काव्य के विकास की दृष्टि से तो महत्वपूर्ण है ही, वह आलोचना के विकास की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। छायावाद बहुत व्यापक क्षेत्र को समेटकर चलने वाला काव्य आन्दोलन था लेकिन अपनी आवेग बहुल व्यक्तिवादी प्रकृति के कारण व्यापक जन-जीवन के कुछ पक्ष उससे छूट भी गए थे। विश्लेषण की प्रक्रिया में कहीं-कहीं उनमें अंतर्विरोध भी हैं और अतिरंजनाएँ भी। उनकी 'कविता के नए प्रतिमान' (1968) मुक्तिबोध को केंद्र में रखकर आधुनिक हिंदी काव्य को समझने का प्रयास है। कविता के मूल्यांकन के नए प्रतिमानों की बात नामवर जी भी करते हैं लेकिन सिर्फ 'नई कविता' के संदर्भ में काव्य प्रतिमानों पर पुनर्विचार की बात न करके समूची कविता के मूल्यांकन के लिए प्रतिमानों की खोज पर बल देते हैं। वे अन्य समकालीन कवियों से मुक्तिबोध को अलग करते हुए इस बात पर बल देते हैं कि काव्य-संसार की जीवंतता और सार्थकता का कारण ही यह है कि उसमें समकालीन यथार्थ का अधिक यथार्थ चित्र उपलब्ध है।

नामवर जी का मानना है कि रामचंद्र शुक्ल की समन्वयवादी परंपरा जिसके प्रतिनिधि कवि तुलसीदास हैं, के विरुद्ध हजारी प्रसाद द्विवेदी रस सिद्ध और क्रांतिकारी परंपरा के

आलोचक हैं। जिसके प्रतिनिधि कवि सूर और कबीर हैं। यही वस्तुतः दूसरी परंपरा हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए की नामवर जी की आलोचना में भी कुछ कमियाँ हैं। विश्वनाथ तिवारी लिखते हैं 'नामवर जी ने आचार्य शुक्ल के कमजोर पक्ष को ही सामने रखने की कोशिश की है और तुलना में द्विवेदी जी के चमकीले पक्ष को। नामवर जी की आलोचना की यह एक कमजोरी है कि वे जब जिस लेखक को उठाना चाहते हैं, उसकी चमकीली झाँकियाँ प्रस्तुत करते हैं और उसी के अनुरूप अपना तर्कशास्त्र गढ़ लेते हैं और उसकी तुलना में जिन लेखकों पर प्रहार करना चाहते हैं उनके कमजोर स्थलों को उद्धृत कर व्यंग्य कटाक्ष करने लगते हैं।'

बोध प्रश्न

- नामवर सिंह की पुस्तक 'कविता के नए प्रतिमान' के विषय में लिखिए।

स्वच्छंद आलोचना

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

अज्ञेय के काव्य संबंधी विचारों को हम उनकी रचनाओं यथा- 'त्रिशंकु', 'आत्मनेपद', 'हिंदी साहित्य:एक आधुनिक परिदृश्य' आदि में देख सकते हैं। उनके विचारों का केंद्रवर्ती बिन्दु है वैयक्तिकता। वे निर्वैयक्तिकता और वैयक्तिकता में वैयक्तिकता को महत्व देते हैं। अहं के विलयन पर वे बार-बार ज़ोर देते हैं। विलयन का यह प्रयास वैयक्तिकता का ही सूचक है। स्वातंत्र्य का विभावन वे कलाकार का धर्म मानते हैं, अर्थात जो स्वयं भी स्वतंत्र हो तथा दूसरे को भी स्वतंत्र करे। किन्तु वे मूल्यांकन के लिए सौन्दर्य के साथ-साथ नैतिकता पर भी विचार करना जरूरी समझते हैं। पर वे सुंदर को अनिवार्यतः नैतिक नहीं मानते। उनकी दृष्टि में प्रतिभा दोनों को सहज ही प्राप्त कर लेती है। बच्चन सिंह लिखते हैं 'कला के प्रति अत्यधिक आग्रह उन्हें रहस्य गह्वर में भटका देता है।'

गजानन माधव 'मुक्तिबोध'

मुक्तिबोध के समीक्षात्मक विचार 'कामायनी का पुनर्मूल्यांकन', 'एक साहित्यिक की डायरी', 'नई कविता का आत्मसंघर्ष', 'नए साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र' आदि में देखे जा सकते हैं। वे विचारों में मार्क्सवादी हैं। उनमें किसी प्रकार के विकृत 'वाद' के दर्शन नहीं होते। वे आधुनिकतावाद, दुखवाद, व्यक्तिवाद के विरोधी हैं। वे 'नई कविता' को नव क्लासिकवाद की ओर ले जाना चाहते हैं। वे अन्याय के खिलाफ आवाज उठाने को आधुनिक भाव-बोध के साथ देखते हैं। फैन्टेसी, कला के तीन क्षण, विश्व दृष्टि आदि समीक्षात्मक शब्दावली देकर उन्होंने हिंदी समीक्षा को सम्पन्न बनाया है। मुक्तिबोध को 'नई कविता' से यह शिकायत थी कि उसमें मानसिक प्रतिक्रियाओं के खंड चित्र ही अधिक दिखाई देते हैं। जीवन के श्रेष्ठतम उदात्त लक्ष्य और मूल्य, या उनके लिए किया जाने वाला संघर्ष इस कविता में उस रूप और मात्रा में नहीं है जितना अपेक्षित है। सुभद्रा कुमारी चौहान के काव्य को वे जंगे आजादी के संदर्भ में देखते हैं। शिल्प की दृष्टि से वे शमशेर को हिंदी का एक अद्वितीय कवि स्वीकार करते हैं। वे दिनकर की 'उर्वशी' पर विचार करते हैं।

प्रसाद जी के संबंध में वे लिखते हैं 'प्रसाद जी का मर्यादावाद वर्ग विभाजित समाज को स्थायित्व प्रदान करना चाहता है। समाज के मूलभूत वर्ग संघर्ष के प्रति प्रसाद जी का यह दृष्टिकोण है जो नितांत प्रतिक्रियावादी हैं। उनके पक्ष में जो बात कही जा सकती है वह यही कि उन्होंने समाज के इस मूलभूत वर्ग संघर्ष को पहचाना। दूसरे लोग उसे ढाँकने की फिराक में रहते हैं।'

धर्मवीर भारती

धर्मवीर भारती की पुस्तक 'प्रगतिवाद : एक समीक्षा' 1949 में प्रकाशित हुई। वे प्रगतिवाद के सामयिकता को महत्व देने के विरुद्ध साहित्य में प्राचीन, स्थाई और शाश्वत मूल्यों पर विशेष बल देते हैं। मधुरेश लिखते हैं 'प्रगतिवाद में परंपरा की स्वीकृति-अस्वीकृति को लेकर जो शंशय और असमंजस की स्थिति थी, धर्मवीर भारती ने उसका भरपूर लाभ उठाया।' उनका एम. ए. का शोध प्रबंध 'सिद्ध साहित्य' पर था। वे आचार्य शुक्ल की अपेक्षा हजारी प्रसाद द्विवेदी की स्थापनाओं से अधिक जुडते हैं। अपनी पुस्तक 'मानव मूल्य और साहित्य' में व्यापक सांस्कृतिक संकट की चिंता करते हैं। अपने सहयोगियों के बीच अपनी भाववादी और व्यक्तिवादी दृष्टि के बावजूद भारती मार्क्सवाद की अनेक बुनियादी स्थापनाओं से दूर तक सहमत दिखाई देते हैं। फ्रायड और आस्तित्ववादी चिंतकों की तरह वे मार्क्स के चिंतन एवं दार्शनिक प्रपत्तियों के महत्व को भी खुलेपन से स्वीकार करते हैं।

रामस्वरूप चतुर्वेदी

चतुर्वेदी जी ने अपने आलोचना कर्म की शुरुआत 'शरत के नारी पात्र' (1955) से की और कुछ अंतरालों के बावजूद वे निरंतर सक्रिय बने रहे। पहले दौर की उनकी अन्य पुस्तकें हैं-'हिंदी नवलेखन' (1960), 'भाषा और संवेदना'(1964), 'अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या' (1968), 'कामायनी का पुनर्मूल्यांकन' (1970)। उनके दूसरे दौर की पुस्तकें हैं-'इतिहास और आलोचक दृष्टि' (1982), 'हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास' (1986), 'हिंदी गद्य विन्यास और विकास' (1996), 'भारत और पश्चिम:संस्कृति के अस्थिर संदर्भ' (1999) और 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल : आलोचना का अर्थ : अर्थ की आलोचना' (2001), 'काव्यभाषा पर तीन निबंध', 'प्रसाद निराला अज्ञेय' आदि।

रामस्वरूप चतुर्वेदी ने विशिष्ट कृतियों और कृतिकारों में 'कामायनी', 'अज्ञेय' और 'रामचंद्र शुक्ल' पर लिखा है। 'कामायनी' को वे हर आधुनिक रचनाकार और आलोचक के लिए परीक्षा स्थल मानते हैं। प्रसाद की कला को वे क्रमिक-विकास की कला मानते हैं जिसका अंतिम परिपाक उनकी अंतिम कृतियों में ही होता है। कामायनी और प्रसाद के बिंब विधान पर वे लिखते हैं 'उनके बिंब प्रयोग मानवीय अनुभव तथा उसकी अर्थवत्ता को विकसित और प्रशस्त होने देते हैं। इस अर्थ की प्रतीति गहरे स्तरों तक कर सकना जीवन और बिंब प्रक्रिया को परस्पर जोड़ता है, और कुशल कवि के रचना - विधान में दोनों प्रक्रियाएँ संश्लिष्ट हो जाती हैं।' अज्ञेय की कविता में चतुर्वेदी जी एक गैर रोमांटिक कविता की संभावना देखते हैं। चतुर्वेदी जी शुक्ल जी

को तुलसीदास के सबसे बड़े आलोचक के रूप में मान्यता देते हैं साथ ही उनके अपने मूल्यांकन को समूची आलोचना-परंपरा से उऋण होने का एक प्रयास भी मानते हैं। अब तक अप्रकट रहे आचार्य शुक्ल के कुछ पक्षों पर ध्यान केंद्रित करते हुए वे उन्हें 'एक सम्पूर्ण आलोचक व्यक्तित्व' के रूप में स्थापित करते हैं।

बोध प्रश्न

- रामस्वरूप चतुर्वेदी जी की आलोचना के विषय में बताइए।

विजयदेव नारायण साही

साही जी की आलोचक के रूप में अपनी अलग ही पहचान है। राजनीतिक रूप से वे लोहियावादी थे। उन्होंने समाजवादी पार्टी के टिकट पर लोकसभा का चुनाव लड़ा लेकिन पराजित हुए। हिंदी आलोचना में एक अच्छी पहचान के बावजूद उनके जीवनकाल में उनकी आलोचनात्मक पुस्तकें प्रकाशित नहीं हो पाईं। उनकी मृत्यु के बाद उनकी प्रकाशित महत्वपूर्ण पुस्तकें इस प्रकार हैं - 'साहित्य और साहित्यकार का दायित्व' (1983), 'जायसी' (1983), 'छठवाँ दशक' (1988), 'साहित्य क्यों' (1988) आदि।

कुछ महत्वपूर्ण आलोचनात्मक पुस्तकें लिखने के अलावा 'जायसी' नामक उनकी पुस्तक अत्यधिक महत्वपूर्ण और व्यवस्थित ढंग से लिखी गई पुस्तक है। साही जी लिखते हैं 'बारम्बार जायसी को पढ़ते समय मुझे यह लगता रहा है कि शुक्ल जी ने जो फ्रैमवर्क, जो चौखटा जायसी के लिए बनाया है उस चौखटे से मेरा मतांतर है।' विजय मोहन सिंह लिखते हैं 'जायसी पुस्तक की सबसे बड़ी महत्ता इस बात में है कि उसमें हिंदी में पहली बार 'क्लासिकी काव्य' का नए आलोक में आकलन करके उसकी प्रासंगिकता प्रमाणित की गई।' ऐसा करके साही जी ने किसी क्लासिकी काव्य को इस तरह से प्रमाणित किया की वह समकालीन प्रतीत होने लगा। साही जी ने जायसी को 'हिंदी का पहला विधिवत कवि कहा है।' साथ ही यह भी कहा 'कबीर में प्रयास के चिन्ह हैं, जायसी में प्रयास कहीं दिखाई नहीं देता।' असल में 'जायसी' नामक पूरी की पूरी पुस्तक इसी विधिवत की व्याख्या है। साही जी इस मामले में शुक्ल जी, वासुदेवशरण अग्रवाल जी, माताप्रसाद गुप्त जी से अलग हैं की वे जायसी को न तो सूफी-संत या आध्यात्मिक कवि मानते हैं और न ही पद्मावत को कोई ऐतिहासिक गाथा। जायसी को जिन लोगों ने सम्प्रदायिकता के कटघरे में खडा किया उससे साही जी सहमत नहीं हैं। वे जायसी को एक कवि के रूप में देखते हैं। साही जी अंततः लिखते हैं 'अपनी मूल प्रकृति में पद्मावत एक त्रासदी है...शायद हिंदुस्तान या संभवतः एशिया की धरती पर लिखा हुआ एक मात्र ग्रंथ है जो यूनानियों की ट्रैजडी का काफी निकट है।'

साही जी ने 'लघु मानव के बहाने' नई कविता की व्याख्या प्रस्तुत की। इसके साथ-साथ उसकी विशेषताओं को रेखांकित किया है। साही जी के अनुसार उत्तर छायावादी कवि 'बच्चन', 'दिनकर', 'नवीन', 'भगवतीचरण वर्मा' आदि 'स्वप्न' के नहीं 'अरमानों' के कवि हैं। जवानी और फक्कड़ता के कवि हैं। इसके अलावा 'शमशेर', 'गोदान', आदि पर भी उन्होंने लिखा है।

हिंदी आलोचना: समकालीन परिदृश्य

बच्चन सिंह

बच्चन सिंह ने अपने आलोचना कर्म की शुरुआत 'क्रांतिकारी कवि निराला' से की। इसका ऐतिहासिक महत्व यह है कि अपने मूलरूप में यह नामवर सिंह के 'छायावाद' से कई वर्ष पूर्व प्रकाशित हुई। बच्चन सिंह की दृष्टि में छायावाद का महत्व यह है कि इसके माध्यम से एक विशिष्ट ऐतिहासिक चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। 'क्रांतिकारी कवि निराला' के अतिरिक्त बच्चन सिंह की अन्य उल्लेखनीय पुस्तकें हैं–'हिंदी नाटक', 'समकालीन साहित्य: आलोचना को चुनौती', 'बिहारी का नया मूल्यांकन', 'आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द', 'साहित्य का समाजशास्त्र', 'आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास' आदि। 'हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास उनकी एक महत्वपूर्ण पुस्तक है। इसमें वे स्वीकार करते हैं आचार्य शुक्ल के ' 'हिंदी साहित्य का इतिहास' को लेकर न तो दूसरा इतिहास लिखा जा सकता है और न उसे छोड़कर।'

बिहारी की दरबारी और रीतिकालीन सीमाओं के बीच बच्चन सिंह उनका सहृदय मूल्यांकन करते हैं। वे यह स्वीकार करते हैं कि 'रीतिकाव्य में कर्मोन्नमुखी प्रेम की कोई जगह नहीं है। रीतिकवियों का प्रेम भौतिक धरातल से ऊपर नहीं उठ पाता .... उसके प्रेम का मुख्य तत्व शरीरी सौन्दर्य है। वहीं उसकी परिणति भी है...।' बिहारी के संदर्भ में वे लिखते हैं 'अलंकारों के विन्यास और अर्थ ध्वनियों एवं संरचना की दृष्टि से समूचे रीतिकाव्य में उनकी तुलना केवल घनानन्द से ही की जा सकती है।'

निर्मला जैन

निर्मला जैन ने कथा साहित्य और आलोचना पर भी लिखा है, लेकिन उनका मुख्य कार्य-क्षेत्र काव्य की आलोचना ही है। उनकी उल्लेखनीय पुस्तकें हैं- 'रस सिद्धांत सौंदर्यशास्त्र', 'हिंदी आलोचना बीसवीं शताब्दी', 'आधुनिक साहित्य : मूल्य और मूल्यांकन', 'कथा प्रसंग', 'यथा प्रसंग' आदि। लंबी छायावादी कविताओं में 'प्रलय की छाया' और 'राम की शक्तिपूजा' पर उन्होंने स्वतंत्र रूप से विचार किया है। 'कामायनी और वर्गहीन समाज' में उनका निष्कर्ष है कि 'प्रसाद यहाँ कुल मिलाकर गाँधीवाद के निकट हैं, मार्क्सवाद के नहीं'।

विष्णु चंद्र शर्मा

उनकी आलोचना पुस्तकों में 'काल से होड़ लेता शमशेर', 'राहुल का भारत', 'ग़ालिब और निराला' और ' 'नागार्जुन' एक लंबी जिरह' की खास तौर से की जा सकती है। विष्णुचंद्र शर्मा मानते हैं 'शमशेर के प्रेम की प्रकृति अज्ञेय के रूमानी और आस्तित्ववादी असहायों से भिन्न है। शमशेर का प्रेम न देहवाद का साधन है, न ही अहं का विस्फोट।' विष्णुचंद्र शर्मा की आलोचना की एक सामान्य प्रवृत्ति यह है कि अपनी बात कहने से अधिक वे दूसरों के अभिमतों और धारणाओं को आलोचना का आधार बनाकर आगे बढ़ते हैं।

विश्वनाथ त्रिपाठी

विश्वनाथ त्रिपाठी ने हजारीप्रसाद द्विवेदी जी के साथ मिलकर 'संदेश रासक' का संपादन किया। साथ ही 'लोकवादी तुलसीदास', 'मीरा का काव्य', 'देश के इस दौर में', 'हिंदी आलोचना' और 'कुछ कहानियाँ : कुछ विचार' आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। तुलसीदास के महत्व को रेखांकित करते हुए वे लिखते हैं 'तुलसीदास की लोकप्रियता का कारण यह है कि उन्होंने अपनी कविता में अपने देखे हुए जीवन का बहुत गहरा और व्यापक चित्रण किया है।' उन्होंने राम के परंपरा प्राप्त रूप को अपने युग के अनुरूप बनाया है। उन्होंने राम की संघर्ष-कथा को अपने समकालीन समाज और अपने जीवन की संघर्ष-कथा के आलोक में देखा है। 'तुलसी के राम', 'तुलसी का देश', 'कलियुग और रामराज्य' और 'तुलसी की कविताई' शीर्षक अध्यायों में वे भाव पक्ष और कला पक्ष पर पर्याप्त संतुलित ढंग से विचार करते हैं। मीरा के प्रेम की लौकिक व्याख्या और सामंती समाज से उसका अंतद्वन्द्व- त्रिपाठी जी के इस मूल्यांकन की केन्द्रीय अंतर्वस्तु है। मुक्तिबोध के काव्य बिंबों और परसाई के विचार चित्रों में वे गहरी समानता देखते हैं।

नन्द किशोर नवल

नवल जी प्रमुख आलोचना पुस्तकें हैं 'कविता की मुक्ति', हिंदी आलोचना का विकास, 'प्रेमचंद्र का सौंदर्यशास्त्र' 'मुक्तिबोध: ज्ञान और संवेदना', 'समकालीन काव्य यात्रा', 'निराला और मुक्तिबोध : चार लंबी कविताएँ', 'निराला : कृति से साक्षात्कार' (दो खंडों में), 'निराला काव्य की छवियाँ' आदि। इसके अलावा उन्होंने साहित्य अकादमी के लिए 'महावीर प्रसाद द्विवेदी', और 'मुक्तिबोध' शीर्षक मोनोग्रैफ भी लिखे हैं।

वे निराला की प्रयोगशील और क्रांतिकारी परंपरा को आधुनिक काव्य विकास में विशेष महत्व देते हुए उन्हीं के माध्यम से परवर्ती काव्य विकास को रेखांकित करते हैं। प्रगतिवादी काव्य धारा के प्रमुख कवियों -नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, मुक्तिबोध, शमशेर, और त्रिलोचन को केंद्र में रखकर ही वे यथार्थवादी काव्य विकास की पड़ताल करते हैं। अज्ञेय और श्रीकांत वर्मा को वे क्षयिष्णु और पतनशील काव्य प्रवृत्तियों के प्रतीक रूप में प्रस्तुत करते हैं। नन्दकिशोर नवल के आलोचना कर्म में 'समकालीन काव्य-यात्रा' (1994) एक पार्थक्य रेखा की तरह है। जहां वे कई समकलीन कवियों पर विचार करते हैं।

बोध प्रश्न

- नन्दकिशोर नवल जी की पुस्तकों के नाम लिखिए।

अशोक वाजपेयी

अशोक वाजपेयी की आलोचनात्मक पुस्तकें हैं- 'फिलहाल', 'कुछ पूर्व ग्रह', 'सीढ़ियाँ शुरू हो गई हैं', 'कवि कह गया है' आदि। अपने मार्क्सवाद विरोध के करण ही बाद में पंत और अज्ञेय को ढूंढकर बाद में चमकाने दमकाने की जरूरत महसूस होने लगती है। अशोक वाजपेयी की

आलोचना के कुछ बीज शब्द हैं यथा- आलोचना का जनतंत्र, कला की स्वायत्तता, पुनर्वास, एकरूपता की तानाशाही, रचनात्मक बहुलता आदि। उनके विषय में मधुरेश लिखते हैं 'अशोक वाजपेयी के जनतंत्र की राह बहुत संकरी है और उसमें रचना की सामाजिक भूमिका के लिए तो कोई जगह है ही नहीं। वे हमेशा अपने निकट के आठ-दस लेखकों कवियों के नाम दोहराते हैं और उनके माध्यम से ही देश और विदेश में समूचे हिंदी साहित्य की पहचान का आग्रह करते हैं।'

रमेशचंद्र शाह

रमेशचंद्र शाह के साहित्यिक संस्कार इलाहाबाद (अब प्रयागराज) में 'परिमल' की गतिविधियों के बीच विकसित हुए। विश्वविद्यालय में विजय देव नारायण साही उनके अध्यापक थे और मलयज उनके मित्र। उनकी आलोचना का प्रस्थान बिन्दु एक ओर यदि छायावाद है, तो दूसरी ओर नई कविता। 'छायावाद की प्रासंगिकता', 'समानांतर' उनकी ये दोनों पुस्तकें 1973 में प्रकाशित हुई। उन्होंने अज्ञेय पर 1990 में साहित्य अकादेमी द्वारा प्रकाशित 'अज्ञेय' शीर्षक मोनोग्रैफ लिखा साथ ही 'श्री हीराचंद शास्त्री स्मृति व्याख्यान माला' के अंतर्गत 'अज्ञेय वागर्थ का वैभव' (1995) शीर्षक लिखित व्याख्यान भी प्रस्तुत किया। वे अज्ञेय को प्रश्नाकुल कवि के रूप में देखते हैं और उनकी यह प्रश्नाकुलता भी दोहरी है जिसे शाह 'दोधारी' कहना पसंद करते हैं। उनकी अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं 'वागर्थ', 'जयशंकर प्रसाद, 'भूलने के विरुद्ध'। उनके संबंध में मधुरेश लिखते हैं 'आलोचना में चिंतन के नाम पर वे बहुत दुरूह, असंप्रेषणीय, और उलझी हुई भाषा लिखते हैं- जैसे भाषा की जलेबियाँ तल रहे हों।'

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

तिवारी जी छायावाद को अपनी आलोचना का प्रस्थान बिन्दु बनाकर समकालीन कविता में आते हैं। कविता के संदर्भ में उनकी दो महत्वपूर्ण आलोचनात्मक पुस्तकें हैं- 'आधुनिक हिंदी कविता' (1977) और 'समकालीन हिंदी कविता' (1982)। आधुनिक हिंदी कविता में वे प्रसाद से अज्ञेय तक आठ कवियों पर विचार करते हैं। उपर्युक्त दोनों पुस्तकों के अलावा उन्होंने अज्ञेय और मुक्तिबोध पर पुस्तकें संपादित की हैं। इसके अलावा 'दस्तावेज़' नामक पत्रिका के कई कविता केंद्रित विशेषांक प्रकाशित हुए हैं। वे प्रसाद को क्रमशः विकसित एक ऐसे कवि के रूप में देखते हैं जिसने रीतिकालीन काव्य प्रवृत्तियों से शुरू करके आधुनिक अभिव्यक्ति कौशल तक की यात्रा की। निराला के संबंध में उनका विचार है 'प्रगतिवाद का जनक होने पर भी वे उसकी राजनीतिक विचारधारा से बंधे नहीं थे।' बच्चन की परवर्ती रचनाओं में भाषा-शैथिल्य का करण वे उनकी अनुभूति-शैथिल्य को मानते हैं।

तिवारी जी मानते हैं कि 'कविता का अध्ययन एक जटिल व्यापार है।' वे नई कविता के अध्ययन को और भी जटिल मानते हैं। कारण यह है कि वहाँ आलोचक को कविता की संप्रेषणीयता के सवाल से भी टकराना होता है। यहाँ वे कवियों के संदर्भ में भिन्न शब्द-प्रयोगों को लक्ष्य करके कवियों की काव्य-चिंताओं और काव्य संवेदनाओं को उद्घाटित करने का प्रयास करते हैं।

विजय बहादुर सिंह

उन्होंने अवश्य ही प्रसाद निराला और पंत पर विचार किया है लेकिन उनका मुख्य कार्य क्षेत्र प्रगतिवादी कविता ही है। उनकी महत्वपूर्ण पुस्तकें हैं - 'नागार्जुन का रचना संसार' (1982), 'जनकवि' (1984), 'नागार्जुन संवाद' (1994) और 'कविता और संवेदना' (1998) आदि। वे नागार्जुन के निकट संपर्क में रहे। नागार्जुन जब भी विदिशा में जाते थे तो इन्हीं के यहाँ ठहरते थे। एक आत्मीय संपर्क के कारण ही वे उनके रचना संसार का प्रामाणिक साक्षात्कार करा पाने में सफल रहे। 'जनकवि' प्रगतिवादी काव्यधारा के पाँच प्रमुख कवियों केदारनाथ अग्रवाल, नागार्जुन, त्रिलोचन, शमशेर, और मुक्तिबोध के काव्यसंचय है। इसमें उनकी लिखी हुई एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

विमर्शवादी आलोचना

वर्तमान में विमर्शों का दौर चल रहा है। अब विमर्शवादी आलोचना भी प्रमुखता से की जा रही है। प्रमुख विमर्शों में 'स्त्री विमर्श', 'दलित विमर्श', 'आदिवासी विमर्श', 'मुस्लिम विमर्श' आदि हैं। जहां तक स्त्रीवादी लेखन और आलोचना का सवाल है तो इसमें प्रमुखता से प्रभा खेतान, कृष्णा सोबती, ममता कालिया, मृणाल पांडेय, नासिराशर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, नमिता सिंह, कात्यायनी, मेहरुन्निसा परवेज़, अनामिका आदि ने लेखन किया है। इन सभी ने स्त्रीवादी आलोचना लिखकर 'स्त्री विमर्श' को स्थापित करने का प्रयास किया है और इसमें सफल भी हुई हैं।

दलित विमर्श की बात करें तो इसने बहुत ही ज्यादा विरोध का सामना किया है। कहीं-कहीं तो मार्क्सवादियों तक ने साथ नहीं दिया। दलित विमर्श के अंतर्गत आलोचना लिखने वालों में शरण कुमार लिम्बले, कँवल भारती, ओमप्रकाश वाल्मीकि,माता प्रसाद, जयप्रकाश कर्दम, डॉ. धर्मवीर, कांचा इलैया, रजनी तिलक, सुशीला टाकभौरे आदि प्रमुख हैं। आदिवासी विमर्श के अंतर्गत लेखन करने वालों में रमणिका गुप्ता, निर्मला पुतुल, वंदना टेटे, शशिकांत 'सावन', भगवान गवहाड़े आदि प्रमुख हैं। इसी तरह से मुस्लिम विमर्श के अंतर्गत आलोचना लिखने वालों में नासिरा शर्मा, असगर वजाहत, अब्दुल बिस्मिल्लाह, मेराज अहमद आदि हैं। मुस्लिम विमर्श अभी अपने शैशवकाल में है। इसके पास अभी कथाकार हैं आलोचकों का फिलहाल अभाव है।

बोध प्रश्न

- विमर्शवादी आलोचना के विषय में लिखिए।

10.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! इस प्रकार हम देखते हैं कि 'आलोचना' शब्द 'लोचृ' धातु से बना है, 'लोचृ' का अर्थ है देखना- अतः आलोचना का अर्थ है 'देखना'। किसी वस्तु या कृति की सम्यक व्याख्या उसका मूल्यांकन आदि करना ही 'आलोचना' है। आलोचना के कई भेद-उपभेद हैं। शुरुआत में

आलोचना किसी रचना के गुण-दोष का विवेचन करने के लिए होती थी। आलोचना के विकास में तत्कालीन पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा है। इनमें 'हिंदी प्रदीप', 'सरस्वती', 'आलोचना' आदि प्रमुख हैं।

आलोचना की शुरुआत 'भारतेन्दु युग' से स्वीकार की जानी चाहिए। प्रत्येक युग की आलोचना और आलोचक अलग-अलग रहे हैं। कई बार तो विकास ही दिखता है। आलोचना को काल के अनुसार देखें तो भारतेंदुयुगीन आलोचना, द्विवेदीयुगीन आलोचना, शुक्लयुगीन आलोचना, छायावादी कवियों की आलोचना आदि हैं। इसके अतिरिक्त 'वाद' के आधार पर 'प्रगतिवादी/मार्क्सवादी आलोचना', 'स्वच्छंदतावादी आलोचना', 'विमर्शवादी आलोचना' के साथ समकालीन आलोचना भी है। प्रत्येक युग और 'वाद' में कई प्रमुख आलोचक रहे हैं जिनके विषय में चर्चा की गई है।

10.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से हमें निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. 'आलोचना' शब्द का अर्थ है-'देखना'। आलोचना के मुख्यतः दो भेद हैं- साहित्यिक और वैज्ञानिक। फिर इसके अंदर कई उपभेद भी हैं।
2. हिंदी आलोचना का प्रारंभ भारतेन्दु युग से होता है। आलोचना के विकास में तत्कालीन पत्रिकाओं का विशेष योगदान रहा है।
3. हिंदी आलोचना का इतिहास विभिन्न युगों यथा- भारतेंदुयुगीन आलोचना, द्विवेदीयुगीन आलोचना, शुक्लयुगीन आलोचना आदि में बंटा है।
4. आजादी के बाद हिंदी आलोचना ने विभिन्न वादों और विमर्शों का आग्रह क्रमशः बढ़ता दिखाई देता है।

10.6 शब्द संपदा

1. आस्वाद = लज़्ज़त या स्वाद लेना। यहाँ कविता के भाव को ग्रहण करना अर्थ लें
2. गह्वर = प्राकृतिक रूप से निर्मित जमीन या पहाड़ के नीचे या अंदर की विस्तृत और खाली जगह जिसमें प्रायः पशु आदि रहते हों।
3. धातु = क्रियापदों की प्रकृति को 'धातु' कहते हैं
4. मनोविश्लेषणात्मक = मन का विश्लेषण करने वाली रचना
5. विभावन = विशेष रूप से चिंतन
6. शास्त्रीय = शास्त्र या धर्म ग्रंथ के अनुसार।
7. समाजवादी = जिसके तहत सरकार द्वारा आर्थिक प्रणाली को नियंत्रित और विनियमित किया जाता है ताकि समाज में लोगों को कल्याण और समान अवसर मिल सके
8. सामयिक = जो समय को देखते हुए उचित या उपयुक्त हो

9. सौकुमार्य = काव्य के एक गुण जो ग्रामीण और सुनने में खराब शब्दों का त्याग करने पर सुंदर तथा कोमल शब्दों का प्रयोग करने से उत्पन्न होता है

10.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ)दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. हिंदी आलोचना में 'देव बड़े कि बिहारी' विवाद में भाग लेने वाले आलोचकों की आलोचना पर अपने विचार लिखिए।
2. प्रमुख शुक्लोत्तर आलोचकों पर चर्चा कीजिए।
3. छायावादी आलोचना के विषय में लिखें।

खंड (ब)

(आ)लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. रामस्वरूप चतुर्वेदी की आलोचना के विषय में बताइए।
2. नामवर सिंह की आलोचना पर अपने विचार प्रकट कीजिए।
3. आचार्य रामचंद्र शुक्ल की आलोचना के विषय में अपने विचार लिखिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. 'छायावाद : पुनर्मूल्यांकन' शीर्षक पुस्तक किसकी है? ( )
   (क) महादेवी वर्मा (ख) नन्दकिशोर नवल (ग) सुमित्रानंदन पंत (घ) नामवर सिंह
2. 'नाटक अथवा दृश्य काव्य सिद्धांत' शीर्षक निबंध लिखा है? ( )
   (क) भारतेन्दु हरिश्चंद्र (ख) सुमित्रानंदन पंत (ग) रामकुमार वर्मा (घ) वृंदावन लाल वर्मा
3. 'कामायनी' हर आधुनिक समीक्षक, और रचनाकार के लिए भी, परीक्षा-स्थल है' यह कथन किसका है?
   (क) मुक्तिबोध (ख) रामविलास शर्मा (ग) निराला (घ) रामस्वरूप चतुर्वेदी

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. 'नाटक शब्द का अर्थ है .....लोगों की क्रिया।
2. ..... ने जायसी को हिंदी का पहला विधिवत कवि कहा है।

3.रमेशचंद्र शाह के साहित्यिक संस्कार इलाहाबाद में ..... की गतिविधियों के बीच विकसित हुए।

III. सुमेल कीजिए -

1. बिहारी सतसई : तुलनात्मक अध्ययन	(अ) चंद्रबली पांडेय
2. महावीर प्रसाद द्विवेदी	(ब) कवि और कविता
3. तसव्वुफ़ अथवा सूफ़ीमत	(स) 1949
4. प्रगतिवाद: एक समीक्षा	(द) पद्म सिंह शर्मा

10.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास : डॉ. बच्चन सिंह
2. आधुनिक हिंदी साहित्य का इतिहास : डॉ. सत्यदेव मिश्र
3. बीसवीं शताब्दी का हिंदी साहित्य : विजय मोहन सिंह
4. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धांत : डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त
5. हिंदी आलोचना : विश्वनाथ त्रिपाठी
6. हिंदी आलोचना का विकास : नंदकिशोर नवल
7. हिंदी आलोचना का विकास : मधुरेश

इकाई 11: सर्वेश्वर दयाल सक्सेना : एक परिचय

रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 उद्देश्य
11.3 मूल पाठ : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना : एक परिचय
11.3.1 काव्य व्यक्तित्व
11.3.2 रचनाएँ
11.3.3 युग परिवेश
11.3.4 काव्य संवेदना
11.4 पाठ सार
11.5 पाठ की उपलब्धियाँ
11.6 शब्द संपदा
11.7 परीक्षार्थ प्रश्न
11.8 पठनीय पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

इस इकाई में नयी कविता के चर्चित कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और उनकी कविता के संबंध में पढ़ेंगे। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने काव्य सृजन की शुरुआत सन् 1950-51 के आस-पास प्रारम्भ कर दिया था। हालांकि अज्ञेय द्वारा संपादित 'तीसरा सप्तक' में अन्य कवियों के साथ सर्वेश्वर दयाल सक्सेना भी तीसरे सप्तक में सम्मिलित हैं। स्वतंत्रता के बाद के दौर में उपजी नई परिस्थितियों के मध्य एक साहित्यकार क्या सोचता है और वह किन संदर्भों के साथ अपने सृजन को आगे बढ़ाता है, यह सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और उनकी काव्य कृतियों के माध्यम से समझा जा सकता हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और उनकी कृतियों के जरिए प्रयोगवाद और नयी कविता के स्वरूप और विकास व उनके अंतरों को भी समझने में आसानी होगी। हिंदी कविता के बदलते हुए मुहावरे और सामाजिक सरोकारों के मध्य नयी कविता के एक महत्त्वपूर्ण कवि सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और उनकी कविता के संदर्भ में परिचय हासिल होगी।

11.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप

- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे व उनके युग-परिवेश को समझ पाएंगे।
- सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविता की संवेदना, कथ्य, अनुभूति की सामाजिकता और उनके विचारों के संबंध में जानकारी हासिल कर सकेंगे।
- सर्वेश्वर की कविता के क्रांतिकारी स्वर और व्यंग्यात्मकता के स्वरूप से परिचित हो सकेंगे।

- उनकी काव्य-भाषा और बिंब-विधान का वैशिष्ट्य समझ सकेंगे।
- हिंदी कविता में सर्वेश्वर दयाल के योगदान से अवगत हो सकेंगे।

11.3 मूल पाठ : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना एक परिचय

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का जन्म 15 सितंबर 1927 को बस्ती उत्तर प्रदेश में हुआ था। आरंभिक शिक्षा बस्ती में तथा उच्च शिक्षा क्वींस कालेज वाराणसी और इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हुई। सन् 1949 में उन्होंने हिंदी में एम. ए. किया। आरंभ में कुछ समय स्कूल में शिक्षक रहे। फिर सरकारी कार्यालय में नौकरी की। थोड़े दिन के लिए आकाशवाणी के दिल्ली तथा अन्य केन्द्रों में कार्य किया। सन 1969 से 1982 तक हिंदी साप्ताहिक 'दिनमान' में काम किया। उसके बाद बाल पत्रिका 'पराग' के संपादक बने। किन्तु पराग की सेवा बहुत थोड़े ही दिन कर पाए। 23 सितंबर 1983 को 56 वर्ष की अल्पायु में उनका देहांत हो गया।

जीविकोपार्जन के लिए उन्होने शिक्षा दीक्षा के बाद कुछ समय के लिए विद्यालय में अध्यापन का कार्य किया। कुछ समय के लिए उन्होने कर्मचारी के रूप में भी सेवा दिया। इसके उपरांत वह आकाशवाणी में सहायक प्रोड्यूसर बने तथा दिनमान पत्रिका में प्रमुख उपसंपादक के रूप में भी कार्य किया।

11.3.1 काव्य व्यक्तित्व

सर्वेश्वर के कवि व्यक्तित्व की बनावट में दो तत्वों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई-भारतीय ग्राम्य जीवन की संवेदना और समाजवादी विचारधारा। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपने व्यक्तित्व के बारे में परिचय देते हुए तीसरा सप्तक के में लिखा है कि 'स्वभाव न अच्छा न बुरा; बाहर से गंभीर सौम्य पर भीतर से वैसा नहीं, विपत्ति, संघर्ष, निराशाओं से घनिष्ठ परिचय के कारण जरूरत पड़ने पर खरी बात कहने में सबसे आगे। आफ्नो के बीच बेगानों सा रहने की और बेगानों को अपना समझने की मुख्य आदत। काहिली, सुस्ती, सोचना अधिक करना कम, अपनी लीक पर चलना और किसी की परवाह न करना; ये कुछ मुख्य दोष हैं-दूसरों की दृष्टि में।'

उनका बचपन गाँव के जिस हरे-भरे उन्मुक्त वातावरण में बीता था उसने उनकी सृजन चेतना को इतने गहरे तक प्रभावित किया कि महानगर उनको हमेशा पराया ही लगता रहा वस्तुतः कोई मोह न होकर भारतीय जन-जीवन से जुड़ाव है। उनकी कविता जिस मामूली आदमी की पीड़ा को प्रस्तुत करती है उसकी संवेदना का निर्माण इन्हीं ग्राम्य संस्कारों से हुआ है। इसीलिए वे खेतिहर मजदूरों, किसानों, चरवाहों, ग्रामीण बच्चों, खेत की मेड़ों, मैदानों, नदियों और पोखरों के चित्र उनकी रचनाओं में यत्र-तत्र मिलते हैं। लोहियावादी समाजवादी विचारों के संस्कार उन्हें विद्यार्थी जीवन में मिले। उनका परिचय समाजवादी कवि समीक्षक विजयदेव नारायण साही से हुआ। तभी वे प्रयाग की साहित्यक संस्था 'परिमल' के संपर्क में आए। समाजवादी विचारधारा का प्रभाव उनके जीवन तथा लेखन पर अंत तक रहा। कुछ समय तक वे 'परिमल' के कार्यवाहक सचिव भी रहे।

उनके काव्य व्यक्तित्व के संबंध में चर्चा करने पर हम यह सोचने के लिए मजबूर हो जाते है कि उनके रचनात्मक व्यक्तित्व में उनको किस रूप में देखा जाए? एक कवि के रूप में, एक पत्रकार के रूप में, एक नाटककार के रूप में, एक उपन्यासकार के रूप में या फिर एक बालकवि के रूप में। इस संबंध में विचार करते हुए वह स्वयं कहते हैं कि 'मैं यह सवाल ही ठीक से समझ नहीं पाता हूँ कि आप कवि हैं या कथाकार या नाटककार या कुछ और? सब कुछ एक साथ भी हुआ जा सकता है। एक विधा से दूसरी विधा के बीच दीवार नहीं होती, रचते समय सबके साथ एक सी ज़िम्मेदारी होती है और एक सा सुख मिलता है। जब किसी बात से पैदा सुख या दुख ही उभर कर छूता है तो कविता बन जाती है और जब बात भी अपना रंग फेंकती है तो कहानी और जब बात सामाजिक राजनैतिक मोड लेकर आज के सवालों से मुखातिब होती है तो नाटक लिखना जरूरी लगता है।'

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के रचनात्मक व्यक्तित्व को लेकर हिन्दी साहित्य के अप्रतिम रचनाकार अज्ञेय ने लिखा है कि 'कवि और कहानीकार दोनों देशकाल से बंधे हैं। किन्तु निरापद होने का आग्रह न किया जाए तो यह कहा जा सकता है कि कहानीकार की दृष्टि देश की ओर अधिक रहती है और कवि के कान काल की झंकार की ओर अधिक लगे रहते हैं। दूसरे शब्दों में कहानीकार का संदर्भ समाज और उसका विस्तार होता है, कवि का संदर्भ जीवन और उसकी गहराई। इस दृष्टि से सर्वेश्वर पहले कवि हैं। उनकी कहानियाँ और उनके उपन्यासों की प्रवृत्ति भी गहराई की पड़ताल करती है। बाह्य वास्तविकता की उपेक्षा या अवज्ञा कहीं नहीं है, किन्तु लेखक की दृष्टि उसी से उलझकर रह जाने को तैयार नहीं। इसीलिए उनकी गद्य रचनाओं में भी एक प्रकार की काव्यमयता है। गद्य को यथार्थ में कहने के उनके साधन कवि के साधन हैं। रूपकारों का वर्णन यहाँ प्रधान नहीं है, और बिंब अथवा संकेत ही यथार्थ को दर्शाते नहीं अवगत कराते हैं। निस्संदेह इसका के कारण यह भी हैं कि कहानियों में भी कविता की भांति सर्वेश्वर 'जो दीखता है' उसके पीछे 'जो है' उसमें व्यस्त है और उसे उभारकर सामने लाना चाहते हैं।' अज्ञेय के उपरोक्त विचारों से स्पष्ट है कि सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के रचनात्मक व्यक्तित्व में साहित्यिक विधा से ज्यादा सामाजिक जीवन का यथार्थ, रचनात्मक सत्य को एक साहित्यकार की अनुभूति की प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत कर देने या रच देने की व्याकुलता अधिक है जो उन्होने अपने साहित्य के माध्यम से प्रकट किए हैं।

बोध प्रश्न

- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का जन्म उत्तर प्रदेश के किस जिले में हुआ था?
- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के शैक्षणिक उपलब्धियों के बारे में बताएं?
- सर्वेश्वर सर्वप्रथम किस साहित्यिक गोष्ठी के माध्यम से साहित्य के संपर्क में आए थे?

11.3.2 रचनाएँ

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कई विधाओं के रचनाकार के रूप में हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित हैं। वह कवि, कथाकार, नाटककार, साहित्य चिन्तक, संस्मरणकार, पत्रकार तथा कला समीक्षक थे। उनकी रचनाओं के माध्यम से पाठक के समक्ष उनका नित नया रूप और साहित्यिक परिचय उजागर होता रहता हैं। उनका पहली रचना सन् 1944 में 'माधुरी' में छपी थी। उसके बाद कभी-कभार कहानियाँ लिखते रहे और विद्यार्थी जीवन में ही कहानीकार के रूप में अपनी पहचान बना ली। उनका प्रथम काव्य संग्रह 'काठ की घंटियाँ' सन् 1959 में छपा। इसमें सन् 1949 से 1957 तक की कविताएँ संकलित हैं। इसी वर्ष अज्ञेय जी के संपादकीय नेतृत्व में छपे 'तीसरा सप्तक में भी सर्वेश्वर की कविताएँ छपी। काव्य लेखन में सक्रियता सन् 1951 से आई। इन्हीं दिनों वे 'परिमल गोष्ठी' की वजह से तेजी से चर्चित हुए और उनकी कविताओं में नयी कविता की पर्याप्त संभावनाएं दिखायी दी। इसके बाद उनके अगले काव्य संग्रह क्रमशः इस प्रकार छपे - 'बाँस का पुल' (1963), 'एक सूनी नाव' (1966), 'गर्म हवाएँ'(1969), 'कुआनो नदी' (1973), 'जंगल का दर्द ' (1976), 'खूटियों पर टँगे लोग' (1982)। उनके नाटकों में 'बकरी' (1974), 'लड़ाई' (1979), 'अब गरीबी हटाओ' (1981), 'रूपमती बाज बहादुर' तथा 'होरी धूम मचा री' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उपन्यासों में 'पागल कुत्तों का मसीहा', 'सोया हुआ पल', 'सड़क' आदि उल्लेखनीय हैं। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने कुल 63 कहानियों की रचना की। सर्वेश्वर जी ने बच्चों के लिए कई पुस्तकें लिखीं, इस क्रम में उन्होने 5 बलकथाओं की रचना की। उनके बाल साहित्य में 'बतूता का जूता', 'मँहगू की टाई', 'भौ-भौं खो-खों' तथा 'लाख की नाक' प्रमुख हैं। पत्रकार के रूप में उनकी खास पहचान 'दिनमान' साप्ताहिक के 'चरचे और चरखे' नामक व्यंग्य कालम के लिए तथा विविध पत्र-पत्रिकाओं में साहित्य रंगमंच, नृत्य और संस्कति पर समीक्षात्मक लेखन के लिए है। उनके कविता संग्रह 'खूँटियों पर टंगे लोग' के लिए उनके मरणोंपरांत सन् 1983 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

बोध प्रश्न

- सर्वेश्वर की पहली रचना किस पत्रिका में प्रकाशित हुई थी?
- सर्वेश्वर के काव्य संग्रह 'काठ की घंटियाँ' में कब से कब तक की कवितायें संकलित है?
- सर्वेश्वर के पत्रकारिता संबंधी उपलब्धियों के बारे में बताएं?

11.3.3 युग परिवेश

स्वाधीनता प्राप्ति से पूर्व का साहित्य राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण और समाज सुधार की चेतना का साहित्य है। मुक्ति की आकांक्षा जिसका मुख्य स्वर है। साहित्य में उपस्थित इस मुक्तिकामी चेतना की आकांक्षा को रचनाकार जीवन के सभी क्षेत्रों में चाहता है। राजनीतिक दासता की समाप्ति के साथ-साथ वह मनुष्य को सामाजिक-नैतिक-आर्थिक-सांस्कृतिक हर स्तर पर उन बंधनों से मुक्त कराना चाहता है जो मनुष्य की प्रगति के मार्ग की बाधा थे। भारतेन्दु युग से लेकर द्विवेदी युग, छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद तक के साहित्य में यह आकांक्षा अपने-

अपने ढंग से व्यक्त हुई है। एक तरफ विदेशी साम्राज्यवाद और पूँजीवाद के शोषण के खिलाफ आवाज दिखाई देती है तो दूसरी तरफ सामाजिक कुरीतियों और गैर बराबरी के प्रति। कही नारी मुक्ति का स्वर दिखाई देता है तो कहीं दलित समुदाय के सामाजिक उद्धार और किसान-मजदूरों के उन्नति की इच्छा का। इस दौरान कविता के विषय और शिल्प-संरचना में भी बदलाव सामने आते हैं। स्वाधीनता आंदोलन ने जन-मानस में विभिन्न प्रकार के भविष्य के स्वप्नों की बीज को रोपा था। हम सोच रहे थे कि आजादी के बाद ऐसे राष्ट्र का निर्माण संभव होगा जहां मानवतावादी, लोक-कल्याणकारी मूल्यों की सर्वोपरि स्थापना होगी। मानवतवादी मूल्यों का परिष्कार करने वाले समाज का सृजन होगा। आज़ादी के आंदोलन में अपनी जान न्यौछावर करने वालों के आदर्शों पर निर्मित समाज की कल्पना हमें पूरी होती दिखाई दे रही थी। किन्तु आजादी के बाद का यथार्थ इन आदर्शों के विपरीत साबित हुआ। आजादी देश के बंटवारे और सांप्रदायिक दंगों के भीषण हिंसा और वैमनस्य के बीच हुआ।

'मैं और मेरी कविता' संबंधी लेख में वह लिखते हैं की 'जिस संकट से हमारा देश गुजर रहा है और व्यवस्था अशिक्षित, तनमन से कंजारे, जातपात, संप्रदाय, क्षेत्रीयता से ग्रस्त जनता के असंतोष को जिस तरह गोली, लाठी, अश्रुगैस से दबा रही है वैसी स्थिति में कवितआ लिखना बहुत सुखद कार्य नहीं है। लेकिन सच्चाई यही है कि कविता ऐसी स्थिति में लिखी जा रही है। आज़ादी के 25 साल बाद आम आदमी हर तरह से विपणन ही हुआ। हर तरह से वह टूटा है। सबने अपने मतलब से उसे छला है। सत्ता और राजनीतिक दल सबसे वह ऊब व्हुका है। उसका विश्वास सब पर से उठ चुका है। महंगाई, गरीबी उसे तोड़ चुकी है। उसके लिए जिंदा रहने और आगे बढ्ने का कोई रास्ता नहीं हैं।'

आज़ादी के संघर्ष के दौरान जिस बात का डर था वे प्रत्यक्ष मंडराती हुई सामने आयीं और हमें भाषा, जाति, धर्म, प्रांतीयता आदि के नाम पर बढ़ती हुई सांप्रदायिकता का सामना करना पड़ा। आजादी के सपनों से हमारा मोहभंग हुआ। हमने महसूस किया कि हमें केवल राजनीतिक आजादी मिली है। सामाजिक व आर्थिक शोषण से हम मुक्त नहीं हुए हैं। देश में औद्योगीकरण तो हुआ किन्तु न तो किसान-मजदूर की हालत में सुधार होता दिखाई दिया और न ही निम्न मध्यवर्ग, हाशिये पर जीवन यापन करने वाले का शोषण रुका। अंग्रेजों के चले जाने पर जो लोग लोकतान्त्रिक ढंगसे चुनकर सत्ता की कुर्सी पर आए वे भी अन्याय और लूट में अंग्रेजी साहबों से पीछे नहीं थे। गाँधी की हत्या के साथ जीवन मूल्यों की भी हत्या होती दिखाई पड़ती है। राष्ट्रीय विकास कार्यों, पंचवर्षीय योजनाओं, विभिन्न सुधार कार्यक्रमों के बाद भी आम जनमानस पर अभावों-पीड़ाओं और उसके संघर्षों का बोझ कम न हुआ। भ्रष्टाचार और पूँजीवाद का प्रसार होता दिखाई दिया। राष्ट्र, विकास और लोकतंत्र के नाम पर राजनीति करने वालों के चेहरों के पीछे का जो असली चेहरा सामने आया जिसने आम जनमानस में मोहभंग को पैदा किया। इस मोहभंग से पैदा संत्रास और पीड़ा ने साहित्यकार को संघर्ष की ओर अग्रसर किया। कवि ने अपने सामाजिक दायित्व को पहचाना और यथार्थ जीवन के संघर्षों से जूझने के लिए कलम उठाई।

आम आदमी के संवेदनाओं को पहचानने और उसे अभिव्यक्त करने के लिए सर्वेश्वर दयाल सक्सेना को जाना जाता है। वह अपनी पक्षधरता को तय करते हुए लिखते हैं कि 'मैं उस आदमी के साथ उसकी यातना में खड़ा हूँ। संवेदना के स्तर पर मैं ही वह आम आदमी हूँ जिसे लड़ाई का भी कोई रास्ता दिखाई नहीं देता है। जो हिंसात्मक क्रांति का रास्ता दिखा रहें है उनकी संगठन क्षमता कितनी है पता नहीं। .....जब कलम मेरी हाथ में है तो मैं उसे लेकर ही आम आदमी कि लड़ाई में उसके साथ रहना चाहता हूँ। मैं किसी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं हूँ क्योंकि कोई भी राजनीतिक दल आम आदमी क साथ नहीं है, उसका नाम भले ही अकेला हों। वह अपनी लड़ाई में अकेला है।'

स्वतंत्रता के बाद देश में औद्योगीकरण के साथ ही शहरीकरण, नगरीकरण की प्रक्रिया भी शुरू हुई। इस प्रक्रिया के साथ समाज में एक ऐसे मध्यवर्ग का उदय हुआ जो अपनी परंपरागत साधनों को छोड़ आधुनिकता और नगरीकरण के जड़ में आया। आजादी से पूर्व अंग्रेजों द्वारा स्थापित उद्योग की वजह से बहुत ही सीमित संख्या में लोग काम के सिलसिले में गाँव से लोग शहरों की ओर मुड़े थे। लेकिन आजादी के बाद स्वतंत्र रूप से स्थापित उद्योगों तथा उद्योग नगरों में बड़ी मात्रा में मजदूर वर्ग गाँवों से शहरों में आया। जिसकी वजह से पुराने दौर से स्थापित शहरों का विस्तार हुआ तथा नए शहर, कस्बे तथा उद्योग-नगर भी बसने लगे। परिणामस्वरूप कृषि से हटकर भी रोजगार की खोज में लोग शहरों की ओर चल पड़े। आज़ादी के बाद उत्पादन के संबंधों में हुए बदलाव ने भारतीय समाज व्यवस्था में बुनियादी परिवर्तन उत्पन्न किए।

इस बदलती हुई सामाजिक व्यवस्था ने एक जागरूक मध्यवर्ग को जन्म दिया जो अपने साधनों की सीमाओं को जानता था और उन कारणों के प्रति भी सचेत था। यही वह वर्ग था जो ऊपर तथा नीचे के वर्ग को जोड़ता था, किन्तु अपनी व्यथा के भीतर संत्रस्त था। इस मध्यवर्ग की घुटन, कुंठा और आक्रोश की अभिव्यक्ति भी इस युग के साहित्य में हुई है। इस आक्रोश और घुटन का एक आयाम श्रम का परायापन, आत्मनिर्वासन, अवमानवीकरण और अकेलापन था। गाँव उससे छूट तो गया था, किंतु उसकी चेतना में जीवित था। वह गाँव और शहर के बीच की आर्थिक दूरी के प्रति भी जागरूक था। विकास के नाम पर किए जा रहे प्रयासों और उनसे प्राप्त होने वाले लाभ में किसान-मजदूरों के अल्पांश की हिस्सेदारी को भी देख रहा था। कहना चाहिए कि असलियत से वह काफी वाकिफ था और उसे बेनकाब कर उसके खिलाफ संघर्ष के लिए उत्सुक नयी कविता का सृजन इसी मनोभूमिका में हुआ है।

कविता, व्यवस्था और कवि के दायित्वों के संबंध में चर्चा करते हुए सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कहते हैं कि 'मैं यह जनता हूँ कि कविता से समाज नहीं अब्दला जा सकता। जिससे बदला जा सकता हैं वह क्षमता मुझमें नहीं है। फिर मैं क्या करूँ? चुप रहूँ? उसे खुश करने का नाटक करूँ? वह मेरे मान का नहीं। मैं यह मानता हूँ कि हम जिस समाज में हैं, जिस दुनिया में हैं वहाँ हमें अपना होना प्रमाणित करना है।'

बोध प्रश्न

- सर्वेश्वर और उनके युग परिवेश के संबंध में संक्षिप्त कथन लिखें।
- सर्वेश्वर के साहित्य में उपस्थित मानवीय मूल्य का विश्लेषण करें?
- आज़ादी के बाद हुए बदलाव के साहित्यिक प्रभाव की पड़ताल करें।

11.3.4 काव्य संवेदना

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना नयी कविता की प्रगतिशील धारा के कवि हैं। आजादी के बाद हिंदी साहित्य में शब्द को कर्म की अर्थवत्ता से जोड़ने के लिए रचनाकार ने जो दायित्व अपने ऊपर लिया और जिसे पूरा करने के लिए वह निरंतर संघर्षरत रहा, सर्वेश्वर उसी संघर्ष के प्रति प्रतिबद्ध रचनाकार हैं। वह लिखते हैं कि 'मैं साधारण हूँ और साधारण ही रहना चाहता हूँ, आतंक बनकर छाना नहीं चाहता। मेरी भाषा, मेरे भाव, मेरे विचार, बिंब, प्रतीक कुछ भी आतंककारी न हो सकें। वे सहज आत्मीय हों। हर कविता लिखते समय मेरी यही कामना रहती है। इसलिए मैं बिंब और प्रतीक आम आदमी की रोज़मर्रा की जिंदगी से उठाता हूँ। यदि मेरी भाषा मेरा साथ देती और मुझमें क्षमता होती तो मैं अपने देश के अनपढ़ आदमी के लिए छंदबद्ध सहज कविता लिखता जिसे वह याद करके गा सकें, कवि के रूप में मेरी यही सबसे बड़ी कामना हैं। अपने बच्चों के लिए छंदबद्ध कविताएँ मैंने लिखी हैं और लिख रहा हूँ, पर जो कहना चाहता हूँ वह अभी छंद और गानों में नहीं बांध प रहा हूँ। यह मेरी सीमा है। मैं अपनी यह सीमा तोड़ना चाहता हूँ।' सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कविता और कवि संबंधी अपने विचार को बताते हुए एक कवि की प्राथमिकताओं को भी बताते हैं और उसकी सीमा को भी वर्णित करते हैं जो उनके काव्य संवेदना संबंधी स्पष्टता को प्रदर्शित करता हैं।

अपनी कविता में उन्होंने अपने समय और समाज की समस्याओं, चिंताओं, मनोदशाओं, विसंगतियों और विद्रूपताओं, आत्म-निर्वासन और पराएपन को वाणी दी। वे अकेले में बैठ अपनी व्यक्तिगत समस्याओं से जूझने या उन्हें मुखर करने वाले कवि नहीं हैं। सम सामयिक जीवन-संदर्भों और समस्याओं से सीधे जुड़ने के कारण उनकी संवेदनात्मक क्षमता ने उनकी कविता को निरंतर नवीन विचारों और दृष्टियों से संपन्न बनाया है। उनके काव्य संकलन उनकी इस विकास यात्रा के परिचायक हैं। नयी कविता ने जीवन के यथार्थ संघर्षों को पहचानते हुए राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में सांस्कृतिक विघटन के कारण विघटित मूल्यों के विरुद्ध समाज लड़ा है। यह समर सर्वेश्वर ने संवेदना, विषयवस्तु और काव्य-भाषा तीनों के स्तर पर जम कर लड़ा। वे मानते थे कि जरूरी नहीं कि कविता ऐतिहासिक-पौराणिक विषयों पर ही लिखा जाए - वह किसी भी विषय पर लिखी जा सकती है। कवि की दृष्टि इतनी व्यापक होनी चाहिए कि वह विषय को उस कोण से देख सके जहाँ से वह संवेदना को छूता हो। अपनी इस दृष्टि के कारण ही सर्वेश्वर की कविता के केन्द्र में विशिष्ट व्यक्ति न होकर आम आदमी रहा है। मामूली आदमी की पीड़ा के चित्र उनकी कविता में बहुत मिलते हैं -

जिन्दगी को अर्थ देने के चक्कर में
वह व्यर्थ हो गया है

मंदिरों में झाड़ू लगाते
और कीर्तन सभाओं की दरियाँ बिछाते-बिछाते
वह किसी भी काम के लिए असमर्थ हो गया है। - 'गर्म हवाएँ

मौजूदा समाज की व्यवस्था में शोषित व्यक्ति का यह चित्र मानवीय अनुभूति की गहराई को छूने के साथ ही साथ वर्गों में बँटे समाज की व्यथा को मुखर करता है। इसी तरह का एक और चित्र है जो सामाजिक शोषण और अन्याय से पिसते हुए मनुष्य को प्रस्तुत करता है -
यह खेतिहर मजदूर भूख से मर गया
यह चौपाए के साथ बाढ़ में बह गया,
यह सरकारी बाग की रखवाली करता था
लू में टपक गया। - कुआनो नदी

उनकी कविता में निजी सुख-दुख के साथ समाज का विशेष रूप से उसके दलित शोषित वर्ग का सुख-दुख भी व्यक्त हुआ। आरंभिक कविताओं में व्यक्त निजी सुख-दुख का स्थान धीरे-धीरे परवर्ती कविताओं में जीवन जगत की वास्तविकताएँ लेती गई। परिवेश के साथ कवि का लगाव दृढ़तर होता गया। वह अपनी कविता और काव्य संवेदना की चर्चा करते हुए लिखते है कि 'मैं अपने देश की और दुनिया की काव्य परंपरा और काव्ययात्रा से परिचित हूँ। अंतराष्ट्रीय मुहावरे में कविता कर सकता हूँ। पर मुझे वह सब नकली लगता है। ऐसा लेखन मेरे अस्तित्व की आवाज़ नहीं बन पाता। मैं आधुनिकता से अधिक समसामयिक होना चाहता हूँ। कविता अपने गाँव, शहर, समाज से होता हुआ दुनिया की ओर बढ़ता हूँ।'

उनके कवित्व के विकास में भारतीय ग्राम्य जीवन की संवेदना और समाजवादी विचारधारा दो प्रमुख तत्व रहे। सर्वेश्वरदयाल सक्सेना की कविताओं के ठिकाने बताते हुए प्रयाग शुक्ल लिखते हैं- "एक ठिकाना तो वह गाँव रहा जहाँ वे जन्मे और बड़े हुए, दूसरा परिवार, तीसरा मित्र-वर्ग, चौथा वह वृहत्तर समुदाय जिसका मानो स्वयं अपना कोई ठौर-ठिकाना नहींयानी सताए हुए लोग। पाँचवीं प्रकृति की वह बहुत बड़ी दुनिया, जिसमें वह जीवन-मर्मों को पाने की एक आकुल चेष्टा करते थे और उस पर यह गहरा भरोसा भी कि जब सब साथ छोड़ देंगे तो कोई चिड़िया, टहनी, बारिश की कोई बूँद, घास, व्यथा-कथा सुनने से इंकार नहीं करेगी, बल्कि एक अनुकंपा की तरह साथ रहेगी।"

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने अपनी कविताओं में व्यापक जीवन के विविध अनुभवों को दर्ज किया हैं। उनका मानना है कि कविता किसी भी विषय पर लिखी जा सकती है क्योंकि वह मानव जीवन का दर्पण है। कविता के माध्यम से कवि राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक और अन्य क्षेत्रों में जर्जर परम्पराओं से लड़ने-भिड़ने का प्रयास करता है। कवि यदि सच्चा कवि है तो वह जीवन की सच्चाई के प्रति ईमानदार रहकर अपनी कविताएँ रचता है। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की कविता किसी गुट अथवा वाद में बंधी कविता नहीं है बल्कि उसमें व्यापक मानवता का दर्शन होता है। जैसे-

‘दुख तुम्हें क्या तोड़ेगा
तुम दुख को तोड़ दो,
केवल अपनी आँखें
औरों के सपनों से जोड़ दो।’

कवि के रूप में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना खेतों में काम करते हुए किसान को, कुहरे में लिपटे गाँव को, लोकगीत को, बैल को, करघे को, कोल्हू को, जाल को, पकती रोटी को, शोर को, जंगल को, हर नन्ही याद को, हर नए फूल को अपनी शुभकामनाएँ नए साल में देते हैं-
नए साल की शुभकामनाएँ!
खेतों की मेड़ों पर धूल भरे पांव को,
कुहरे में लिपटे उस छोटे से गाँव को,
नए साल की शुभकामनाएँ!

इन पंक्तियों से यह स्पष्ट पता चलता है कि सर्वेश्वर व्यापक जीवन के आस्था के कवि है। आत्मपीड़ा का साक्षात्कार के द्वारा एक कविता में वह जीवन की महानता को छू लेना चाहते हैं। पराजय और घुटन की अनुभूतियां इन्हें टूटने या निराश होने के अपेक्षा समर्पणशील और गतिशील होने के लिए प्रेरित करती हैं।
"सुनो, मैं भी पराजित हूँ
सुनो, मैं भी बहुत भटकी हूँ
सुनो, मेरा भी नहीं कोई
सुनो, मैं भी कहीं अटकी हूँ
पर न जाने क्यों
पराजय ने मुझे शीतल किया
और हर भटकाव ने गति दी;
नहीं कोई था
इसी से सब हो गए मेरे
मैं स्वयं को बाँटती ही फिरी
किसी ने मुझको नहीं यति दी" (- आज पहली बार)

सर्वेश्वर की कविताओं में प्रकृति चित्रण का एक भिन्न रूप देखने को मिलता हैं जिसमें न छायावादी संस्कार अहि न ही प्रगतिवादी तरीका। उनकी कविताओं में अप्रस्तुतों के आयोजन और बिंब रचना की दृष्टि से ‘भोर’ (तीसरा सप्तक) शीर्षक रचना अपना ध्यान आकर्षित करती है।
‘सलमे सितारों की कामवाली
नीली मखमल का खोल चढ़ा
अम्बर का बड़ा सिंधोरा

धरती पर,
नदियों के जल में,
गिरि- तरु के शिखरों से ढर -ढर कर
सब सेंदूर फ़ेल गय।'

सर्वेश्वर की कविताओं में कहीं पर भोर को लजाती हुई हथेलियों से मुंह छुपाएं चली जाती है तो कहीं सूखा पीला पत्ता कार के पीछे दौड़ता हुआ कहता है-
हम में भी गति है-
सुनोन, हम में भी जीवन है,
रुकोन, रुकोन हम भी
साथ चलते है,
हम भी प्रगतिशील है।

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की काव्य भाषा बोलचाल की है। उनकी काव्य भाषा में अतिशय अलंकार या फिर असाधारण भाषा का प्रयोग कम देखने को मिलता हैं। बड़े-बड़े शब्दों और अलंकारों का ठाठ बांधकर चमत्कार उत्पन्न कर दें अकविता में सहज है लेकिन सीधी और साधी हुई भाषा के साथ आम जन जीवन के दुख, यथार्थ को अभिव्यक्त करना, स्वर देना मुश्किल होता है और सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपनी कविताओं के माध्यम से इस कठिन राह को चुना। सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपनी कविताओं में रूप या शिल्प की अपेकषा कथ्य पर सर्वाधिक बल दिया है। उनकी दृष्टि में कविता कभी कभी एकदम सीधे और सपाट हो जाती है तब इनकी कृतियाँ गद्यात्मक होने लगती है। इसीलिए इनकी कविता खाली समय में गद्य के निकट पहुँच जाती है।

बोध प्रश्न

- सर्वेश्वर की कविता ग्रामीण संवेदना की कविता है, स्पष्ट करें।
- "सर्वेश्वर की कविता में मोहभंग से उत्पन्न अवसाद, पीड़ा और घुटन के चित्र मिलते हैं" टिप्पणी लिखें।
- सर्वेश्वर की काव्य भाषा को विश्लेषित करें।

11.4 पाठ सार

सन् 1960 के बाद की हिंदी कविता में सर्वेश्वरदयाल सक्सेना का नाम कई दृष्टियों से बहुत ही महत्वपूर्ण है। हिंदी कविता को भारतीय जीवन और समाज के यथार्थ और ज्वलंत समस्याओं से जोड़ने का काम यों तो भारतेंदु युग से ही शुरू हो गया था और हर युग के रचनाकार इसे अपनी विशिष्ट क्षमताओं और प्रवृत्तियों के अनुरूप एक महत्वपूर्ण दायित्व के रूप में निभाते आ रहे थे। फिर भी, चालीस के दशक और उसके बाद की कविता पर विदेशी प्रभाव और अनुकरण का आरोप लगाया जाने लगा था। सर्वेश्वर ने हिंदी कविता में निराला और

मुक्तिबोध की परंपरा को आगे बढ़ाने का प्रयास किया। कविता को आम आदमी-किसान-मजदूर की पीड़ा से जोड़ते हुए उसके लिए जिम्मेदार व्यवस्था पर कटु-तिक्त व्यंग्य किए। काव्य बिंबों की सामाजिकता, भाषा की लोक संवेदना, व्यंजनाधर्मी प्रतीक विधान, बिंब विधान की नवीनता, लोक छंदों और लयों की स्वीकृति के माध्यम से उन्होंने नयी कविता में सशक्त व्यंग्य काव्य की सृष्टि की, जो अपने आप में तो पर्याप्त महत्वपूर्ण है ही इस दृष्टि से भी काफी महत्वपूर्ण है कि इसने समसामयिक और अगली पीढ़ी के हिंदी कवियों को तेजी से प्रभावित किया। धुमिल, मलयज, लीलाधर जगूड़ी आदि समकालीन कवियों पर सर्वेश्वर का प्रभाव काव्य और शिल्प दोनों स्तर पर काफी स्पष्ट और गहरा है। समसामयिक कविता पर उनकी कविता के प्रभाव का साक्ष्य देते हुए डॉ. जगदीश गुप्त ने लिखा है- 'सर्वेश्वर उन कवियों में सर्वप्रमुख हैं जिनकी कविताओं ने छठे दशक के आरंभ में ही मुझे 'नयी कविता' की शक्ति-सामर्थ्य के प्रति गहराई से आश्वस्त किया था। जो विश्वास आधुनिक युग-बोध से युक्त उनकी सच्ची और मार्मिक अभिव्यक्ति ने मुझे उस समय और बाद में दिया, उसके सहारे मैंने निर्भीक हो कर नयी कविता की लड़ाई लड़ी जिसका फल भला-बुरा जैसा भी माना जाए सामने है। इस दृष्टि से सर्वेश्वर के कृतित्व का नयी हिंदी कविता के संदर्भ में ऐतिहासिक महत्व माना जाएगा, इसमें संदेह नहीं।

11.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए है-

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने अपने साहित्य में आम जनता की भावनाओं और पीड़ा को मार्मिक अभिव्यक्ति प्रदान की है।
2. उन्होंने आजादी के बाद घटित मोह भंग को अपनी रचनाओं में प्रमुख स्थान दिया है।
3. उन्होंने हिंदी कविता में निराला और मुक्तिबोध की कविता को आगे बढ़ाया।
4. उनकी कविता में समकालीन सामाजिक और राजनीतिक विसंगतियों पर तीखा व्यंग्य मिलता है।
5. उनकी कविताओं में कथ्य और शिल्प दोनों ही स्तरों पर लोकतत्व की प्रधानता है।

11.6 शब्दा संपदा

1. अल्पांश = कुछ भाग
2. अवसाद = मनोविज्ञान के क्षेत्र में मनोभावों संबंधी दुख
3. कार्यवाहक = अस्थायी
4. कृतित्व = सृजन की शैली
5. घुटन = घबराहट
6. जागरण = जागने की क्रिया।
7. नवीनता = नयापन
8. पीड़ा = दर्द
9. सामर्थ्य = योग्यता, शक्ति

11.6 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ)दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'कुआनो नदी'का काव्य रूप क्या है? बताएं।
2. सर्वेश्वर के काव्य लेखन के ऊपर पड़ने वाले सामाजिक राजनीतिक प्रभावों का आकलन करें।
3. सर्वेश्वर अपनी कविताओं में किस-किस स्तर पर नए प्रयोग करते हैं? बताएं।
4. प्रकृति के प्रति सर्वेश्वर के दृष्टिकोण की विशेषताएँ बताइए।

खंड(ब)

(आ)लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. सर्वेश्वर की काव्य-भाषा में किन बोलियों और भाषाओं का मेल है? स्पष्ट करें।
2. सर्वेश्वर द्वारा बहु-प्रयुक्त चार प्रतीक बताइए।
3. सर्वेश्वर के छंद विधान में उनकी ग्रामीण संवेदना किस तरह प्रकट हुई है?
4. सर्वेश्वर पर किन राजनीतिक विचारधाराओं का प्रभाव माना जाता है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. सर्वेश्वर की कविता के केन्द्र में निम्नलिखित में से कौन है? ( )

   (क) बुद्धिजीवी (ख) राष्ट्रीय नेता (ग) आम आदमी (घ) साहित्यकार वर्ग

2. उनकी कविता का स्वर - ( )

   (क) क्रांति की चेतना का है (ख) समझौते का है

   (ग) शांति की स्थापना का है (ई) इन में से कोई नहीं

3. सर्वेश्वर की काव्य भाषा की सबसे बड़ी विशेषता ( )

   (क) बोलचाल की है (ख) व्यंग्यात्मक है (ग) बिंब प्रधान है। (घ) लोक भाषा है।

4. सर्वेश्वर कौन से सप्तक के कवि हैं? ( )

   (क) प्रथम (ख) दूसरा (ग) तीसरा (घ) चौथा

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. सर्वेश्वर की ..... में ग्रामीण संवेदना की मौजूदगी है।
2. सर्वेश्वर के पहले काव्य संकलन का प्रकाशन वर्ष ..... है।
3. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना को साहित्य अकादमी पुरस्कार सन ..... में मिला था।
4. उन्होंने ..... व्यक्तियों को ही अपने काव्य का विषय बनाया है।

III. सुमेल कीजिए -

1. कविता	(अ) प्रकाशन वर्ष
2. एक सूनी नाव	(आ) 1973
3. कुआनो नदी	(इ) 1966
4. जंगल का दर्द	(ई) 1982
5. खूटियों पर टँगे लोग	(उ) 1976

11.8 संदर्भ ग्रंथ

1. समकालीन हिंदी कविता : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी
2. सर्वेश्वर और उनकी कविता : डॉ. कृष्णदत्त पालीवाल
3. नयी कविता - सीमाएँ और संभावनाए सीमाएँ : श्री गिरिजा कुमार माथुर

इकाई 12 : जंगल का दर्द : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 उद्देश्य
12.3 मूल पाठ : जंगल का दर्द : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना
12.3.1 जंगल का दर्द
12.3.2 जंगल का दर्द का भाव पक्ष
12.3.3 जंगल दर्द का कला पक्ष
12.4 पाठ सार
12.5 पाठ की उपलब्धियाँ
12.6 शब्द संपदा
12.7 परीक्षार्थ प्रश्न
12.8 पठनीय पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य का आधुनिक युग प्रत्येक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस युग में साहित्य की प्रत्येक विधा समग्र रूप से विकसित हुई है। इस युग में विशेष रूप से कविता का प्रचुर विकास देखा जा सकता है। कविता में यह आधुनिकता का युग रहा है। भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग और छायावाद के प्रौढ गंभीर साहित्यकारों ने अपनी सर्जनाशक्ति के माध्यम से हिंदी साहित्य को एक नया आयाम प्रदान किया। खासकर कविता के क्षेत्र में काव्य के रूप और भाव परिवर्तित हुए। आधुनिक युग के कवियों ने अपनी कविताओं के द्वारा जीवन की जटिल अवस्थाओं को अभिव्यंजित करने का प्रयास किया। आधुनिक हिंदी काव्य के ऐसे सशक्त कवियों की पंक्ति में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का विशेष स्थान है। सर्वेश्वर मूलतः एक कवि हैं और कविरूप में उनकी विशिष्ट पहचान है। उनकी कविताओं में मानवतावादी दृष्टि दिखाई देती है। इसी कारण उनकी कविता उनके जीवन संघर्ष की सच्ची अभिव्यक्ति है। इस इकाई में आप सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के व्यक्तित्व एवं उनके काव्य संग्रह 'जंगल का दर्द' का अध्ययन करेंगे।

12.2 उद्देश्य

छात्रो! इस इकाई में आप सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के चर्चित काव्य संग्रह 'जंगल का दर्द' के विविध आयामों का आलोचनात्मक अध्ययन करेंगे। इस इकाई के अध्ययन से आप-

- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना कृत 'जंगल का दर्द' काव्य संग्रह की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे।
- 'जंगल का दर्द' काव्य संग्रह के भाव पक्ष से परिचित हो सकेंगे।

- 'जंगल का दर्द' काव्य संग्रह के कला पक्ष से परिचित हो सकेंगे।

12.3 मूल पाठ : जंगल का दर्द : सर्वेश्वर दयाल सक्सेना

12.3.1 जंगल का दर्द

सन 1959 में अज्ञेय द्वारा प्रकाशित 'तीसरा सप्तक' काव्य संग्रह में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना को कवि के रूप में स्थान मिला और वे हिंदी साहित्य जगत में कवि के रूप में चर्चा का केंद्र बन गए। हिंदी काव्य इतिहास की दृष्टि से देखा जाए तो सर्वेश्वर ने नए कथ्य एवं शिल्प को लेकर अपने काव्य को सुचारु रूप से बुनने का काम किया है। अत: उन्होंने अपने युग की त्रासदी को नये प्रतिकों और बिम्बों में बाँधकर प्रस्तुत किया है। वे नयी कविता को दिशा देकर आगे ले जानेवाले प्रमुख कवियों में से एक हैं। निश्चित ही सर्वेश्वर ने नयी कविता को पहचान बनाने में ऐतिहासिक योगदान दिया है। जब भी नयी कविता की बात होगी सर्वेश्वर के काव्य बिना अधूरी रहेगी।

सन 1976 में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का काव्य संग्रह 'जंगल का दर्द' प्रकाशित हुआ। इस संग्रह की कविताएँ दो भागों में विभक्त हैं। पहले भाग में कवि जहाँ एक ओर मुक्ति की मशाल लेकर नई क्रांति के लिए प्रयत्नशील है, तो दूसरी ओर वह आंतरिक जंगल की भयावहता से मुक्ति पाने के लिए खुद को नये सिरे से तलाशना चाहता है। इस संग्रह में आपात काल के दौरान लिखी गई अट्ठावन कविताएँ हैं जिनमें अधिकतर कविताएँ नये प्रतिकों से उस समय की राजनीतिक-आर्थिक-सामाजिक स्थितियों को प्रकट करती हैं।

12.3.2 जंगल का दर्द का भाव पक्ष

भाव का संबंध हृदय के अनुभूति से है। जब हम बाह्य जगत में घटित घटनाओं देखते हैं तो उसका प्रभाव हमारे चित्त पर पडता है, जिसके कारण हमारे भीतर सुख या दुख का भाव उत्पन्न होता है। कवि के मनोभावों का संबंध भी बाह्य-जगत से रहता है। बाह्य-जगत की संवेदनाएँ कवि मन में भाव उत्पन्न करती हैं। अत: हम कह सकते हैं कि वही काव्य श्रेष्ठ होता है अथवा प्राण तत्व माना गया है।

आधुनिक युग संघर्ष, आपाधापी और समस्याओं का युग है। ऐसी स्थिति में मानव अपने जीवन में आनेकानेक भावों का अनुभव मेहसूस ही नहीं करता वरन भोगता भी है। सर्वेश्वर का भाव-प्रधान हृदय काव्य को उन्मुक्त करके मानव-मात्र को एकसूत्र में पिरोता है। इस दृष्टि से युगीन चेतना से प्रेरित सर्वेश्वर के काव्य का भाव क्षेत्र पर्याप्त व्यापक और विस्तृत है। 'जंगल का दर्द' काव्य संग्रह में निहित विविध भावों को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं-

प्रणय भाव

मनुष्य जीवन कि कुछ मूल वृत्तियाँ हैं, जिनमें रागात्मक वृत्ति मनुष्य जीवन की मूल एवं सहज वृत्ती है। ऐसी स्थिति में मनुष्य किसी भी परिस्थिति में जीता हो रागात्मक भावों के प्रति आकर्षित होता ही है। इस कारण सर्वेश्वर के काव्य में प्रणय भाव के अनेकानेक रूपों की अवतारणा हुई है। उनके काव्य में कहीं पर प्रणय भाव का रोमांटिक रूप विराजमान है, तो कहीं पर विरह-जन्म व्यथा भाव का करुण क्रंदन, कहीं पर मानवीय प्रेम की उदात्त भावना निरूपित है, तो कहीं पर उन्मुक्त प्रेम के ऐंद्रियोत्तोजक मनमोहक भाव। कवि के ऐसे प्रणय संसार में मिलन-विरह, आशा-निराशा, क्षोभ-मान, हर्ष-वेदना, आस्था-अनास्था, प्राप्ति-क्षति आदि के भाव सजीव बन पडे हैं, जो पाठकों के संवेदनाओं को जागृत करने में सक्षम हैं। निस्संदेह नयी कविता आधुनिक-भाव-बोध की कविता है। उसका सीधा-सीधा जुड़ाव परिवेश से है। जीवन की युगीन विसंगतियों, जटिलताओं और परिस्थितियों के कारण नयी कविता क भाव-चित्रण में तरलता और मधुरता का अभाव दिखाई देता है जो इससे पूर्व की हिंदी कविता में अधिक मात्रा में निरूपित हुआ है।

सर्वेश्वर के काव्य में प्रेम, मस्ती और किशोरकालिक अल्हड़ता के रोमानी भावबोध दृष्टिगोचर होता है, परंतु वह भावबोध छायावादी काव्य की तुलना में कहीं निराला दिखाई देता है। "यह रोमानी भावबोध कहीं-कहीं छायावादी याद ताजा करता है, किन्तु ध्यान रहे इस भावबोध में छायावादियों की सी आंतरिकता, गोपन स्थितियाँ और उनके अमूर्त बिंब नहीं हैं।" वास्तव में सर्वेश्वर एक व्यक्तिवादी रोमांटिक कवि हैं। उन्होंने व्यक्तिवाद और रोमांस दोनों को अपने स्वभावानुकूल ढाल लिया है। सर्वेश्वर के नारी विषयक प्रणय भावों में यथार्थ स्पष्टता और खुलापन है। वे प्रेम को खुलेपन से स्वीकार करते हैं।

काममूलक संवेदना भी मनुष्य की अनिवार्य एवं अपरिहार्य संवेदना है। अत: सर्वेश्वर की कविताओं में कहीं-कहीं काममूलक प्रणय भावना अभिव्यक्त हुई है। ऐसी कविताओं में कवि की प्रेमानुभूति में काम (सेक्स) की भावना है। कवि नारी-तन गंध तथा उसके सांसों की गर्माहट के आस्वाद के लिए आतुर है। तो कभी नारी की देह के संगीत का श्रवण करता हुआ उसके मस्तक, भौंहे, आँखें, कपोल, अधर, कंठ, उरोज, नाभि आदि अवयवों के चुम्बन की चाह में इंद्रियों सहित विलीन होना चाहता है। कवि का कामातुर मन प्रिया को पुकार उठता है-

"कहाँ हो तुम?
शांत निस्पंद बर्फ पर

एक लपट की तरह
मैं नाच रहा हूँ,
मुझे अपनी ठोस बाहों में कस
चूर चूर कर
अपने में समाहित कर लो
इसके पहले कि मैं
बुझ जाऊँ।" (देह का संगीत-2, जंगल का दर्द)

स्पष्ट है कि सर्वेश्वर की प्रणय-भावना भोगमूलक भी है। कवि मन नारी-शरीर के प्रति भोग-भाव से आतुर है। यहाँ कवि की प्रेमानुभूति में काम की मुखर अभिव्यक्ति निहित है।

बोध प्रश्न

- मनुष्य जीवन की मूल एवं सहज वृत्ति का नाम बताइए।

वैचारिक संवेदना

सर्वेश्वर के काव्य में जो रोमानी तत्व हैं, उन्हीं से उनकी वैचारिक संवेदना का विकास हुआ है। कविता में विचार को अनुभूत करा देना कवि का लक्ष्य रहता है। अत: वैचारिक संवेदना ही कवि कर्म में अहम भूमिका निभाती है। इस दृष्टि से डॉ. जगदीश गुप्त के विचार अवलोकनीय है, "नयी कविता बहुधा विचारों को छोड़ नहीं पाती क्योंकि बुद्धि को असंतुष्ट और स्पर्शहीन रखकर वह भावों तक जाना नहीं चाहती। नये युग का सतर्क वातावरण उसे ऐसा करने नहीं देता। भावों और विचारों के परस्पर उलझे सूत्रों में वह विचार के सूत्र खींचकर भावों के सूत्रों को छोड़ने का यत्न करती है। बुद्धि से हृदय तक विचारों और रगों के मिले-जुले अंतर स्तर हैं। आज की कविता इनमें से किसी को भी छू लेने में अपनी सार्थकता मानती है।"

सर्वेश्वर की कविताओं में विचारानुभूतियों का जगत-सापेक्ष निरूपण हुआ है, जो समाज के प्रति कवि की जागरूकता का परिचायक है। कवि अपनई जीवननुभूतियों के कटु-सत्य को वैचारिक संवेदना से साकार करता है। सर्वेश्वर की वैचारिक संवेदना लघु मानव से लेकर विश्व कल्याण की समस्याओं तक को साथ लेकर अवतरित हुई है। गरीबी, भुखमरी, शोषण, अराजकता, विकृति वर्गभेद आदि समस्याएँ यहाँ वैचारिक बेचैनी ने अनेक रूपों में व्यक्त हुई हैं। कवि कलुषित समाज, भ्रष्ट राजनीति, शिथिल प्रशासन, जीवनव्यापी जड़ता और निष्क्रियता आदि से मुक्ति चाहता है। यह वही मुक्ति है जो हमें स्वायत्तता, निजता और अस्मिता से जोड़ सकती है इसलिए कवि कहता है-

“चिडिया को लाख समझाओ
कि पिंजड़े के बाहर
धरती बहुत बडी है, निर्भय है
वहाँ हवा में उसको
अपने जिस्म की गंध तक नहीं मिलेगी।
यूँ तो बाहर समुद्र है, नदी है, झरना है
पर पानी के लिए भटकना है,
यहाँ कटोरे में भरा जल गटकना है।
बाहर दाने का टोटा है,
यहाँ चुग्गा मोटा है।
बाहर बहेलिये का डर है,
यहाँ निर्द्वंद कंठ स्वर है।
फिर भी चिडिया
मुक्ति का गाना गाएगी,
पिंजरे से जितना अंग निकल सकेगा, निकालेगी
हरसूँ जोर लगाएगी,
और पिंजरा टूट जाने या खुल जाने पर,
उड जाएगी।” (मुक्ति की आकांक्षा, जंगल का दर्द)

कई आलोचकों का मानना है कि सर्वेश्वर पर लोहियावादी विचारधारा का प्रभाव है परंतु वे स्वयं को प्रभावादी लेखक नहीं मानते। उनकी वैचारिक संवेदना किसी व्यक्ति के विचारवाद से प्रभावित न होकर अपने जीवनानुभव की संवेदना से युक्त है। सर्वेश्वर के काव्य में मानवीय करुणा की आग दहकती है। आज मनुष्य स्वार्थी हो गया है। चारों ओर आराजकता फैली हुई है। समाज में एक ओर शोषण करनेवाले मदांध सत्ताधीश हैं तो दूसरी ओर चापलूसों की फौज खड़ी है। समाज इन दोनों वर्गों से त्रस्त है। कवि ऐसे मदांध सत्ताधीशों को उखाड़ फेंकने के पक्ष में हैं। मनुष्य को साहस से एकजुट होकर ऐसे सत्ता के भेड़िए को भगाने के लिए चेतना की मशाल जलाने के लिए आवाहन करता है-

“इतिहास के जंगल में
हर बार भेड़िया माँद से निकाला जाएगा
आदमी साहस से, एक होकर,
मशाल लिए खड़ा होगा।” (भेड़िया-2, जंगल का दर्द)

कवि वर्तमान समाज में फैली अराजकता, चापलूसी, असमानता, पशुता, अवसरवादिता, स्वार्थता और दुर्बलता को समाप्त कर मानवीय मूल्यों की स्थापना करना चाहता है। इसलिए कवि कहता है-

"शब्द जिन्हें मैं बर्फ की सिल्लियों पर भी
अकेली चींटी-सा चला ले जाता था
अब अंगारों से धधक रहे हैं।
उन से मैं खेल नहीं सकता।
वे युद्धभूमि में बदल गए हैं।" (आग, जंगल का दर्द)

सर्वेश्वर की वैचारिक संवेदना में पूरा युगबोध देखा जा सकता है। सर्वेश्वर का कवि-कर्म जनता के गूंगेपन की आवाज है। मानवीय जीवन की समग्रता और पूर्णता की खोज है।

बोध प्रश्न

- कवि किसके पक्ष में हैं?

समकालीन परिवेश से उत्पन्न संवेदना

सर्वेश्वर ने अपने काव्य-सृजन का आरंभ रोमांटिक कविता से किया है परंतु उन्होंने अपने समय के समाज और परिवेश को कभी भी उपेक्षित नहीं किया। उनका काव्य अपने जमाने के मनुष्य, समाज और परिवेश के प्रति समर्पित है। उन्होंने परिवेश के प्रतिक्षण के परिवर्तित रूप को भोगा है तथा उसकी हर स्थिति से अपना संबंध स्थापित किया है। यही कारण है कि उनके काव्य में समकालीन परिवेश के बिंब दिखाई देते हैं। इसीलिए अज्ञेय ने सर्वेश्वर की कविताओं के बारे में कहा था- "समकालीन सत्य और यथार्थ को जो नए कवि सफल और सबल हाथों से पकड सके, जो सच्चे अर्थों में समकालीन जीवन से संपृक्त हैं- उनमें सर्वेश्वर जी का विशेष स्थान है।"4 सर्वेश्वर की कविताएँ समकालीन परिवेश से उपजी समस्याओं, चुनौतियों एवं वैज्ञानिक बोध का साक्षात्कार कराती है। 'जंगल का दर्द' संकलन का प्रकाशन आपातकाल के समय हुआ है। आपातकालीन परिवेश में फैली जड़ता, बर्फीला ठंडापन देखकर कवि कहता है-

"कितनी ठंड है
शब्द कंठ में ही
बर्फ हो गए।" (कितनी ठंड है, जंगल का दर्द)

स्पष्ट है कि कवि को कंठ दिखायी नहीं देता जो कि जन-चेतना को ताप में बादल सके। इसके विपरीत समूचे परिवेश में ऐसी शीतलता छायी है जिसके कारण आँख के आँसू कपोलों पर ढुलककर जम गए हैं।

आज़ादी से पहले अनेक लोगों ने सुखमय भारत का सपना देखा था। अनेक वर्ष बीत गए परंतु वह सपना कागजों पर ही सिमट कर रह गया। सत्ताधीश जनता के सेवक बनने के बजाय चालक निकले। वे अनपढ़-अशिक्षित लोगों का फायदा उठाकर सत्ता हथियाने रहे पर पोषण के बदले शोषण ही करते रहे। कवि सत्ताधीशों को सचेत करता है, जो आदमी अपनी ताकत से अब तक बेखबर था, वही 'स्लेट' पर खड़िया से आग लिखता है-

"मैंने देखा, स्लेट पर
उनकी उँगलियाँ
लौ में बदल रही हैं
और पूरा शब्द लिखते ही
उनका हाथ मशाल में बदल गया है।" (आग, जंगल का दर्द)

आपात स्थिति के भावों को दर्शानेवाली कविताओं में सर्वेश्वर यह कहने को नहीं भूलते कि एक काला तेंदुआ (सत्ता) सारे माहौल को अपने रंग में ढाल रहा है-

"एक तेंदुआ
सारे जंगल को
काले तेंदुए में बदल रहा है।" (काला तेंदुआ, जंगल का दर्द)

सर्वेश्वर के काव्य में समकालीन परिवेश से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं के कारण मानवीय सहानुभूति, दर्द एवं करुणा आदि भावों की अनुभूतियों का मार्मिक निरूपण हुआ है। समाज एवं राजनीति में फैली पाखंडी प्रवृत्ति, अवसरवादिता, विकृति, शोषण, असमानता, अन्याय, दोगलापन आदि के प्रति तीव्र आक्रोश, विद्रोह एवं घृणा के भाव प्रकट करता है।

बोध प्रश्न

- काला तेंदुआ किसके प्रतीक है?

व्यंग्य बोध

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद दिन-ब-दिन मोहभंग की तीव्रता फैलती ही गयी। आजादी के पहले सँजोए गए सारे सपने टूटने लगे और वास्तविक स्थिति का कटु अनुभव होने लगा। देश में फैला भ्रष्टाचार, अवसरवाद, अनाचार, शोषण, स्वार्थ, दोगलापन, झूठे वादे तथा आपसी संघर्ष आदि युगीन विसंगतिपूर्ण परिस्थितियों ने देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक

तथा नैतिक स्तर को काफी नीचे गिराया। मनुष्य वास्तविक रूप में मनुष्य नहीं रहा, उसकी मनुष्यता पशुता में बदल गई। कवि देश की ऐसी विकृत अवस्था को खुली आँखों से देखते हैं तो व्यंग्य करने लगते हैं। कवि व्यंग्य के माध्यम से समकालीन युग की तीव्र पीडा, आक्रोश, करुणा, विद्रोह एवं क्रांति आदि के भावों को व्यक्त करता है।

सर्वेश्वर का व्यंग्य सर्वाधिक तीखा, स्पष्ट, कटु और आकर्षक है। उसमें केवल गुस्सा न होकर, शिष्टता, शालीनता एवं रचनात्मकता के बावजूद आक्रामकता भी है। उनके व्यंग्य सामाजिक विसंगतियों, राजनैतिक पाखंडियों, धार्मिक आडंबरों, मानवीय मूल्यों के विध्वंसकों, छद्मवेशी बुद्धिजीवियों, सत्ताधीशो के दोगलेपन तथा समाज में फैले अमानवीयता पर कटु प्रहार करते हैं। अत: सर्वेश्वर के बारे में यह कथन स्पष्ट है, "व्यंग्यकार अपने विवेक से समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार को न सह पाने के कारण और अपने भीतर सत्य की आग का अनुभव करने के कारण विद्रोही हो जाता है। सर्वेश्वर इसी बोध के विद्रोही कवि हैं।" (कृष्णदात्त पालीवाल)

सर्वेश्वर की कविताओं में पैने व्यंग्य देखने को मिलते हैं। सर्वेश्वर ने आपातकाल में उपजी राजनीतिक स्थिति को बहुत ही अभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। नेताओं के आसपास की चापलूसों की भीड जो नेताओं की हामी भरती है, ऐसी भीड को उन्होंने चाटुकारों तथा कुत्तों की मनोवृत्ति से जोड कर उनपर व्यंग्य कसने का प्रयास किया है-

"सभी कुत्तों की दुम काट दो फिर भी
दुम हिलाने का भाव नहीं जाएगा।
क्योंकि कुत्ता आदत से टुकड़खोरी के रास्ते
बंद करने होंगे।" (कुत्ता, जंगल का दर्द)

बोध प्रश्न

- कवि व्यंग्य कब करता है?

प्रतिरोध और संघर्ष

सर्वेश्वर की कविताओं में जीवन मूल्यों को आहत करनेवाली सत्ता-व्यवस्था के खिलाफ आक्रोश दिखाई देता है। सर्वेश्वर कभी भी राजनीति से नहीं जुड़े, उन्होंने किसी भी दल से अपना संबंध नहीं जोड़ा। उनपर समाजवादी राजनीतिज्ञ डॉ. राममनोहर लोहिया का प्रभाव जरूर था। सर्वेश्वर का मानना था कि अव्यवस्था का विरोध तुरंत करना चाहिए। उन्होंने सर्वहारा वर्ग को प्रतिरोध करने के लिए प्रेरित किया-

"धीरे-धीरे कुछ नहीं होता

इंतज़ार शत्रु है उस पर यकीन मत करो।
उससे बचो।
जो पाना है फौरन पा लो।
जो करना है फौरन करो।" (इंतज़ार, जंगल का दर्द)

पूंजीवादी व्यवस्था ने निरंतर शोषण द्वारा सर्वहारा वर्ग को निरंतर गरीबी की आग में झोंक दिया है। संवेदनहीन प्रशासन मुकदर्शक बनी हुई है। सत्ता की बिगड़ती हुई व्यवस्था के विरोध में खड़े होते मनुष्य को वे प्रेरित करते हैं-

"जब भी भूख से लड़ने
कोई खड़ा हो जाता है
सुंदर दीखने लगता है।" (भूख, जंगल का दर्द)

कोई भी राजनीतिक दल सत्ता में आता है तो वह अपने स्वार्थ को नहीं छोड़ता। इन सत्ताधीशों की भ्रष्ट प्रवृत्ति से सर्वेश्वर बखूबी परिचित हैं। जनक्रांति की शक्ति ने बडे-बडे सिंहासनों को उखाड़ फेंका है। इसी क्रांति ने अंग्रेजी साम्राज्य को जड़ से उखाड़ फेंका है। कवि जनसाधारण को क्रांति की 'आग' जलाने के लिए प्रेरित करता है। स्वस्थ व्यवस्था के लिए संघर्ष आवश्यक है-

"भेड़िया गुर्राता है, तुम मशाल जलाओ।
उसमें और तुममें यही बुनियादी फर्क है
भेड़िया मशाल नहीं जला सकता।
करोड़ों हाथों में मशाल लेकर
एक-एक झड़ी की ओर बढ़ो
सब भेड़िए भागेंगे।" (भेड़िया, जंगल का दर्द)

संशय कायरता, अलगाव, ईर्षा आदि वृत्तियों में मनुष्य की कमज़ोरियाँ छिपी होती हैं। मनुष्य इन कमजोरियों को मात देकर संघर्ष की राह पर इकट्ठा होकर चलेगा तो कोई राह निकल सकती है-

"विपत्ति में
तुम अकेले नहीं हो,
असंख्य सोते कुलबुलाते हैं
चट्टानों में
मिलकर एक धारा बनने को,
इसे पहचानो

राह निकलेगी निश्चय।" (जंगल का दर्द)

समाज में फैली अवसरवादिता, शोषण, अन्याय और असमानता से सर्वहारा वर्ग त्रस्त है। कवि इसके विरुद्ध विद्रोह कर संघर्ष करने के लिए प्रेरित करता है-

"तुम धूल हो-
पैरों से रौंदी हुई धूल।
बेचैन हवा के साथ उठो,
आँधी बन
उनकी आँखों में पड़ो
जिनके पैरों के नीचे हो।" (धूल, जंगल का दर्द)

बोध प्रश्न

- सर्वहारा वर्ग क्यों त्रस्त है?

मानवीय करुणा, वेदना एवं सहानुभूति

सर्वेश्वर मानवीय मूल्यों और मानवीय संवेदना के कवि के रूप में विख्यात हैं। उनकी कविता आम आदमी की पीड़ा से उत्पन्न है। आजादी के इतने वर्षों के बाद भी आम आदमी भूखा, व्याकुल, पीड़ित तथा गरीब है। सर्वेश्वर ने मनुष्य के दुख-दर्द, उसकी दीन-हीन परिस्थिति और व्यथा के प्रति अपनी साझेदारी व्यक्त की है। कवि उन तमाम लोगों के साथ है जो मानवीय संवेदना पाने के लिए उत्सुक हैं। सर्वेश्वर साहित्यकार से अधिक एक सहृदय मानव थे। गरीब, मजदूर तथा सर्वहारा वर्ग की त्रासदी से वे भलीभाँति परिचित थे। उनकी यातनाएँ तथा पीड़ा को उन्होंने अपनी कविताओं के माध्यम से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है-

"वह मज़दूरों की ओर मुखातिब थी-
साथियों! महीनों से आप की
पगार रुकी हुई है.....
आप फाके पर फाके कर रहे हो" (लाल साइकिल, जंगल का दर्द)

आज आम आदमी की समस्याएँ मिटाए नहीं मिटती। उसे अनेक प्रकार के दुख भोगने पड़ते हैं। वह लाख कोशिश करता है फिर भी उसे दुख एवं निराशा ही हाथ लगती है। कवि ने ऐसे ही आम आदमी के पीड़ा दर्द को वाणी दी है-

"तेज़ आँधी में
अब वह बुझी हुई

लालटेन लिए खड़ा है
जाने कब से,
जाने कब तक।" (संतवाणी, जंगल का दर्द)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि सर्वेश्वर की कविताएँ आम आदमी की पीड़ा से उत्पन्न मानवीय करुणा, वेदना तथा सहानुभूति से भरी हुई हैं। साथ ही कविहृदय आम आदमी की निर्धनता, व्यथा एवं विवशता को देख कर द्रवीभूत होता है और समाज में फैली विकृत व्यवस्था के प्रति घृणा व्यक्त करता है।

बोध प्रश्न

- सर्वेश्वर की कविताओं में किसकी पीड़ा अंकित है?

जीवन के प्रति आशा

सर्वेश्वर ने कई सामाजिक एवं आर्थिक दर्दों को झेला था। कवि ने अवसाद, अकेलापन, अविश्वास और पराजय से बाहर निकलकर जीवन के प्रति आस्था प्रकट की है। उनके संदर्भ में नरेंद्र सिंह ठाकुर लिखते हैं- "वह दुख जो कभी हाहाकार का रूप लिये था, जिसके कारण चारों तरफ चीखें सुनाई देती थीं, पहाड़ गिरता हुआ महसूस होता था, दर्द एक महासागर ही था और पूरा नगर जिसके कारण 'मृत' लगता था, वह अपने परिवर्तित रूप में कवि को गति देने लगा, प्रकाश देने लगा यहाँ तक कि उसके अंत:sथल जहाँ से वह बार-बार टूटने के बाद, पराजित होने के बाद निराशा के गहन क्षणों में एक नई आशा, उमंग, स्फूर्ति, चेतना और संकल्प लेकर निकलता है कि जैसे वह अंतःस्थल कोई 'ऊर्जावान शक्ति केंद्र' हो।" (सर्वेश्वरदयाल सक्सेना और उनका काव्य, नरेंद्र सिंह ठाकुर, पृ-58)

बोध प्रश्न

सर्वेश्वर जीवन के प्रति आशान्वित थे, 'जंगल का दर्द' काव्य-संग्रह के माध्यम से स्पष्ट कीजिए।

12.3.3 जंगल दर्द का कला पक्ष

आधुनिक युग में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नये-नये अन्वेषण हुए हैं। साहित्य का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा। हिंदी साहित्य का प्रयोगवाद साहित्य के क्षेत्र में नये-नये अन्वेषण के लिए जाना जाता है। सर्वेश्वर की काव्ययात्रा का इतिहास प्रयोगवादी काल से आरंभ होता है। 'तार सप्तक' के प्रकाशन के साथ ही कवि अभिव्यक्ति के प्रति अत्यंत सचेष्ट और जागरूक होते गये। इसलिए अज्ञेय ने इन कवियों को 'राहों का अन्वेषी, कहा है। प्रयोगवादी कवियों ने हिंदी

कविता की उन रूढ़ियों के विरुद्ध लगातार संघर्ष किया जो अभिव्यक्ति में बाधा बनती थी। नयी कविता का जन्म छायावादी व्यक्तिवाद के विरुद्ध यथार्थोन्मुख व्यक्तिवाद की प्रतिक्रिया के रूप में हुआ था। मुक्तिबोध के शब्दों में कहा जाए तो, "इस प्रतिक्रिया का फल यह हुआ कि नयी कविता जीवन लिए छटपटाने लगी और उसकी चित्रण पद्धति बौद्धिक रही, वरन काव्य रचना का एक प्रमुख सर्जनात्मक तत्व बनकर सामने आई और साथ ही उसकी शैली को भी प्रभावित किया" (नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र, मुक्तिबोध, पृ. 32-33) नई कविता के कवि ने अपने पाठकों के साधारणीकरण के लिए नई काव्य भाषा, नये प्रतीक, नये बिंब आदि को चुना।

काव्य भाषा

कवि की संवेदनाओं को पाठक तक पहुँचाने का सशक्त माध्यम काव्य-भाषा होती है। इस संदर्भ में महाप्राण निराला का कथन है, "जिस वृत्त पर वह कृति की कलिका खिलती है वह है भाषा। भाषा भी समयानुसार अपना रूप बदलती रहती है। कला के साथ-साथ साहित्य में नई भाषा भी विकसित होती रहती है।" (प्रबंध पद्य, निराला. पृ.86) इसलिए काव्य-भाषा किसी भी कवि की रचनाओं को जानने का प्रामाणिक माध्यम होती है। नये कवियों ने सही शब्दों का चयन किया ताकि जीवन के सभी पक्षों को अपने ढंग से प्रस्तुत किया जा सके।

सर्वेश्वर ने परंपरागत काव्य-भाषा को स्वीकार नहीं किया। परंपरागत भाषा जन-जीवन की अनुभूतियों को वहन करने में समर्थ नहीं है। उन्होंने अलंकृत काव्य भाषा का प्रयोग न कर आम बोलचाल की काव्य-भाषा के रूप को अपनाया। ओम थानवी को दिए गए एक साक्षात्कार में वे स्वयं स्वीकार करते हैं कि -"कविता की भाषा को लेकर मेरा कोई आग्रह नहीं है। इस बात की जरूर कोशिश करता हूँ कि जो सहज बोलचाल की भाषा है, उसी में कविता लिखी जाए। 'तीसरा सप्तक' के अपने वक्तव्य में मैंने यही कहा है। ऐसा काव्य जिसके लिए दुरूह, जटिल और अमूर्त की भाषा आवश्यक हो, मैं नहीं रच सकता क्योंकि मेरी संवेदना की बनावट वैसी नहीं है। इसलिए किसी आग्रहवश ऐसा नहीं किया है बल्कि सहज प्रकृतिवश ही मैंने कविता में सरल भाषा को स्वीकार किया है - उसी में काव्य रचा है।" (इतवारी पत्रिका- ओमप्रकाश थानवी, अंक-जून 1981, पृ.43) उनकी सरल भाषा का प्रमाण इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है-

कितनी ठंड है
शब्द कंठ में ही
बर्फ हो गए।
फिर भी स्मृतियाँ
आग की तरह धधक रही हैं जैसे बर्फ में मशाल लेकर

कोई जा रहा हो। (कितनी ठंड है, जंगल का दर्द)

बोध प्रश्न

- सर्वेश्वर ने किसे काव्य-भाषा के रूप में अपनाया?

बिंब और प्रतीक

काव्य में बिंब वर्ण्य विषय को स्पष्ट बजाकर कवि की अनुभूति को पाठक तथा श्रोता के मन में जागृत करना होता है। इसलिए बिंब को काव्य-भाषा की तीसरी आँख कहा गया है- "बिंब काव्य-भाषा की तीसरी आँख है, जो मात्र गोचर ही नहीं किसी अगोचर तत्व को भी एक ओर कारयित्री और दूसरी ओर भावयित्री भाषा के लिए उपलब्ध करती है। वह सिर्फ कैमरे की आँख नहीं है जो दृश्य की अनुपस्थिति के बावजूद दृश्य की अनुकृति प्रस्तुत करें, वह काव्य भाषा की आँख है।" (प्रभाकर श्रोत्रिय, कविता की तीसरी आँख, पृ.24)

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने 'जंगल का दर्द' में बिंब का बहुत ही अनूठा प्रयोग किया है। इस संदर्भ में परमानंद श्रीवास्तव का कथन है- "सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने 'जंगल का दर्द' में पशुलोक की बिंब जाति का सीधा सामना किया है।" (परमानंद श्रीवास्तव, समकालीन कविता का व्याकरण, पृ.53)

सर्वेश्वर ने पशुओं की आक्रामकता को बिम्बों का माध्यम बनाया है। 'भेड़िया','काला तेंदुआ', 'कुत्ता', 'साँप' आदि इसका उदाहरण है।

सर्वेश्वर 'भेड़िया' में आज के आदमी की लड़ाई की ओर संकेत किया है। कवि प्रत्येक आदमी में बसे 'भेड़िया' को खोजने का प्रयास कर रहा है। वन्य पशुओं के बिम्बों के सहारे कवि ने आदमी की लड़ाई को, उसके तनावों को, दूसरों द्वारा उसपर होनेवाले तनाव को बखूबी व्यक्त करने का प्रयास किया है-

"चट्टानों पर झिंझोड़ रहा है अपना शिकार
काला तेंदुआ
चट्टानें, चट्टानें, चट्टाने नहीं रहीं
तेंदुओं में बादल गई हैं।
एक तेंदुआ
सारे जंगल को
काले तेंदुए में बदल रहा है। (काला तेंदुआ-1, जंगल का दर्द)

प्रतीक और बिंब काव्य भाषा की सृजनात्मक प्रक्रिया के अनिवार्य किन्तु विशिष्ट तत्व हैं। सर्वेश्वर ने भेड़िया, काला तेंदुआ, साँप, चिड़िया, साइकिल, कुत्ता आदि ऐसे प्रतीक हैं जिनका प्रयोग करके कवि ने पाठकों के सामने विचारों का सम्पूर्ण जीवित संसार को ही प्रस्तुत करने का प्रयास करने किया है। नए प्रतिकों को सर्वेश्वर ने एक समृद्ध बिंब प्रक्रिया में रूपांतरित किया है-

एक तेंदुआ
सारे जंगल को
काले तेंदुए में बदल रहा है। (काला तेंदुआ-1, जंगल का दर्द)

बोध प्रश्न

- 'जंगल का दर्द' काव्य में प्रयुक्त कुछ प्रतीकों के उदाहरण दीजिए।

12.4 पाठ सार

प्रिय छात्रो! इस इकाई में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला गया। उनके साहित्य का आध्यान करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि सर्वेश्वर बहुमुखी प्रतिभा धनी हैं। उन्होंने सृजनात्मक साहित्य एवं सर्जेनतर साहित्य में लेखन किया। उनका गद्य और पद्य दोनों ही साहित्य महत्वपूर्ण है, परंतु उन्होंने कवि के रूप में अधिक ख्याति पायी। उनका 'जंगल का दर्द' काव्य-संग्रह अनेक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यह संग्रह दो भागों में विभक्त है। इस संग्रह में आपातकाल में लिखी गई कई कविताएँ संकलित हैं। कवि ने समकालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं प्रशासनिक स्थितियों यथार्थ चित्र प्रस्तुत किया है। कवि के अनुसार दर्द के कई स्तर हैं, कभी वह अकेलेपन में महसूस होता है तो कभी परिस्थितियों के विकृत रूप में, कभी संस्कृतिक व्यथा के रूप में तो कभी सत्ता की क्रूर व्यवहार एवं अवसरवादी स्वार्थ के रूप में। कवि को लगता है कि वह मनुष्यों के बीच नहीं बल्कि पशुओं के बीच रह रहा है। उसको अंदर के पशु के साथ-साथ बाहर के पशुओं से भी लड़ना पड़ता है। 'जंगल का दर्द' संग्रह की कविताएँ छोटी है किंतु प्रणय अभावों से निर्मित दर्द छोटा नहीं है।

12.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन के बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं-

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी तथा नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षर हैं।
2. 'जंगल का दर्द' संग्रह में कवि सर्वेश्वर ने समकालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं प्रशासनिक स्थितियों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

3. 'जंगल का दर्द' में सर्वेश्वर एक व्यक्तिवादी रोमानी कवि के रूप में प्रस्तुत होते हैं, जो प्रेम को खुले पन से स्वीकार करते हैं और देह का संगीत सुनते हैं।
4. 'जंगल का दर्द' की वैचारिक संवेदना लघु मानव से लेकर विश्वकल्याण की समस्याओं तक को साथ लेकर चलती है।
5. 'जंगल का दर्द' में कवि कलुषित समाज, भ्रष्ट राजनीति, शिथिल प्रशासन, जीवन व्यापी जड़ता और निष्क्रियता आदि से मुक्ति के लिए चेतना के जागरण का आह्वान करता है।
6. 'जंगल का दर्द' में कवि ने प्रतिरोध और संघर्ष को व्यक्त करते हुए, सत्ता के भेड़ियों को भगाने के लिए इतिहास के जंगल में चेतना की मशाल जलाने की गुहार लगाई है।
7. 'जंगल का दर्द' को व्यंग्य,आक्रोश और आक्रामकता को सहज बोलचाल की भाषा और पशुलोक के अत्यंत प्रभावी बिंबों के माध्यम से अभिव्यक्त करने में अत्यंत सफल कहा जा सकता है।

12.6 शब्द संपदा

1. अमूर्त = जो मूर्त या साकार न हो, निराकार
2. अस्मिता = पहचान
3. आपाधापी = अपना स्वार्थ
4. पाखंड = आडंबर, ढकोसला
5. मदांध = जो मद के कारण अंधा अर्थात विवेकहीन हो रहा हो

12.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के जीवन पर प्रकाश डालिए।
2. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के कृतित्व पर एक लेख लिखिए।
3. आधुनिक हिन्दी काव्य में सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के योगदान को स्पष्ट कीजिए।
4. 'जंगल का दर्द' संग्रह समकालीन राजनीतिक, सामाजिक एवं प्रशासनिक स्थितियों यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है- स्पष्ट कीजिए।
5. 'जंगल का दर्द' संग्रह में अभिव्यक्त भाव-पक्ष को स्पष्ट कीजिए।

6. 'जंगल का दर्द' संग्रह अभिव्यंजित कला-पक्ष को स्पष्ट कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'जंगल का दर्द' संग्रह में व्यक्त प्रणय-भाव को स्पष्ट कीजिए।
2. 'जंगल का दर्द' संग्रह में अभिव्यक्त वैचारिक संवेदना को स्पष्ट कीजिए।
3. 'जंगल का दर्द' संग्रह में अभिव्यक्त प्रतिरोध और संघर्ष को स्पष्ट कीजिए।
4. 'जंगल का दर्द' संग्रह में अभिव्यक्त व्यंग्य बोध को स्पष्ट कीजिए।
5. 'जंगल का दर्द' संग्रह में अभिव्यक्त बिंब और प्रतीकों को स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की पहचान साहित्य जगत को किस सप्तक से हुई? ( )
   (अ) तार सप्तक (आ) दूसरा सप्तक (इ) तीसरा सप्तक (ई) चौथा सप्तक
2. 'जंगल का दर्द' काव्य-संग्रह का कब प्रकाशित हुआ? ( )
   (अ) 1975 (आ) 1976 (इ) 1977 (ई) 1978
3. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना पर किस विचारधारा का प्रभाव दिखाई देता है? ( )
   (अ) मार्क्सवाद (आ) गांधीवाद (इ) लोहियावाद (ई) विकासवाद
4. सर्वेश्वर को 'विद्रोही कवि' किसने कहा? ( )
   (अ) कृष्णदत्त पालीवाल (आ) डॉ. जगदीश गुप्त (इ) नरेंद्र सिंह ठाकुर (ई) अज्ञेय

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का जन्म सन ..... ई. को हुआ।
2. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की ..... कृति के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया।
3. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना की 'भेड़िया' कविता..... काव्य संग्रह में संकलित है।

4. ..... को काव्य-भाषा की तीसरी आँख माना जाता है।

5. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना ने ..... पत्रिका का संपादन किया था।

III. सुमेल कीजिए -

1. 'तीसरा सप्तक' का संपादन	(अ) उपन्यास
2. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना का पहला काव्य-संग्रह	(आ) अज्ञेय
3. बकरी	(इ) काठ की घंटियाँ
4. पागल कुत्तों का मसीहा	(ई) नाटक

12.8 पठनीय पुस्तकें

1. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना और उनका काव्य : नरेंद्र सिंह ठाकुर
2. सर्वेश्वर और उनकी कविता : कृष्णदत्त पालीवाल
3. समकालीन कविता का व्याकरण : परमानंद श्रीवास्तव
4. सर्वेश्वर का काव्य : संवेदना और संप्रेषण : डॉ. हरिचरण शर्मा

इकाई 13 : धूमिल : एक परिचय

रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 उद्देश्य
13.3 मूल पाठ : धूमिल : एक परिचय
13.3.1 सुदामा पाण्डे 'धूमिल' : जीवन परिचय
13.3.2 धूमिल की साहित्यिक यात्रा
13.3.3 धूमिल की रचनाओं की विशेषताएं
13.3.4 धूमिल की भाषा शैली
13.4 पाठ सार
13.5 पाठ की उपलब्धियाँ
13.6 शब्द संपदा
13.7 परीक्षार्थ प्रश्न
13.8 पठनीय पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रो! आप जानते हैं कि 1970 से आरम्भ होने वाले दशक में हिंदी कविता ने राजनैतिक विषयों पर अत्यंत मुखर हो कर टिप्पणी करना आरंभ किया। 1960 से जो मोह भंग आरम्भ हुआ था, वह यहाँ तक आते आते प्रभुद्द राजनीतिक चेतना में बदल गया। इस अवधि के रचना करों में सुदामा पाण्डेय धूमिल नाम अत्यंत महत्वपूर्ण है इस इकाई में आप उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करेंगे।

13.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत आप -

- धूमिल के जीवन और व्यक्तित्व के बारे में जान सकेंगे।
- धूमिल की रचना यात्रा के विकास से परिचित हो सकेंगे।
- धूमिल की काव्य की विशेषताओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- धूमिल की रचनाओं में निहित आक्रोश और व्यंग्य से अवगत हो सकेंगे।
- धूमिल की भाषा-शैली के वैशिष्ट्यता को समझ सकेंगे।

13.3 मूल पाठ : धूमिल : एक परिचय

13.3.1 सुदामा पाण्डे 'धूमिल' : जीवन परिचय

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि धूमिल का जन्म 9 नवंबर 1936 ई. को उत्तर प्रदेश के बनारस जिले के खेवली नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता शिवनायक पाण्डे एक मुनीम थे और इनकी

माता रजवंती देवी घर-बार संभालती थी। जब धूमिल केवल 11 वर्ष के थे उसी समय उनके पिता का देहांत हो गया था जिस कारण से वे बहुत अधिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकें। 1953 में जब उन्होंने मैट्रिक परीक्षा पास की तब ऐसा करनेवाले वे अपने गाँव के पहले व्यक्ति थे। धूमिल का विवाह 12 वर्ष की आयु में मूरत देवी के साथ हुआ। इनका जीवन संघर्षमय रहा जो भी शिक्षा उन्होंने प्राप्त की वह जीवन के अनुभव और अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा। रोजगार की तलाश में धूमिल कलकत्ता भी गये लेकिन उन्हे वहाँ कोई ढंग का काम नहीं मिला तो उन्होनें लोहा ढोने का काम भी किया। यही कारण था कि धूमिल को मजदूरों की जीवन का ज्ञान बहुत अधिक था। उनके मित्र तारकनाथ पाण्डे ने लकड़ी की कंपनी में उनकी नौकरी दिलवा दी। वहाँ वे लगभग डेढ़ वर्ष तक एक अधिकारी के रूप में काम करते रहे। इसी बीच उनका स्वास्थ्य खराब होने के कारण उन्हें घर आना पड़ा। मालिक चाहते थे कि वे गौहाटी जाकर काम को संभालें लेकिन धूमिल ने अपने अस्वस्थ्य होने की बात कहकर वहाँ जाने से मना कर दिया। ऐसा करने पर जब मालिक ने उन्हें कहा, “I am paying for my work, not for your health.” तब धूमिल का स्वाभिमान जाग उठा और उन्होंने रुपए 450 की नौकरी, अलग से मिलने वाला कमीशन, TA, DA, आदि की लालसा जी जगह अपने स्वाभिमान को जगह दिया और नौकरी छोड़ दी। इसके बाद 1957 में धूमिल ने काशी विश्वविद्यालय के औद्योगिक संस्थान में प्रवेश लिया और सन् 1958 में आई. टी. आई. (वाराणसी) से विद्युत डिप्लोमा लेकर वे वही विद्युत अनुदेशक बन गये। फिर यहीं नौकरी व पदोन्नति पाकर वे बलिया, सहारनपुर और बनारस में भी कार्यरत रहें। लेकिन बनारस के साथ उनका एक अलग ही संबंध था। सन् 1974 में जब वे सीतापुर में कार्यरत थे तब वे अस्वस्थ हो गये। अपनी स्पष्टवादिता के कारण उन्हें उच्चधिकारियों का क्रोध भी सहना पड़ा। उच्चधिकारी अपना दबाव बनाए रखने के लिए किसी न किसी ढंग से धूमिल को उत्पीड़ित करते रहते थे। इस कारण से धूमिल का मानसिक तनाव बढ़ता गया। अक्तूबर, 1974 को असहनीय सरदर्द के कारण धूमिल को काशी विश्वविद्यालय के मेडिकल कॉलेज में भर्ती करवाया गया। तब पता चला उन्हें ब्रैन ट्यूमर है। नवंबर 1974 को उन्हें लखनऊ के किंग जॉर्ज मेडिकल कॉलेज में भर्ती करवाया गया। यहाँ उनके मस्तिष्क का ऑपरेशन भी किया गया लेकिन उसके बाद वे कोमा में चलें गये और बेहोशी की अवस्था में ही 10 फरवरी 1975 में उनकी मृत्यु हो गई।

बोध प्रश्न

- धूमिल के पिता का नाम क्या था?
- धूमिल की माता का नाम क्या था?
- धूमिल की पत्नी का नाम क्या था?
- धूमिल ने कब काशी विश्वविद्यालय के औद्योगिक संस्थान में प्रवेश लिया?

13.3.2 धूमिल की साहित्यिक यात्रा

किसी भी रचनाकार के लिए उसकी सर्जना का प्रथम बिन्दु महत्वपूर्ण हुआ करता है। साहित्यकारों ने जब-जब अपने रचनाकाल के इस प्रारम्भिक लम्हों को याद किया है तब-तब

उन्होंने अपनी सम्पूर्ण काव्य-चेतना के उद्गम की तलाश भी यही से की है। धूमिल को यह अवसर नहीं मिला कि वे अपने जीवन काल में एक प्रतिष्ठित कवि की रूप में अपने पाठकों के साथ अपनी इन अनुभूतियों को बाँट सके। फिर भी विभिन्न प्रकार के स्रोतों से उनके काव्य रचना के प्ररम्भिक समय का ज्ञान प्राप्त होता है। "कल सुनना मुझे" संकलन की प्रस्तावना में राजशेखर ने लिखा है कि, "11 वर्ष की अल्पायु में मिडिल पास करने के बाद वरुणा के तट पर बैठकर अपने सहपाठी मित्र बनारसी लला श्रीवास्तव के साथ कविता की जुगल बंदी करने लगा था"। वे आगे यह भी लिखते है कि,"तुकबन्दियाँ तो वे सातवीं कक्षा में थे तभी से करने लगे थे, वैसे उनकी एक पांडुलिपि 1957-58 की मिली है जिसमें गीत, बिरहा, दोहा, शेर आदि रचनाओं के अलावा कहानियाँ एवं निबंध भी है और तभी से लेखन का अबाध सिलसिला चलता रहा"। इस प्रकार उनके रचनारंभ की तिथि सन् 1951 है। धूमिल जिस समय बनारस में रह रहे थे उस समय अस्सी साहित्यकारों तथा साहित्य प्रेमियों का स्थान हुआ करता था। नामवर सिंह, ठाकुर प्रसाद सिंह, केदारनाथ सिंह आदि अनेक लोग यहाँ प्रायः रोज आते थे। इन सब के साथ मिलकर धूमिल को नई कविता को जानने समझने का बहुत अच्छा अवसर मिला। सन् 1962 तक धूमिल अपने काव्य दिशा का निर्धारण नहीं कर पाए थे। एक तरफ तो वे गीत लिख रहे थे तो दूसरी तरफ वैज्ञानिक कविता की संभावना को भी टटोल रहे थे। उसी समय नामवर सिंह के साथ उन्हे संही बिताने का सुअवसर मिला। नामवर सिंह की सलाह ने जहाँ एक ओर उनकी कविता को मजबूत धरातल प्रदान किया वही दूसरी ओर शिल्प एवं विम्ब योजना में वे काफी सजग होते गये। 1962 में भारत-चीन संघर्ष के समय युद्ध संबंधित कविताएँ लिखी जाने लगी। धूमिल ने भी मजमून पर अनेक रचनाएं की, जिनका उपयोग बाद में 'पटकथा' कविता में किया -

"और तभी सुलघ उठा पश्चिमी सीमांत
.... ध्वस्त .... ध्वस्त .... ध्वांत ... ध्वांत"।

धूमिल की इस पंक्ति को ज्ञानोदय में नामवर सिंह ने उद्धृत किया था। इस घटना से धूमिल में आत्मविश्वास बढ़ा और साथ ही उनकी चर्चा भी होने लगी। सन् 1964 के दौरान वे काफी दिनों तक इस बात की वकालत करते रहें कि कविता का खास विषय होना चाहिए। इसी दौर में उन्होंने "मोचीराम" की रचना की। 1966-67 के आसपास वे कभी-कभी कंचन कुमार की पत्रिका "आमुख" में भी प्रकाशित होते रहे। 1964-65 की कविताओं में उन्होंने तुकबंदी पर विशेष जोर दिया क्योंकि कविता पर चर्चाओं के क्रम में डॉ. नामवर सिंह ने उनसे कहा था, "कविता में तथ्य का महत्व तो निर्विवाद है किन्तु तुकबंदी के कारण पंक्तियाँ तेज धार की तरह असर करेंगी"। इसके बाद धूमिल ने तुकबंदी पर काफी ध्यान दिया और अच्छी रचनाएं प्रस्तुत की। इन्ही दिनों वे अपनी कविताओं के द्वारा आम लोगों की समस्याओं से जुडने का प्रयास करने लगे। उनमे राजनीतिक जागरूकता भी काफी बढ़ गई थी। एक विधा के रूप में कविता पर अटूट आस्था होने पर भी वे कहते थे -

"कविता में जाने से पहले मैं
आपसे ही पूछता हूँ
जब इससे न चोली बन सकती है

न चौंगा
तब आपै कहो
इस ससुरी कविता को
जंगल से जनता तक
धोने से क्या होगा?"

इस प्रकार हम देखते है कि धूमिल गीतों से जल्दी ही सार्थक कविता की ओर उन्मुख हो गये थे। वास्तव में विभिन्न काव्यान्दोलनों को चुनौती देते हुए धूमिल ने अपना एक अलग व्यक्तित्व सदैव बनाया रखा। "बाँसुरी जल गई" इनके फुटकर व शुरुआती गीतों का संग्रह है जो आज उपलब्ध नहीं है। उनकी दो कहानियाँ - 'फिर भी वह जिंदा है' और 'कुसुम दीदी' का प्रकाशन उनकी मृत्यु के बाद सन् 1984 में हुआ। अब तक धूमिल के चार काव्य संग्रह प्रकाशित हो चूके हैं जिनमें सम्मिलित हैं -

1. संसद से सड़क तक (इसका प्रकाशन स्वयं धूमिल ने किया था)
2. कल सुनना मुझे (संपादन - राजशेखर)
3. धूमिल की कविताएं (संपादन - डॉ. शुकदेव)
4. सुदामा पाण्डे का पराजातंत्र (संपादन - रत्नशंकर, रत्नशंकर धूमिल के पुत्र हैं)

इन सब में से "संसद से सड़क तक" नाक कविता उनकी प्रसिद्धि का सबसे बड़ा कारण है। सन् 1960 के बाद हिन्दी कविता में जिस मोहभंग की शुरुआत हुई थी, धूमिल उसकी अभिव्यक्ति करनेवाले अत्यंत प्रभावशाली कवि हैं। उनकी कविता में परम्परा, सभ्यता, सुरुचि, शालीनता आदि की विरोध है। क्योंकि इन सब की आड़ में जो हृदय पालता है उसे धूमिल पहचानते थे। धूमिल अपनी कविता के माध्यम से एक ऐसी काव्य भाषा विकसित करतें हैं जो नई कविता की दौर की काव्य-भाषा की रूमानियत, अतिशय कल्पनाशीलता और जटिल बिंबधर्मिता से मुक्त है। उनकी भाषा काव्य-सत्य को जीवन सत्य के अधिकाधिक निकट लाती है।

बोध प्रश्न

- कल सुनना मुझे का संपादन किसने किया?
- धूमिल ने किस रचना का संपादन स्वयम किया?
- रत्नशंकर कौन है?

13.3.3 धूमिल की रचनाओं की विशेषताएं

सन् 1960 के बाद हिन्दी कविता के क्षेत्र में अपनी तल्ख आवाज और नए मुहावरे के साथ जो कवि धूमकेतु की तरह उभरा उसका नाम था धूमिल समकालीन कविता के स्वरूप की पहचान मुक्तिबोध की रचनाओं के माध्यम से की जा सकती है। धूमिल अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं से सीधे मुठभेड़ करते है और अपने आक्रोश एवं विद्रोह को व्यंग्यात्मक लहजे में उद्वेलित करनेवाली पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त करते है। वे

कविता के माध्यम से जीवन को उसके नग्न यथार्थ के साथ प्रत्यक्ष रूप में देखने का दुःसाहस करते है। अशोक वाजपेयी ने धूमिल के संबंध में कहा है। "धूमिल का काव्य संसार अकवियों की तरह कल्पना-विलास से रचाया गया है। ऐसा संदर्भच्युत लोक नहीं है जिसका हमारे रोजमर्रा के जीने से संगति और जीवित प्रासंगिकता स्पष्ट ना हो और जिसमे कोई गहरी पहचान या खोज तो न उभरती हो लेकिन कवि के आत्मप्रदर्शन और आत्मस्फीति के लिए अवकाश खूब हो। धूमिल की दुनिया जितनी ठोस है, उतनी ही ठेठ और बेबाक भी। अपनी श्रेष्ठ उपलब्धि में वह समकालीन सच्चाई पर कोई मद्धिम रोशनी डालकर संतुष्ट नहीं हो जाती है, बल्कि निर्भीकता और विश्वास से सच्चाई को उभार देती है।"

धूमिल अपनी परिवेश और जटिल परिस्थितियों के प्रति अत्यंत सक्रिय हैं। वे कविता के शाश्वत मूल्यों की तलाश करते है। वे भाषा, मुहावरों और उक्तियों की सीमाओं से टकराते नजर आते है ताकि कुछ नया दे सकें। इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है की उन्होंने अपने दौर की कविता को भीड़ से निकाल जनतान्त्रिक बनाया उसका रुख ही बदल दिया।

परम्परा का विरोध नव सृजन हेतु : धूमिल ने समकालीन संदर्भ में कविता को पुनः परिभाषित किया था। वे कहते हैं कविता घेराओं में किसी बौखलाये हुए आदमी का संक्षिप्त एकालाप है, कविता का पाठ आज की विषम परिस्थितियों के तेज बदलावों के साथ बदलता तो है लेकिन अंततः प्रभावहीन हो जाता है, उसकी धार कुंठित हो जाती है। उन्होंने कहा- "है हर लड़की गर्भपात के बाद धर्मशाला हो जाती है और कविता हर तीसरे पाठ के बाद"। भाषा में भदेस होने के बावजूद महाकवि तुलसीदास ने राम कथा को अपने समय के अनुकूल नए मूल्यबोध से संपृक्त किया। जब भी कोई कवि विचार और भाषा की परम्परा को तोड़ कर नए सृजन की ओर उन्मुख होता है तो उसकी हँसी उड़ाई जाती है। कवि धूमिल इस मानसिकता की ओर संकेत करते हुए कहते है -

कवि - यानि - भाषा में भेदस हूँ।
इस कदर कायर कि उत्तर प्रदेश हूँ।

कवि प्रतिरोध करने के लिए अकेले ही खड़ा होता है क्योंकि कविता भाषा में आदमी होने होने की तमीज़ है, शब्दों की अदालत में मुजरिम के कटघरे में खड़े बेकसूर आदमी का इलफनामा है। धूमिल सच को उभरनेवाली कविता को बाखूबी समझते हैं।

राजनैतिक विमर्श : भारत ने अनेक बलिदानों और संघर्षों के बाद स्वतंत्रता प्राप्त की लेकिन स्वतंत्रता के 15-16 वर्ष बाद भारतीय जनमानस को यह समझ आने लगा कि ऐसी स्वतंत्रता का सपना उन्होंने नहीं देखा था। राजनीति में भाई-भतीजावाद, परिवार वाद और भ्रष्टाचार बढ़ने के साथ-साथ सामान्य जन के मस्तिष्क में जो आर्थिक खुशहाली, सुखमय जीवन एवं अपनी महत्ता को स्थापित करने के सपने पल रहे थे वे टूटने लगे थे। कविता में अपनी विशिष्ट पहचान बनाने की चेष्टा से नए नए काव्यान्दोलन तो खरे हुए किन्तु उनमें भारी आक्रोश और प्रजातन्त्र की त्रुटियों को लेकर विद्रोह का भाव जाग रहा था। अपने परिवेश की प्रति

अत्यधिक संसक्त और आम आदमी के विरुद्ध खड़ी ताकतों को बेनकाब करने का साहस सन् 1965 के बाद की कविताओं में विशेष रूप से दिखाई पड़ता है। धूमिल ऐसे रचनाकार है जिन्होंने दिनकर की तरह यह प्रार्थना नहीं किया है कि सिंहासन खाली करो कि जनता आती है बल्कि जनता की ओर से चुने गये सांसदों से निर्मित संसद को अपने शब्दों के नुकीले हथियार से आहत करते हैं। प्रजातन्त्र पर धारदार कविताएं लिखने की अगुवाई धूमिल ने की। झंडे को ही प्रतीक बनाकर धूमिल सवाल करते हैं -

"क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है
जिन्हें एक पहिया होता है
या इसका कोई खास मतलब होता है?"

भारत की जनता अपनी विवशताओं को लेकर जीने के लिए अभिशप्त है, प्रजातन्त्र में कुछ लोग मालामाल हो रहें है और कुछ ऐसे हैं जो भूख से बहाल हैं। "अकाल दर्शन" कविता में धूमिल ने कहा है आजादी और गांधी के नाम पर जो मुहावरे उछाले जा रहे हैं, उसे न तो जनता की भूख मिट रही है और न मौसम बदल रहा है। धूमिल ऐसी राजनैतिक भ्रष्टाचार से भरी प्रजातान्त्रिक व्यवस्था पर व्यंग करते हुए लिखते हैं -

"मैं उन्हें समझाता हूँ -
वह कौन-सा प्रजातान्त्रिक नुस्खा है
कि जिस उम्र में
मेरी माँ का चेहरा
झुर्रियों की झोली बन गया है
उसी उम्र की मेरे पड़ोस की महिला के चेहरे पर
मेरी प्रेमिका के चेहरे-सा
लोच है।"

धूमिल लोकतंत्र को "मदारी की भाषा" कहते हैं। वे कहते हैं -

"अपने यहाँ जनतंत्र
एक ऐसा तमाशा है
जिसकी जान मदारी की भाषा है"

नेता जनता के मसले पर गोलमोल जवाब देते है। मसले को सुलझाने के बजाय वे उसे और उलझ देते है लेकिन फिर भी जनता उन्हीं नेताओं को बार-बार चुनने के लिए मजबूर है।

क्रांति का स्वर : धूमिल ने जब साठोत्तरी कविता के अंतर्गत काव्य रचना करना शुरू किया तब उन्होंने केवल जलते भारत के जलते यथार्थ को ही नहीं देखा बल्कि समाज और राजनीति के कुरूप चित्र को भी बहुत पास से देखा। उन्होंने अनुभव किया कि कविता को माध्यम बनाकर केवल बड़ी-बड़ी बातें की जा रही है। कविता, जो कभी क्रांति का प्रमुख स्वर हुआ करती थी अब लाचार सी नारों, बहसबाजियों, बिभिन्न वादों के बीच फंस गई है। सबसे

पहले उन्होंने कविता को फिर से क्रांति के स्वर के साथ जोड़ने का प्रयास किया। इस संदर्भ में धूमिल की कविता "मुनासिब कारवाई" का उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है। कविता के संदर्भ में धूमिल लिखते हैं कि -

"कविता क्या है?
कोई पहनावा है?
कुर्ता-पजामा है?
ना, भाई, ना
कविता -
शब्दों की अदालत में
मुजरिम के कटघरे में खरे बेकसूर आदमी का
हलफ़नामा है।"

धूमिल ने केवल कविता लिखने के लिए, कविता नहीं लिखी। धूमिल के लिए कविता एक मकसद है, एक प्रयोजन है, एक हथियार है। धूमिल के लिए कविता केवल बौखलाहट, बड़बड़ाहट, आक्रोश, आवेश, उत्तेजना और उद्‌न्डता ही नहीं है बल्कि उनके लिए कविता, भाषा में आदमी होने की तमीज़ है। "मुनासिफ़ कारवाई" कविता की आगे की पंक्तियों को देखना बहुत आवश्यक है। जहाँ धूमिल ने लिखा है -

"क्या यह व्यक्तित्व बनाने की -
चरित्र चमकाने की-
खाने-पकाने की-
चीज है?
ना, भाई, ना,
कविता -
भाषा में
आदमी होने की तमीज है।"

धूमिल कविता को क्रांति का स्वर मानते थे साथ ही यह भी जानते थे कि कविता की उम्र छोटी होती है। कविता की उम्र मात्र उतनी ही है जितनी कि कसाई के ठीहे और तनी हुई गड़ास के बीच बोटी सुरक्षित है। असली अपराधी का नाम लेते ही कविता की मृत्यु निश्चित है। जनतंत्र में यद्यपि अकेले आदमी की कोई आवाज नहीं होती लेकिन फिर भी कविता की शक्ति को लेकर धूमिल जैसा कवि जनतंत्र की सुरक्षा के लिए षड़यंत्रकारियों के विरुद्ध खड़ा होता है। कविता को फिर से क्रांति का स्वर बनाने के मकसद से कवि चीत्कार के स्वर में कहता हैं -

"वक्त बहुत कम है
इसलिए कविता पर बहस
शुरू करो
और शहर को अपनी ओर झुका लो

क्यों की असली अपराधी का का
नाम लेने के लिए
कविता, सिर्फ उतनी ही देर तक सुरक्षित है
जितनी देर, कीमा होने से पहले
कसाई के ठीहे और तनी हुई गँडास के बीच
बोटी सुरक्षित है।"

धूमिल सच्चे अर्थों में जनता के कवि है। वे हर परिस्थिति में जनता के साथ खड़े दिखाई पड़ते है। जनता की भावनाओं के साथ क्रांति और कविता की संगति बिठाना ही उनका उद्देश्य रहा है। एक आत्मकथ्य में उन्होंने कहा हैं, "ईमानदार होने की अपेक्षा संगत होना मेरे लिए अधिक सहज है। आप वही चुनें जितना अपक लिए आवश्यक है। अपनी शर्म के नीचे अपमानित होने के लिए अपनों को छोड़कर भागना और सजा सुनते वक्त कानों को बंद कर लेना, बचने की सही तरकीब नहीं है।" (पुस्तक-वार्ता, द्वैमासिक पत्रिका, अंक 55, वर्ष-2014, पृ. 13)। धूमिल अपनी देश की जनता के साथ न केवल खड़े दिखाई पड़ते है बल्कि झकझोर देनेवाली भाषा में मार्मिक सच्चाई को कहने लगते है। धूमिल ने लिखा है -
"सुनो!
आज मैं तुम्हें वह सत्य बतलाता हूँ
जिसके आगे हर सच्चाई
छोटी है।
इस दुनिया में भूखे आदमी का सबसे बड़ा तर्क
रोटी है।
मगर तुम्हारी भूख और भाषा में
यदि रोटी दूर नहीं है
तो अपने-आपको
आदमी मत कहो,
क्योंकि पशुता-
सिर्फ पूँछ होने की मजबूरी नहीं है।"

धूमिल ने यह रेखांकित किया कि भारत आजाद नहीं हुआ है, भारत में केवल सत्ता का हस्तांतरण हुआ है। यही कारण है कि आजादी से पहले जो बर्बरता और अमानवीयता विदेशी शशकों द्वारा की जाती थी वही आजादी के बाद अपनों के द्वारा किए जा रहें है। आजादी के सपने, वायदे, उम्मीद सब विफल हो गये है। धूमिल का समय बीत गया है लेकिन आज भी परिस्थिती वही है। "मोचीराम", धूमिल की इस दृष्टि से महत्वपूर्ण कविता है। "मोचीराम" कविता का नायक मोचीराम बड़े सरल और सहज स्वभाव से कहता है -
"बाबू जी! सच कहूँ - मेरी निगाह में,
न कोई छोटा है, न कोई बड़ा है,

मेरे लिए, हर आदमी एक जोड़ी जूता है,
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिए खड़ा है।"

बातों-बातों में ही मोचीराम जो बात कह जाता है वह जनतान्त्रिक व्यवस्था के भीतर हो रहे अत्याचार, उदासीनता और बीमार माहौल को सामने रख देने के लिए पर्याप्त है। इसी कारण से धूमिल आजाद भारत के हर तबके के बीच अपनी जगह बना लेने का साहस रखनेवाले सबसे कर्मठ कवि हैं।

व्यंग्य : केवल कविता लिख देने से, कविता को क्रांति की भाषा बना देने से ही भारत की समस्याओं का समाधान नहीं हो जाएगा। धूमिल इस बात से भी परिचित थे। जनता को भी तो अपने लिए आवाज उठानी चाहिए। हिंदुस्तानियों की चुप्पी पर धूमिल ने हमेशा व्यंग्य किया है। गरीबी, पीड़ा, अशिक्षा आदि केवल भारत की समस्या नहीं यह तो विश्व भर की समस्या रही है। समस्याओं पर लगातार बात करने से बेहतर समाधान खोजना आवश्यक है। धूमिल इस विचारधारा के समर्थक रहें। साधारण आदमी को दया करुणा की आवश्यकता क्यों है? क्या उसकी कोई अस्मिता नहीं है? धूमिल ने सपाट तरीके से कहा गाँव में गरीबी का मुख्य कारण आलस, कलह और तटस्थता है -

"मेरे गाँव में,
वही आलस्य, वही ऊब,
वही कलह, वही तटस्थता
हर जगह और हर रोज
और मैं कुछ नहीं कर सकता
मैं कुछ नहीं कर सकता।"

समकालीन कविता के स्वरूप की पहचान मुक्तिबोध की रचनाओं के माध्यम से की जा सकती है। धूमिल अपने समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं से सीधे मुठभेड़ करते हैं और अपने आक्रोश एवं विद्रोह को व्यंग्यात्मक लहजे में उद्वेलित करने वाली पंक्तियों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। वे कविता के माध्यम से जीवन को उसके नग्न यथार्थ के साथ प्रत्यक्ष करने का दुःसाहस करते हैं। आधुनिक कविता में भारतेन्दु हरिश्चंद्र को छोड़ दे तो धूमिल से पहले किसी भी कवि ने अपनी कविता में इतनी भयानक कुरूप और विद्रुप परिस्थितियों और चरित्रों को शायद ही जगह दी हो। कवि ने लिखा है -

"दीवारों से चिपके गोली के छर्रों
और सड़कों पर बिखरे जूतों की भाषा में
एक दुर्घटना लिखी गई है
हवा से फड़फड़ाते हुए हिंदुस्तान के नक्शे पर
गाय ने गोबर कर दिया।"

धूमिल ने बेबाक तरीके से कहा कविता चाहे किसी भी काल की हो तब तक बेअसर ही रहेगी जब तक जनता कविता के साथ अपनी आवाज को नहीं मिलाएगी। साठोत्तरी कविता का मकसद क्या है या क्या होना चाहिए इस पर हिंदी आलोचना और उसके आलोचकों ने बहुत बातें की लेकिन इन सबसे बेअसर धूमिल वही करते रहें जो उन्हें करना था। कविता का मकसद पर चल रही माथापच्ची के बीच धूमिल ने लिखा -

"इस ससुरी कविता को
जंगले से जनता तक
ढोने से क्या होगा?
आपै जवाब दो
मैं इसका क्या करूँ?
तितली के पंखों में पटाखा बांधकर
भाषा के हल्के में
कौन सा गुल खिला दूँ?"

धूमिल ने बड़ी-बड़ी बातें नहीं की लेकिन उन्होंने अपनी सीधी सपाट भाषा के द्वारा जनता को बार-बार आगाह किया। प्रकृति के साथ पूरी तरह से घुले-मिले किसान को उन्होंने बार-बार समझाया कि किसानों को हर किसी के बात का समर्थन नहीं करना चाहिए। उन्हें सबसे पहले यह समझना होगा कि कोई उनका हित क्यों सोच रहा है? "प्रौढ़ शिक्षा" शीर्षक कविता में जनशक्ति की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए धूमिल ने कहा है किसान जो सही अर्थों में पृथ्वीपुत्र है, अन्नदाता है उसे सबसे पहले शिक्षित होना होगा तभी वह अपने भले-बुरे को समझ सकेगा उसका निरक्षर रहना शर्मनाक है। धूमिल ने लिखा -

"कल मैंने कहा था कि वह दुनिया
जिसे ढकने के लिए तुम नंगे हो रहे थे
उसी दिन उधर गई थी
जिस दिन हर भाषा
तुम्हारे अंगूठा - निशान की स्याही में डूबकर मर गई थी"

धूमिल ने किसानों को ललकारते हुए कहा -

"तनो
अकड़ो
अमरबेलि की तरह मत जियो
जड़ पकड़ो
बदलो - अपने - आपको बदलो
यह दुनिया बदल रही है
और यह रात है, सिर्फ रात
इसका स्वागत करो

यह तुम्हें
शब्दों के नए परिचय की ओर चल रही है”

केवल किसानों के लिए ही नहीं धूमिल ने देश में फैले बेरोजगारी के ऊपर व्यंग्य करते हुए भी कविताओं की रचना की। बेकारी का शिकार नौजवान अपनी खस्ता हालत में अपने देश के बारे में क्या सोचता है यह जानने के लिए धूमिल को पढ़ना आवश्यक है। उन्होंने रोजगार दफ्तर से गुजरते हुए नौजवानों को अपने कानों से यह कहता हुए सुना था -
“इस देश की मिट्टी में
अपने जांगर का सुख तलाशना
अंधी लड़की की आँखों में
उससे सहवास का सुख तलाशना है”

धूमिल ने सामाजिक एवं राजनीतिक अव्यवस्था के कारण व्यक्ति को तनावग्रस्त होते हुए देखा था। यह उनका अपना भी अनुभव था तभी तो उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा उनके बारे में बात करना हमारी आदत बन गई है। ‘हत्यारे एक’ शीर्षक कविता के अंत में लिखा है -
“वे तुम्हारे सामने एक आईना रखते हैं और
तुम ग़ुर्राने लगते हो
अपने खिलाफ! एक बेगानी आवाज बनकर
और अब तो चुनाव हो रहा है
वे तुम्हारी कटी हुई जेबों के नाम पर
अपना पर्चा दाखिल करने वाले हैं
अगले मतदान में”

भाषा आंदोलन : सम्पूर्ण उत्तरी भारत में विशेषकर उत्तर प्रदेश में सन् 1967 में भाषा आंदोलन हुआ। कम्युनिस्ट दलों को छोड़कर सभी ने उसका समर्थन किया था। धूमिल ने अपनी कविता “भाषा की रात” में लिखा -
“चंद चालाक लोगों ने बहस के लिए
भूख की जगह
भाषा को रख दिया है”

उनकी समझ में “यह भाषा की रात है” यहाँ चीज़े आगे बढ़ने के बजाय पीछे हट रह है। वे देखते है कि -
“बिना किसी क्षोभ के
उसने अपने तख्यितयों के अक्षर
बदल दिए हैं
क्योंकि बनिया की भाषा तो सहमति की भाषा है”

धूमिल अपनी विचारधारा में बहते हुए इस नतीजे पर पहुँचते है कि भाषा को ठीक करने से पहले आदमी को ठीक करना जरूरी है। उन्होंने लिखा -

"भाषा उस तिकड़मी दरिंदे का कौर है
जो सड़क पर और है
संसद में और है
इसलिए बाहर आ!
सड़क के अंधेरे से निकलकर सड़क पर आ!
भाषा को ठीक करने से पहले आदमी को ठीक कर
आ आने चौदहों मूर्खों से
बोलता हुआ आ"

इस प्रकार हम पाते है कि धूमिल को किसी परंपरा का गुलाम बनना पसंद नहीं था। उनके लिए कविता एक प्रयोजन, एक उपकरण रही जिसका उपयोग वे हर प्रकार की गलती से लड़ने के लिए करते थे।

बोध प्रश्न

- भाषा आंदोलन उत्तर प्रदेश में कब हुआ?
- धूमिल के लिए कविता क्या थी?

भाषा शैली : धूमिल काव्य परिस्थितियों एवं संवेदनाओं के प्रतिकूल भाषा गढ़ने में माहिर थे। शब्दों का चयन करते समय वे श्लील और अश्लील का ध्यान नहीं रखते थे। उनकी भाषा ऐसी गँवार औरत की भाषा है जो गुस्से में आकर गलियों का मुहावरा या मुहावरेदार गालियां बकने लगती है। धूमिल में भाषा का वह रूप नहीं मिलता जिसमें आदमी का एकालाप है बल्कि उनकी भाषा हर स्थिति में संलाप करती हुई भावात्मक और बौद्धिक उत्तेजना पैदा करती दिखाई पड़ती है। उन्होंने लोक भाषा के तिरस्कृत उपेक्षित शब्दों की क्षमता को पहचाना और भाषा के आम बोलचाल के मुहावरे में व्यंग्य का निर्माण किया। एक उदाहरण देखिए -

"अपने यहाँ संसद -
तेली की वहाँ घानी है
जिसमें आधा तेल है
और आधा पानी है
और यदि यह बचा नहीं है
तो वहाँ एक ईमानदार आदमी को
अपनी ईमानदारी का
मलाल क्यों है?
जिसने सत्य कह दिया है
उसका बुरा हाल क्यों है?"

धूमिल बोलचाल के शब्दों में भी नए अर्थों को लाना चाहते थे। आदमी की सादगी, सहनशीलता, मासूमियत आदि को वे अपनी कविताओं के द्वारा प्रेरणा प्रदान करना चाहते थे। वे परिवर्तन की इच्छा रखते थे। जिस कारण से नए विम्बो में ढली उत्तेजक भाषा का वे प्रयोग करते थे। जैसे -

"तुम्हारी आँखों के चकनाचूर आईनों में
वक्त की बदरंग छायाएं उलटी कर रही हैं
और तुम पेड़ों की छाल गिनकर
भविष्य का कार्यक्रम तैयार कर रहे हो
तुम एक ऐसी जिंदगी से गुजर रहे हो
जिसमें न कोई तुक है
न सुख है"

जिस तरह मुक्तिबोध फंतासी का प्रयोग करने में सिद्धहस्त रहें, उसी तरह धूमिल भाषा के भदेसपन में भी गंभीर सत्य को प्रत्यक्ष कर देने की कला में माहिर रहें। बढ़ती हुई जनसंख्या और बढ़ते हुए अपराध को कितनी कुशलता के साथ उन्होंने सांकेतिक भाषा में दर्शाया था-

"उस चालाक आदमी ने मेरी बात का उत्तर नहीं दिया
उसने गलियों और सड़कों और घरों में
बाढ़ की तरह फैले हुए बच्चों की ओर इशारा किया
और हँसने लगा"

धूमिल के दिमाग में जब जैसा विम्ब आता था वे उसका बेहिचक प्रयोग किया करते थे। "वसंत" कविता में आज की जिंदगी की परेशानियों को हम देख सकते है-

"बसंत
मेरे उत्साहित हाथों में एक
जरूरत है
जिसके संदर्भ में समझदार लोग
चीजों को
घटी हुई दरों में कूतते है
और कहते है
सौन्दर्य में स्वाद का मेल
जब नहीं मिलता
कुत्ते महुए के फूल पर
मूतते हैं"

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि व्यापक भावबोध में एवं नवीन रचना शिल्प के कारण 1970 के बाद उभरने वाले कवियों में 'धूमिल' क्रांतिकारी कवि के रूप में तो अपनी

पहचान बनाते ही हैं, काव्य कृतियों को नई दिशा देने की दृष्टि से भी ऐतिहासिक महत्व के अधिकारी बनते हैं।

बोध प्रश्न

- मुक्तिबोध की विशेषता क्या थी?
- धूमिल की भाषा कैसी थी?

13.4 पाठ सार

हिन्दी के प्रसिद्ध कवि धूमिल का जन्म 9 नवंबर 1936 ई. को उत्तर प्रदेश के बनारस जिले के खेवली नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता शिवनायक पाण्डे एक मुनीम थे और इनकी माता रजवंती देवी घर-बार संभालती थी। जब धूमिल केवल 11 वर्ष के थे उसी समय उनके पिता का देहांत हो गया था जिस कारण से वे बहुत अधिक शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकें। 1953 में जब उन्होंने मैट्रिक परीक्षा पास की तब ऐसा करनेवाले वे अपने गाँव के पहले व्यक्ति थे। धूमिल का विवाह 12 वर्ष की आयु में मूरत देवी के साथ हुआ। इनका जीवन संघर्षमय रहा जो भी शिक्षा उन्होंने प्राप्त की वह जीवन के अनुभव और अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा। रोजगार की तलाश में धूमिल कलकत्ता भी गये लेकिन उन्हे वहाँ कोई ढंग का काम नहीं मिला तो उन्होनें लोहा ढोने का काम भी किया। यही कारण था कि धूमिल को मजदूरों की जीवन का ज्ञान बहुत अधिक था। उनके मित्र तारकनाथ पाण्डे ने लकड़ी की कंपनी में उनकी नौकरी दिलवा दी। वहाँ वे लगभग डेढ़ वर्ष तक एक अधिकारी के रूप में काम करते रहे। इसी बीच उनका स्वास्थ्य खराब होने के कारण उन्हें घर आना पड़ा।

इसके बाद 1957 में धूमिल ने काशी विश्वविद्यालय के औद्योगिक संस्थान में प्रवेश लिया और सन् 1958 में आई. टी. आई. (वाराणसी) से विद्युत डिप्लोमा लेकर वे वही विद्युत अनुदेशक बन गये। फिर यहीं नौकरी व पदोन्नति पाकर वे बलिया, सहारनपुर और बनारस में भी कार्यरत रहें। लेकिन बनारस के साथ उनका एक अलग ही संबंध था। सन् 1974 में जब वे सीतापुर में कार्यरत थे तब वे अस्वस्थ हो गये। अपनी स्पष्टवादिता के कारण उन्हें उच्चधिकारियों का क्रोध भी सहना पड़ा। उच्चधिकारी अपना दबाव बनाए रखने के लिए किसी न किसी ढंग से धूमिल को उत्पीड़ित करते रहते थे। इस कारण से धूमिल का मानसिक तनाव बढ़ता गया। अक्तूबर, 1974 को असहनीय सरदर्द के कारण धूमिल को काशी विश्वविद्यालय के मेडिकल कॉलेज में भर्ती करवाया गया। तब पता चला उन्हें ब्रैन ट्यूमर है। नवंबर 1974 को उन्हें लखनऊ के किंग जॉर्ज मेडिकल कॉलेज में भर्ती करवाया गया। यहाँ उनके मस्तिष्क का ऑपरेशन भी किया गया लेकिन उसके बाद वे कोमा में चलें गये और बेहोशी की अवस्था में ही 10 फरवरी 1975 में उनकी मृत्यु हो गई।

धूमिल के चार काव्य संग्रह है - संसद से सड़क तक (इसका प्रकाशन स्वयं धूमिल ने किया था), कल सुनना मुझे (संपादन - राजशेखर), धूमिल की कविताएं (संपादन - डॉ. शुकदेव), सुदामा पाण्डे का पराजातंत्र (संपादन - रत्नशंकर, रत्नशंकर धूमिल के पुत्र हैं)

13.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. धूमिल सच्चे अर्थों में जनता के कवि है। वे हर परिस्थिति में जनता के साथ खड़े दिखाई पड़ते है।
2. जनता की भावनाओं के साथ क्रांति और कविता की संगति बिठाना ही धूमिल का उद्देश्य रहा है।
3. धूमिल अपने देश की जनता के साथ न केवल खड़े दिखाई पड़ते है बल्कि झकझोर देनेवाली भाषा में मार्मिक सच्चाई को कहने में महारत लगते है।
4. धूमिल ने लोक भाषा को अपना कर आम बोल चाल की भाषा में व्यग्य का निर्वाह किया।

13.6 शब्द संपदा

1. एकालाप = अकेले बात करना
2. तनावग्रस्त = Tensed
3. भावबोध = with feelings
4. महुए = एक वृक्ष का नाम
5. मासूमियत = innocence
6. संदर्भच्युत = without any reference

13.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. धूमिल के काव्य दर्शन की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
2. धूमिल के शिक्षा और व्यक्तित्व पर प्रकाश डालिए।
3. सठोत्तरी कविता में धूमिल एक प्रसिद्ध कवि थे- सिद्ध कीजिए।
4. धूमिल अपने समय के क्रांतिकारी कवि थे - सिद्ध कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. धूमिल के जन्म एवं पारिवारिक दशा पर प्रकाश डालिए।
2. धूमिल की काव्य भाषा पर प्रकाश डालिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. धूमिल किस नदी के पास बैठकर कविता रचा करते थे। ( )

(अ) वरुणा (आ) गंगा (इ) यमुना (ई) इनमे से कोई नहीं

2. धूमिल का जन्म किस सन् में हुआ? ( )

(अ) 1908 (आ) 1917 (इ) 1817 (ई) 1936

3. धूमिल की मृत्यु कब हुई थी? ( )

(अ) 1963 (आ) 1961 (इ) 1964 (ई) 1999

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए -

1. धूमिल सच्चे अर्थों में जनता के .....है।
2. धूमिल कविता को .....का स्वर मानते थे।
3. धूमिल के दिमाग में जब जैसा ..... आता था वे उसका प्रयोग किया करते थे।
4. धूमिल अपनी .....भाषा के द्वारा जनता को बार-बार आगाह करते थे।

III. सुमेल कीजिए -

1. मुक्तिबोध	(अ) धूमिल
2. 1972	(आ) फंतासी
3. खेवली गाँव	(इ) संसद से सड़क तक

13.8 पठनीय पुस्तकें

1. आधुनिक कवि : विश्वंभर 'मानव' तथा रामकिशोर शर्मा

इकाई 14 : संसद से सड़क तक (धूमिल) आलोचना

रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 उद्देश्य
14.3 मूल पाठ : संसद से सड़क तक (धूमिल) आलोचना
14.3.1 संसद से सड़क तक का परिचय
14.3.2 अध्येय संग्रह की कविताओं का आलोचनात्मक विवरण
14.4 पाठ सार
14.5 पाठ की उपलब्धियाँ
14.6 शब्द संपदा
14.7 परीक्षार्थ प्रश्न
14.8 पठनयी पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

धूमिल विद्रोही कविता के प्रतिनिधि कवि रहे। चुस्त, सूक्तिपरक, सूत्रबद्ध और व्यंग्यमय भाषा में आपने युवा जगत की आकांक्षाओं, आशाओं एवं संघर्ष की प्रस्तुती का माध्यम बनाया। आशातीत प्रजातंत्र की स्थापना न हो पाना और इसके कुसंचालकों की जनविरोधी नीतियों के कारण तत्कालीन युवा पीढ़ी के मनमस्तिष्क में घोर असंतोष, तीव्र घृणा तथा निरोशा आदि मनोवैज्ञानिक भावों का आधिक्य था। प्रस्तुत इकाई में आप उनके प्रसिद्ध कविता संग्रह 'संसद से सड़क तक' का समीक्षात्मक आध्यायन करेंगे। धूमिल साठोत्तरी कविता के प्रखर युगद्रष्टा, रचनाकार हैं। अपने समय की विद्रूपताओं में से उपजे असंतोष की झलक उनकी कविताओं में व्यंग्य-रूप में सर्वत्र परिलक्षित होती है। सामाजिक विसंगतियों के प्रति गहरा सरोकार रखने वाले कवि धूमिल का समूचा साहित्य वर्तमान से दो दो हाथ करता सा दिखायी देता है। धूमिल अपने समय के ही नहीं बल्कि हिंदी साहित्य जगत के एक महत्वपूर्ण जन कवि है। धूमिल के काव्य में अभिव्यक्ति जन जीवन किसी अन्य कवि के काव्य में नहीं दीखती है। ऐसा प्रतीत होता है कि जिस जन जीवन का उल्लेख उन्होंने अपनी कविता में किया है वह अनुभूत सत्य है। जिस आदमी की पीड़ा को वह अपनी कविता में वाणी देते रहे वह कोई और नहीं स्वयं धूमिल ही थे।

14.2 उद्देश्य

प्रिय छात्रो ! इस इकाई के अध्ययन से आप

- सुदामा पांडे धूमिल कृत 'संसद से सड़क तक' का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- 'संसद से सड़क तक' में शामिल कविताओं से परिचित हो सकेंगे।
- 'संसद से सड़क तक' संग्रह की कविताओं के प्रतिपाद्य से अवगत हो सकेंगे।
- इस कविता संग्रह की भाषा शैली की विशेषता को जान सकेंगे।

14.3 मूल पाठ : 'संसद से सड़क तक' (धूमिल) आलोचना

14.3.1 'संसद से सड़क' तक का परिचय

'संसद से सड़क तक' सुदामा पांडे धूमिल का प्रथम काव्य संग्रह है जिसका प्रकाशन सन् 1972 में हुआ। इसमें धूमिल द्वारा 1965 से 1970 के मध्य रचित कविताएं संग्रहित हैं। डॉ. शुकदेव सिंह के अनुसार ''जब उन्होंने संसद से सड़क तक' के संकलन-प्रकाशन की योजना बनाई तो उसमें सन् 1965 के बाद की ही रचनओं को प्रस्तुत किया और 1965 के पूर्व की अपनी बहुत सारी कविताएं उक्त संकलन के लिए उन्होंने खारिज कर दी थीं।" (डॉ.शुकदेव सिंह, धूमिल की कविताएं (अपने पिताके विषय में-रत्नाकर) पृ.सं.12) इस संग्रह में कुल 25 कविताएं हैं। इस संग्रह की कविताओं में बौद्धिकता, यथार्थ और वैचारिकता तीनों का बहुत ही सुगठित समायोजन प्राप्त होता है। व्यष्टि और समष्टि को तनावरहित स्थितियों में आरोपित कर संवेदनाओंकी वक्रता के अंतर्विरोध के स्वर का मुखरण इस संग्रह की कविताओं की प्रमुखता है।

पच्चीस कविताओं के इस संग्रह में लगभग सभी रचनाएं तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक परिदृश्य का भी गहराई से परिचय कराती हैं। इस संदर्भ में कवि की समूची राजनैतिक समझ प्रखरता से उभरती है क्योंकि उनकी कविताओं में देहात और शहर, कविकर्म और राजनीति, आस्था और अनास्था, सामाजिकता और असामाजिकता, अहिंसा-हिंसा, ईमानदारी और बेईमानी, जिजीविषा और निराशा आदि प्राय: सभी मानव जीवन से सभ्य-असभ्य अंगों का चित्रण हुआ है। ये सभी चित्रण ठोस सामाजिक यथार्थ के दुर्लभ दस्तावेज हैं। इन कविताओं को पढ़ते हुए ऐसा अनुभव होता है कि मानो कवि हाथ पकड़कर कह रहा है- लो, यह रहा तुम्हारा चेहरा, यह जुलूस के पीछे गिर पड़ा था। प्रस्तुत संग्रह में कुल पच्चीस कविताएं हैं।

बोध प्रश्न

- 'संसद से सड़क तक' में कुल कितनी कविताएँ संग्रहीत हैं?

14.3.2 अध्येय संग्रह की कविताओं का आलोचनात्मक विवरण

1. कविता

संवेदनहीनता में वृद्धि वर्तमान सामाजिकों का एक प्रमुख गुण बन चुकी है। किसी को भी किसी अन्य के सुख-दुख से कोई सरोकार नहीं है सब अपने आप में सिमटे हुए हैं। कहने को तो शोसल मीडिया पर लोगों के हजारों मित्र होते हैं परंतु उनके पड़ोस में कौन रहता है इसका पता नहीं। यह 'कविता' उनके नये अंदाज़, कविता के प्रति उनकी गहरी सोच को अभिव्यक्त करती है। इस कविता में कवि संवेदना और अभिव्यंजना के संकटों की पहचान करता है। शब्दों की खोती हुई ताकत के कारण कविता रचने का काम कठिन होता जा रहा है। भाषा और मनोभाव की जिस पवित्र आत्मीयता से कविता रची जाती है, वे संबंध-सूत्र जीवन से लगातार टूट रहे हैं।

कवि की दृष्टि में कविता की उत्पत्ति जिस मनःस्थिति में हुई थी और जिस सार्थक उद्देश्य से उसका सरोकार था, वह पूरी तरह उससे कट गई है।

"उसे मालूम है कि कविता
घेराव में
किसी बौखलाये हुए आदमी का
संक्षिप्त एकालाप है।"

उपर्युक्त पंक्तियां कवि के दायित्वबोध के रेखांकन के साथ-साथ समकालीन परिवेश और जन संबंध को परिभाषित करती हैं। जन सामान्य में रहने के वाला व्यक्ति नितांत अकेला है।

2. एक आदमी

इस आत्मकथात्मक कविता में बाह्य जगत के प्रतिरूप में आंतरिक भावनाओं के साथ-साथ व्यक्ित के अस्ितत्वबोध का अनुभव करते हुए स्व की परिभाषा करते हुए अस्िमताबोध की छटपटाहट देखने को मिलती है। अस्ितत्वबोध की भावना कवि के कवि कर्म का मूल है। रात्रि का अंधकार, दिन के उजाले के स्वतंत्र अस्तित्व और प्रकृतियुक्त चीजों को समेट लेता है। इस अंधकार में ज्ञान द्वार को खोलने वाला एक मात्र सूत्र दरवाजे में लगी हुई चिटकनी भी खो जाती है। व्यक्ित की समस्त आशाएं तथा आकांक्षाएं धूमिल हो जाती हैं। कवि का अंतर्मन इस अंधकार से बोध प्राप्त करता है कि स्वयं के अस्ितत्व का अन्वेषण ही वास्तविक जीवन मूल्य है।

धूमिल की प्रत्येक कविता आदमी को ढूंढने का प्रयास करती है। उसकी सही नाप, लंबाई, चौडाई आदि को आंकने की कोशिश दिखाई देती है परंतु वह हर बार कवि को चकमा देता है। कवि के लिए आदमी मानो बेताल बन गया हो जो हमेशा विक्रम को बातों में उलझाकर भाग जाता है। आदमी की हंसी-खुशी सुख दुख मिथ्या लगते हैं और उस खुशी को आंकने की कवि कोशिश भी झलावा सिद्ध होती है। पल-पल रंग बदलता आदमी धूमिल की पकड़ में आते-आते अगले पन्ने पर जाकर बैठ जाता है और कहता आ पकड़ सके तो पकड़ मुझे।

"जब वह हंसता है उसका मुख
धक्का खाई हुई 'रीम' की तरह
उदास फैल जाता है
मेरे पास अक्सर एक आदमी आता है
और हर बार मेरी डायरी के अगले पन्ने पर
बैठ जाता है।"

बोध प्रश्न

- धूमिल की प्रत्येक कविता किस को ढूंढने का प्रयास करती है?
- कविता के माध्यम से धूमिल का मूल स्वर क्या है?

3. बीस साल बाद

परतंत्रता से मुक्त होने में भारतीय जनमानस ने अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया सिर्फ इस आस में जब हम स्वतंत्र होंगे स्वराज होगा तो हमारे अच्छे दिन आएंगे परंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत देश की राज व्यवस्था जनसामान्य की मूलभूत आवश्यकताओं अर्थात् रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति कराने में भी विफल रही और गरीबी, मंहगाई, भ्रष्टाचार, कुपोषण, बाढ़, भुखमरी के नित नए कीर्तिमान स्थापित होते दिखाई देने लगे। 1947 से वर्ष गुजर जाने के बाद भी परिस्थिति बद से बदत्तर होती हुई दीखती हैं तब धूमिल की यह कविता भारतीय व्यवस्था के आइने के रूप में उपस्थित होती है।

"बीस साल बाद और इस शरीर में
सुनसान गलियों से चोरों की तरह गुजरे हुए
अपने आप से सवाल करता हूं
क्या आजादी सिर्फ तीन थके हुए रंगों का नाम है।"

बोध प्रश्न

- स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद क्या होता दिखाई देने लगा?

4. शहर का व्याकरण

भारत में स्वराज की स्थापना के प्रयासों से लेकर वर्तमान तक चुनाव एक अबूझ पहली जैसे हैं। प्रत्येक बार चुनाव में दुहाई तो लोकतंत्र की दी जाती है परंतु लोक के नाम पर सिर्फ राजनीतिक पार्टियां और नेता ही नजर आते हैं। प्रस्तुत कविता भी चुनाव पर सम्पूर्ण रूप से व्यंग्य करती है। आकाशवाणी, प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, दूरदर्शन पार्टियों के नेता किस प्रकार अपनी खामियों को खूबियों के रूप में प्रस्तुत करते दिखाई देते हैं। नेताओं का जनता के साथ वादों का झूठा प्रपंच और चुनाव समाप्त होते जनता पूरी तरह से विस्मरण ही सर्वत्र परिलक्षित होता है। जनता पहले सी मूर्ख बनती है और अंतत: छली जाने के बाद सिर्फ व्यवस्था को कोसती हुई दिखाई देती है।

बोध प्रश्न

- अबूझ पहेली सी क्या है?
- झूठा प्रपंच कौन फैलता है?

5. जनतन्त्र के सूर्योदय में

धूमिल अपने परिवेश और जटिल परिस्थितियों के प्रति अत्यन्त सजग एवं सक्रिय रहे। वे कविता के शाश्वत मूल्यों की प्रत्याशा रखते करते हैं। वे भाषा, मुहावरों व उक्तियों की सीमाओं से टकराते हुए दृष्टिगत होते हैं। वे प्रत्येक कविता में कुछ नया देने के लिए तत्पर रहते थे। वे महत्वपूर्ण हैं क्योंकि उन्होंने अपने दौर की कविता को भीड़ से निकाल जनतांत्रिक बनाया। कविता के प्रति परंपरागत दृष्टि को बदलने का महत्वपूर्ण कार्य किया। 'जनतंत्र का सूर्योदय' में

धूमिल शहरी समाज की व्यवस्था पर करारा व्यंग्य करते हुए शहर समाज में घटती सहिस्णुता, आत्मीयता तथा नित बढ़ती स्वार्थपरकता, भ्रष्टाचार आदि पर व्यंग्यवाण छोड़े हैं। इसके साथ ही नेता एवं नौकरशाहों की मिलीभगत से जनता के शोषण के कारणों की गहरी पड़ताल की है। धूमिल भूत और भविष्य के चिंतन मनन में उलझने के स्थान पर सीधी वर्तमान की बात करते हैं-

"सिर कटे मुर्गे की तरह फड़कते हुए
जनतंत्र में
सुबह-
सिर्फ, चमकते हुए रंगों की चालबाजी है।"

6. पतझड़

लोगों को अनुमान से अधिक विश्वास था कि आजाद होने के बाद न सिर्फ वर्तमान बल्कि आने वाली पीढ़ियों के भी दिन फिर जाएंगे, देश में हर तरफ खुशहाली होगी। अपने देश पर अपना अधिकार होगा, अपना शासन होगा परंतु सच्चाई कुछ और ही निकली आने वाली पीढ़ियों की तो छोड़ो तात्कालीन पीढ़ियों के ही लाले पड़ गए। लोगों में प्रत्येक जीवनोपयोगी वस्तु का इतना अभाव होने लगा कि लोग आने वाली पीढ़ियों के बारे में सोचते ही डरने लगे। युवा पीढ़ी को कमाने की आयु में ही बेरोजगारी ने बेकार कर दिया परिणाम स्वरूप युवा पीढ़ी व्यसनी होने लगी। धूमिल ऐसी ही स्थिति को शब्द चित्रित करते हुए कहते हैं कि

"इस देश की मिट्टी में
अपने जांगर का सुख तलाशना
अंधी लड़की की आंखों में
उससे सहवास का सुख तालशना है।"

आम जनता का चित्र प्रस्तुत किया गया है इस कविता में, जो कि अन्यायों अत्याचारों से बुरी तरह से त्रस्त है। मजदूरों को दिन भर जी तोड़ परिश्रम के बाद भी दो वक्त का भोजन भी नसीब नहीं हो पाता है और उनके शोषक पूंजीपति भौतिक समृद्धता के सागर में गोते लगाते हैं। इन शोषकों ने किसी बाज की भांति आम आदमी को अपने चुंगल में बहुत ही कसकर जकड़ा हुआ है जिससे छुटकारा पाना संभव नहीं है। करोड़ों की योजनाओं का निर्माण गरीबों के उद्दार के नाम बनाई तो जाती हैं परंतु उनका लाभ पूंजीपतियों को ही मिलता है। कुल मिलाकर मजदूर पूरी तरह से मजबूर है।

बोध प्रश्न

- अन्याय व अत्याचारों से बुरी तरह त्रस्त कौन है?
- जन-जन को किस बात का विश्वास था?

7. अकाल-दर्शन

सन 1966 में उड़ीसा और बिहार में पड़े भीषण अकाल के संदर्भ में लिखी गई प्रस्तुत कविता में कवि का स्पष्ट है कि पूंजीपतियों, राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों आदि का गठजोड़ आम जन की दिक्कतों, तकलीफों और बेबसी से भी सिर्फ और सिर्फ अपना लाभ कमाने में तत्पर होता है।

इस कविता की मूल समस्या भूख है। इसकी प्रथम पंक्ति में ही कवि प्रश्न करते हैं कि भूख कौन उपजाता है। व्यंग्य में प्रत्युत्तर देते हुए कहते है कि भूख तो बढ़ती आबादी का नतीजा है।' गांधी और स्वतंत्रता के नाम चलने वाली भ्रष्ट व्यवस्था समझते हुए लिखते हैं-

उस मुहावरे को समझ गया हूं
जो आजादी और गांधी के नाम पर चल रहा है
जिससे न भूख मिट रही है
न मौसम बदल रहा है।''

सर्वविदित है कि देश हो या परस्पर संबंध आदमी की तटस्थता और चुप्पी हमेशा घातक सिद्ध हुई है। हम इस संसार में रहकर दुनिया से अलग और तटस्थ नहीं रह सकते हैं। दैनिक जीवन में हमारे आस-पास हजारों घटनाओं का घटित होना आम है पर हम आंख मूंद कर बैठे हैं, यह स्थिति निर्जीविता का परिलक्षण कराती है। लोग अपनी मानसिक शांति के लिए तटस्थता धारण कर लेते हैं और यही स्थिति जिंदा लाश जैसी ही होती है। देशभक्ति, क्रांति, संघर्ष, लडाई, विरोध, एकता... आदि शब्द जन सामान्य के लिए अबूझ लगते हैं परंतु विचारणीय यह है क्या यह देश काल और समाज के लिए घातक नहीं है। दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के संघर्ष में समय ही नह बचता कि लोग आगे की सोचें। छोटी-छोटी जरूरतों को पूरा करते-करते इंसान की सम्पूर्ण उर्जा का क्षय हो रहा है।

बोध प्रश्न

- आदमी की तटस्थता कब घातक सिद्ध होती है?
- इस कविता की मूल समस्या क्या है?

8. कवि 1970

प्रस्तुत कविता में कवि समकालीन कवि और कविता पर अपना रोष प्रकट करते हैं। उन्हें न तो कविता में गहराई नजर आती है और न ही कवियों में। साथ ही पाठक भी विमुख सा लगता है उसमें भी किसी प्रकार गांभीर्य एवं अभिरुचि नजर नहीं आती है। कविता की गुणवत्ता धार आदि कई गुणों पर विचार करते हुए धूमिल कहते हैं कि

"इस वक्त जब कान नहीं सुनते हैं कविताएं
कविता पेट से सुनी जा रही है, आदमी
गजल नहीं गा रहा है गजल

आदमी को गा रही है।"

धूमिल इस कविता में यह भी स्वीकारते हैं कि वर्तमान में कवि के पास अपने बच्चों तथा समाज को देने के लिए कविता के अतिरिक्त कुछ और है भी नहीं। परिवार के साथ प्रस्तावित रिश्तों को ढोना मुश्किल है और उससे जुड़े रहना भी मजबूरी है। परिवार की खातिर अपने वास्तविक कवि कर्म का निर्वहन करने में भी असमर्थ सा है।

समाज में फैले हुए नाना प्रकार के तस्कर संकेत हैं उन प्रतीकों और उपमानों के, जिन्हें धूमिल के समकालीन कवियों ने गोल-गोल शब्दावली में अभिव्यक्त करके कविता को जनजीवन से अलग करके उसे शहरी कविता बनाने में व्यस्त थे। प्रस्तुत कविता में धूमिल अपनी समकालीन कविता के संबंध स्पष्ट करते हैं कि -

"इस वक्त जबकि कविता मांगती है
समूचा आदमी अपनी खुराक के लिए"

ऊपर लिखी पंक्तियों में जिस 'आदमी' की बात की गई है वही 'आदमी' धूमिल की काव्ययात्रा में शुरू से लेकर आखिरी तक केन्द्र में विद्यमान रहा है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य और गुण एवं दुर्गणों सहित। स्वयं धूमिल के ही शब्दों में - "कविता का एक मतलब यह भी है कि आप आज तक और अब तक कितना 'आदमी' हो सके हैं। दूसरे शब्दों में कहूँ तो यह कि कविता की असली शर्त 'आदमी' होना है।"

बोध प्रश्न

- धूमिल मनुष्य की किन कमजोरियों के बारे में बता रहे हैं?

9. वसन्त

भारतीय संस्कृति में वसंत का बहुत ही महत्व रहा है। इसे समृद्धि सुख एवं खुशियों आगमन का सूचक माना जाता है। देश के सभी हिस्सों में इससे संबंधित किसी न किसी त्योहार का मनाया जाना भारतीयों की सांस्कृतिक एकता का प्रतीक माना जा सकता है। प्रत्येक राज्य में वसंत के संबंध में अलग-अलग मान्यताएं हैं कहीं पर सरस्वती के आगमन के रूप में देखा जाता है और अपने संबंधियों को पहली उर अक्षर बोध कराया जाता था। कला, संगीत और लेखन से जुड़े लोगों के लिए भी इस पर्व का विशेष महत्व है। परंतु परिवर्तित परिस्थितियों ने इंसानों के जीवन को भी पूरी तरह से बदल सा दिया है। अब इंसान त्यौहारों के आगमन से खुश नहीं चिंतित होता है क्यों मंहगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार मानव जीवन में कभी चोरी, हत्या, तो कभी बलात्कार के रूप में नित नया तांडव करती रहती है। ऐसे भी परंपरागत लीक से वसंत शीर्षक रख कविता की रचना करना एक साहसिक कार्य है। कवि ने इस ऋतु के माध्यम से जन मानस की दुखी, तकलीफों, विवशताओं, कष्टों की ओर स्पष्ट इंगन करते हुए कहा है कि उसके लिए यह वसंत खुशियों के आगमन का द्योतक नहीं है अपितु बिलों के भुगतान करने का सूचक है। उसके जीवन में और तनावों के बढ़ने का सूचक है। उसके लिए खुशिरूों के आगमन के सारे

अवसर पाषाणकालीन पत्थरो की तरह अनुपयोगी एवं अप्रसांगिक हैं। चतुर, मौकापरस्त, धोखेबाज लोग ही अधिकांश खुशियों के अवसरों का लाभ उठाते हैं और आनंदित होते हैं।

10. नक्सलबाड़ी

यह कविता भुखमरी, बेरोजगारी तथा भ्रष्टाचार की नित बढ़ती समस्या पर कटाक्ष करती है। धूमिल का मानना है कि व्यवस्था के अनुकूल होना मौत के समान है इसलिए कुव्यवस्था का विरोध अवश्य किया जाना चाहिए। एक प्रजातंत्र से परेशान इंसान के लिए धूमिल अपनी कविताओं के प्रजातंत्र में आगमी मार्ग के अन्वेषण के लिए प्रयास करते हैं। वे आह्वान करते हैं कि जो व्यवस्था हमारे विकास के लिए अनुकूल नहीं है उसे बदल दिया जाना चाहिए। प्रचलित तंत्र इतना अमैत्रेयी हो चुका है कि उसमें अब कविता से परिवर्तन आने की गुंजाइश समाप्त सी हो गई है इसलिए इसे पूरी तरह से ही बदलना आवश्यक है। एक पार्टी से दूसरी पार्टी में जाना, प्रत्येक चुनाव में उन्हीं घिसे पिटे स्वार्थी नेताओं में से विकल्प तलाशना स्वयं को धोखा देना है अत: सभी का आमूलचूल नकार करना होगा तभी वर्तमान की रक्षा हो सकेगी और भविष्य के लिए मार्ग प्रशस्त्र हो सकेगा। इसलिए विरोध जरूरी है और जो विरोध करेगा वही बदनाम होगा। धूमिल निराश हैं परंतु हिम्मत नहीं हारी है। उनके मन के किसी कोने में बदलाव की आस है।

नक्सल आंदोलन के दौर में नक्सलवाद को व्याख्यायित करते हुए वे कहते हैं-

भूख से रिरियाती हुई फैली हथेली का नाम
दया है
और भूख में
तनी हुई मुठ्ठी का नाम नक्सलबाड़ी हैं

11. एकान्त-कथा

प्रस्तुत कविता में कवि जनता की अनुकूलता की स्थिति से एवं ऐसी प्रवृत्तियों के चिंतित है। वह प्रश्न करता है कि देश की परिस्थितियां समाज को उद्वेलित क्यों नहीं कर रही हैं। देश की वर्तमान राजनीति व्यक्ति केंद्रित हो गई है। वह अपने व्यापक स्तर से सिकुढ़ती जा रही है और समाज के अधिकांश लोग उसी की ओर सरक से रहे हैं और इस प्रकार आत्मकेंद्रित एवं स्वार्थी देश के लिए अहितकारी लोगों की संख्या में बढ़ोत्तरी होती जा रही है। इस कविता में वर्तमान समाज में व्याप्त समस्याओं का व्यापकता स्तर पर जिक्र किया गया है। इस कविता के प्रस्तुतीकरण का धरातल अनुभूत सत्य की प्रस्तुती जैसा है कवि कहते हैं कि-

“मेरी दृष्टि जब भी कभी
जिंदगी के काले कोनों में पड़ी है
मैंने वहां देखी है
एक अंधी ढलान
बैलगाड़ियों को पीठ पर लादकर

खड़ी है।''

12. कुत्ता

यथा नाम प्रथम दृष्टया यह कविता वफादारी का प्रतीक लग सकती। परंतु यह कविता मानव की मजबूरी उसकी कमजोरी का बहुत ही सशक्त शब्द चित्रण प्रस्तुत करती है। आम तौर पर प्रचलित है कि कुत्ता एक वफादार प्राणी है और वह वफादारी में अपने मालिक के जूते चाटता है परंतु सत्य कुछ और ही है। कुत्ते का मालिक के जूते की चमक या कीमत से कोई सरोकार नहीं होता उसकी रुचि तो जूते में लगे हुए चमड़े की गंध में होती है। भले ही वह गंध उसकी भूख न मिटाती हो परंतु उसे खुशफहमी में तो रखती ही है कि उससे यहां से खाना मिल सकता है। भूख जहां कुत्ते को वफादार बनाती है वहीं मनुष्य को अपने जिंदा रहने के लिए पेट की आग बुझाने के लिए कुत्ते जैसा आचरण अपनाने के लिए बाध्य करती है। भूख से परेशान मानव भी उसके लिए रोटी देने वाले के जुल्म, अत्याचार, अन्याय आदि को चुपचाप सहता रहता है। अभावग्रस्त मनुष्य को भूख और स्वार्थ ने कुत्ता बनने पर मजबूर सा कर दिया है। जिस प्रकार कुत्ता मालिक के सामने दुम हिलाता रहता है उसी प्रकार मनुष्य भी मालिक की हर बात हां में सिर हिलाता रहता है। धूमिल कहते है कि

मगर मत भूलो कि इन सब से बड़ी चीज
वह वेशर्मी है
जो अंत में
तुम्हें भी उस रास्ते पर लाती है
जहां भूख
उस बहशी को
पालतू बनाती है।

13. शान्ति पाठ

यह कविता जहां एक ओर देश में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं अराजकता को आइना दिखाती है वहीं सरकार की विदेश नीतियों को प्रस्तुत करती है। देश के राजनैतिक कर्णधार जिनके हाथों में लोकतंत्र पर विश्वास करते हुए जनता ने देश की बागडोर सौंपी है उनकी नीतियां दुराचारी एवं कपटी पड़ोसी देशों के लिए बहुत ही अकारगर हैं और सिर्फ स्वयं को अहिंसा प्रेमी सिद्ध करने के लिए अपने सारे जीवन मूल्यों की हत्या करते जा रहे हैं। जिन नेताओं को विदेश घुसपैठ, सीमा एवं देश कार्यों में देशहित की नीति निर्माण पर ध्यान देना चाहिए वे मात्र नारेबाजी कर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर रहे हैं। बढ़ते आतंकवाद के दुष्परिणामों से जनता परेशान है और देश के नेता विश्व शांति का राग अलाप रहे हैं इन सब से एक आम आदमी बेहद निराश एवं हताश है। धूमिल के शब्दों में -

मैं अपनी ठंडी मांसपेशियों को विदेशी मुद्रा में
ढाल रहा हूं

फूट पड़ने के पहले ,अणुबम के मसौदे को बहसों की प्यालियों में उबाल रहा हूं
जयराम पेशा औरतों की सावधानी और संकटकालीन क्रूरता
मेरी रक्षा कर रही है।

14. शहर, शाम और एक बूढ़ा मैं

निराशा, जीवन की उद्देश्यहीनता के प्रति अनासक्ति प्रस्तुत कविता का मूल उद्देश्य है। स्वयं कवि अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आई विफलताओं के बावजूद शेष जीवन में कुछ सार्थक करने के लिए प्रयासरत रहते हैं और यही संदेश भारतीय जनमानस को देना चाहते है कि विफलताओं से आक्रांत होकर ठहरना उचित नहीं है कुछ बेहतर करने के लिए प्रयासरत रहना है जीवन है।

मैंने ऐसा कुछ भी नहीं किया है
मेरी प्रतिमा बने और उसके
उद्घाटन समारोह में
शहर के समझदार लोगों का एक पूरा दिन
खराब हो

बोध प्रश्न

- मनुष्य के जीवन में निराशा किस कारण से आती है?
- एक आम आदमी बेहद निराश एवं हताश किस कारण से है?

15. उस औरत की बगल में लेटकर

धूमिल को यथार्थवादी कवि माना जाता है। उनकी कविताओं में भरपूर तल्खी है। व्यवस्था और समाज के प्रति विद्रोह है। लेकिन यह तल्खी हो या विद्रोह - कहीं से भी आसमानी या हवा-हवाई नहीं हैं। पितृसत्तात्मक समाज में औरत को सिर्फ भोग्या माना जाता रहा। कहीं न कहीं यह धारणा आज भी पल रही है परंतु औरत का संसर्ग एक नवीन जगत के दरवाजे भी खोलता है। औरत समाजवाद का अच्छा उदाहरण है। औरत के संसर्ग के दौरान न तो जाति होती है और न पांत। यद्यपि दोगलेपन की हद तो तब होती है कि जैसे ही संसर्ग समाप्त होता है व्यक्ति अपनी जाति और औरत की औकात तुरंत दिखाने में तनिक भी देर नहीं करता है। इस कविता में धूमिल ने पुरुष समुदाय के इसी दोगले आचरण पर व्यंग्य किया है।

16. सच्ची बात

धूमिल की इस कविता को आत्मबोध की कविता माना जाता है क्योंकि सर्वविदित सत्य को पुन: प्रस्तुत करते हुए कवि ने संसार के सारस्वत सत्य 'खाली हाथ आना है और खाली हाथ ही जाना है' का संदेश दिया है। जन्म के समय व्यक्ति के एक शिशु रूप में पदार्पण से लेकर मृत्यु शय्या पर लेटने के समय तक इंसान के जीवन में जो भी घटित होता है या इंसान करता है सब बेमायने होता है। संसार की हाय-हाय, धनार्जन, रिश्ते-नाते इत्यादि सब इंसान के लिए

सांसारिक तौर पर महत्वपूर्ण होने के बावजूद सिर्फ कर्मकांड से हैं जीने के साधन मात्र हैं साध्य नहीं है। साध्य साधना करने के लिए प्रेरणा प्रदान करना इस कविता का मूल उद्देश्य है। छल कपट से परिपूर्ण संसार में व्यक्ति स्वयं के प्रति भी ईमानदार नहीं रह गया है और जो सत्य निष्ठा और ईमानदारी के मार्ग पर चलता है वह स्वयं को हर पल ठगा सा महसूस करता है।

वैसे हम समझते हैं कि सच्चाई
हमें अक्सर अपराध की सीमा पर
छोड़ आती है

17. राजकमल चौधरी के लिए

धूमिल अपने जीवन में कई महान व्यक्तियों से प्रभावित थे। प्रभावित व्यक्तियों पर आधारित कविताओं में से ही एक है प्रस्तुत कविता। जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु पर, आतिश के अनार सी वह लड़की, ओ वैरागी : शांतिप्रिय द्विवेदी, जनतंत्र एक हत्या संदर्भ इत्यादि उनकी महान व्यक्तियों के चरित्र संबंधी कविताएं हैं। प्रस्तुत कविता धूमिल ने राजकमल चौधरी के मृत्यु के बाद उनके व्यक्तित्व पर प्रकाश डालने के लिए लिखी।

वह सौ प्रतिशत सोना था
ऐसा मैं नहीं कहूंगा
मगर यह तय है कि उसकी शख्सियत
घास थी
वह जले हुए मकान के नीचे भी
हरा था। (संसद से सड़क तक, पृष्ठ सं. 33)

कविता का एक पक्ष कविता मित्र कवि राजकमल चौधरी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालती है वहीं इसके माध्यम से देश का नग्न यथार्थ भी प्रस्तुत किया है। धूमिल ने राजकमल की हिम्मत के प्रति अगाध श्रद्धा व्यक्त करते हुए लिखा है-

वह एक ऐसा आदमी था जिसका मरना
कविता से बाहर नहीं है।

18. हत्यारी भावनाओं के नीचे

सांप्रदायिक और स्वार्थी भावनाओं के संपोषकों तथा नित बढ़ती स्वार्थवादी प्रवृति ने समाज को एकाधिक हिस्सों में ऐसा विभाजित कर दिया है कि अब तो खाई भी दूर से ही दीख जाती है। किसी भी गली, मुहल्ले, गांव, शहर की तो बात ही दूर खून के रिश्ते भी मृतप्राय हो गए हैं। माता-पिता को वृद्धाश्रम भेज देने वाला फिर भी ठीक कहा जा सकता है माता -पिता या बुजुर्गों को सड़क पर भीख मांगने के लिए छोड़ देने वालों की तुलना में। हर तरफ स्वार्थपरकता एवं मौकापरस्ती तथा शोषण का बोलबाला है। अपने लाभ के लिए कोई भी किसी को किसी भी समय मार सकता है। जान बक्ष भी दी जो जीवन को नरक बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ेगा। किसी का किसी से कोई सरोकार नहीं यदि नाते रिश्ते हैं या संबंध हैं तो सिर्फ और सिर्फ मतलब

के। अपना घर बसाने के लिए दूसरे को शरणार्थी बनाने में तनिक भी हिचक नहीं होती है और इस बात का भी पूरा पूरा ख्याल रखा जाता है कि शरणार्थी का फिर से वास न हो पाए क्योंकि उससे दर-दर भटकने से ही तो दूसरा आन, बान और शान से पंचसितारा सुविधाओं वाले आवास में रह पाता है। मौत, अकाल, हत्या आदि से भी लोग अपनी रोटी सेंकते हुए नजर आते हैं।

19. मोचीराम

धूमिल अल्पायु के कारण औरों की तुलना में कम लिख पाया हो परंतु जो लिखा वह डंके की चोट पर लिखा। जो भोगा, एहसास किया, अनुभव किया और जिसकी अनुभूति की वह बिना भय बेझिझक लिखा। स्वतंत्रता के पश्चात् के 15-20 वर्षों तक जब आम इंसान के जीवन में को सुधार नहीं आया और दिन व दिन उसकी स्थिति खराब ही होती जा रही थी तब उसकी छटपटाहट, मोहभंग, निराशा को धूमिल ने महसूस किया 'मोचीराम' कविता में उसकी बहुत ही सुंदर अभिव्यक्त प्राप्त हुई। धूमिल की कविताओं के शीर्षक पर से एक नजर दौड़ाई जाए तो भी इस बात का पता चलता है। मोहभंग उस युग में भी और आज भी है और कल भी रहेगा। हमें जिनसे सबसे ज्यादा वापसी की अपेक्षाएं होती है वह अगर हो नहीं रही है या हमारे सपनों कि परिपूर्णता नहीं हो रही है तो मोहभंग की स्थिति पैदा होती है। मोचीराम का शीर्षक ही जनसामान्य दलित, पीड़ित शोषितों का प्रतिनिधित्व करता है। भारतीय समाज में ऐसे अनेक जाति समुदाय हैं जिनके मोची जैसे कई परंपरागत व्यवसाय हैं जिनके जीवन में भोगवाद की लालसा होने पर उसका कोई महत्व इसलिए नहीं होता है क्योंकि उन्हें अच्छी तरह पता होता है कि वह सब उनके लिए उपलब्ध हो पाना संभव नहीं है। चमार, मोची, नाई, लुहार, धोबी इत्यादि सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधि हैं। सदां उपेक्षित और दमित इन समुदायों के लोगों को समाज की बहुत अच्छी परख होती है और इसी कारण इनकी नजर से कुछ छिपता नहीं है। मोचीराम कविता इस प्रकार की असंख्य कहानियों को बयां करती है। यह कविता एक साथ अनेक प्रश्नों को उपस्थित करती है और बहुत का समाधान भी बताती है। धूमिल ने सर्वहारा वर्ग के प्रतिनिधि को आधार बनाकर लिखी इस कविता में अनूठे लेखन कौशल का परिचय दिया है। उनका अपने काव्य मंतव्य प्रस्तुत करने के लिए मोची के जीवन का आरेख खींचना वस्तुत: साधुवाद का विषय है। उन्होंने काव्य संवेदना और मोची की जीवन शैली के सम्मिश्रण से एक आकृति बनाई है जिसमें प्रमुख संवेदनाएं मोचीराम में झलकती हैं। धूमिल की काव्य संवेदना और 'मोचीराम' कविता की काव्य संवेदना पर और एक आकृति बनाई है, जिसमें धूमिल की प्रमुख काव्य संवेदनाएं मोचीराम में झलकती है या नहीं है इसका आकलन होता है। कविता के आरंभ से लेकर अंत तक ऐसे कई मुद्दे निकलते हैं जिनका बहुत लंबा विश्लेषण धूमिल युग, वर्तमान युग, संवेदनात्मक पक्ष, भाव पक्ष एवं कलात्मक पक्ष के आधार पर किया जा सकता है। कविता के आरंभ से लेकर अंत तक इस कविता का यहां पर विवेचन किया जा सकता है। 'मोचीराम' कविता संवादात्मक शैली में लिखी गई है। धूमिल की कलापक्षीय विशेषताओं में संवादात्मकता भी एक ताकतवर विशेषता है। धूमिल एक मोची के पास गए हैं और वह धूमिल से बतियाये जा रहा है। यह धूमिल की वास्तव हो या उनका दुनियादारी का आकलन हो। या

यह संवाद घटित न भी हुआ हो या वे अपने सामने कल्पना में किसी मोची से बात भी कर रहे हो, कोई फर्क नहीं पड़ता। जूतों की, चप्पलों की मरम्मत करनेवाला मोची धूमिल से कहता है –

बाबू जी सच कहूं-मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिए, हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिए खड़ा है।

इन पक्तियों में धूमिल की मूल काव्य संवेदना में से समानता की मांग, आम आदमी का नजरिया, सजग होने का आवाहन, परिवर्तनीयता, शोषित-पीड़ित व्यक्ति का बयान, सामनेवाले व्यक्ति को आंकने की क्षमता, अनुभव से परिपूर्णता है।

पूंजीवादी समाज में गरीबों का कोई विशेष महत्त्व नहीं, ऐसी आम मानसिकता गरीबों की बनती है। आत्मविश्वास की कमी के कारण कंधे और सर झुक जाता है। परंतु कवि का कहना है कि गरीब और आम आदमी अन्याय न सहे, आवाज उठाए, आक्रोश करे। समझ में आना चाहिए कि कहां चीखे और कहां चुप बैठे। 'चीख' और 'चुप' बहुत असरदार होती है और सामने वाले के गलत इरादों पर रोक लगा देती है। जरूरी है इन दो अस्त्रों का उचित और सार्थक प्रयोग हो। कवि के शब्दों में -

जबकि मैं जानता हूं कि 'इंकार से भरी हुई एक चीख'
और 'एक समझदार चुप'
दोनों का मतलब एक है -
भविष्य गढ़ने में 'चुप' और 'चीख'
अपनी-अपनी जगह एक ही किस्म से
अपना-अपना फर्ज अदा करते हैं।"

20. मुनासिब कार्रवाई

मुनासिब कार्रवाई कविता बताती है कि धूमिल निराशा हताशा के कवि नहीं हैं बल्कि क्षोभ, करुणा और यथार्थ उनके कवित्व का मूल है। वे जनसामान्य पर नित होते अत्याचार अन्याय से व्यथति है। कविता से उन्होंने उम्मीद नहीं खोई है। भीतर की रोशनी की चर्चा धूमिल की कविताओं में जगह-जगह इसीलिए है कि वे जितनी भी रोशनी बची है उसे प्रज्जवलित रखने के लिए प्रयासरत हैं। कविता के माध्यम से वे दिशाहीन देश को सही रुख देना चाहते हैं।

धूमिल ने कविता-सम्बन्धी अनियंत्रित मान्यता एवं धारणा को नियंत्रित करने का बड़ा काम किया है। जब वे कहते है कि "अकेला कवि कठघरा होता है" तो कवि कठघरे से एक वक्तव्य ही दे सकता है-

‘‘एक सही कविता
पहले
एक सार्थक वक्तव्य होती है।
कविता
शब्दों की अदालत में खड़े
मुजरिम के कठघरे में खड़े बेकसूर आदमी का
हलफ़नामा है’’

बोध प्रश्न

- धूमिल ने कविता-सम्बन्धी अनियंत्रित मान्यता एवं धारणा को नियंत्रित क्यों किया?

21. शहर में सूर्यास्त

प्रस्तुत कविता बहुत ही सशक्तता के साथ देश की राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण किया है। वे देशभक्त, जिन्होंने आजादी के पूर्व या संघर्ष के दौरान सुनहरे भारत के निर्माण का सपना देखा था, उनके मोहभंग, खीज, चिढ़, नैराश्य का भी बहुत ही सटीक चित्रण प्रस्तुत करती है यह कविता।

‘‘लाल हरी झंडियां
जो कल तक शिखरों पर फहरा रही थीं
वक्त की निचली सतहों में उतर कर
स्याह हो गई हैं और चरित्रहीनता
मंत्रियों की कुर्सी में तबदील हो चुकी है।’’

धूमिल देश की इन परिसि्थतियों के इन मौका परस्तों को ही जिम्मेदार मानते हैं क्योंकि आजादी के संघर्ष के समय से दूर दूर तक सामने नहीं थे और आजादी के बाद अपने आप को देशभक्त सिद्ध कर कुर्सियों पर आसीन हो गए। जनतंत्र इनके लिए किसी हीरे के समान लाभकारी गोल पत्थर है जिसे इन्होंने जनता को मूर्ख बनाने के लिए हवा में उछाल दिया है। धूमिल का मानना रहा था जिसे सामान्य तौर पर जनतंत्र कहा जाता है वह मात्र इन भेड़ियों की जुबान पर ही जिंदा है, जिसे प्रतिदिन हजारों बार मारा जाता है।

22. भाषा की रात

भाषा की रात कविता में धूमिल इस यथार्थ को अभिव्यक्त करते हुए बिना किसी हिचक के कहते हैं कि सिर्फ नफरत ही झूठ के आवरण से बाहर है। यह कविता अपने सवालों के साथ पूरी तरह समकालीन हो जाती है।

भारत बहुभाषी देश है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में जितनी भूमिका हिंदी भाषियों की रही उतनी ही अन्य भाषा भाषियों की भी रही। भाषा के स्तर पर कहीं कोई विवाद नहीं हुआ परंतु जब स्वतंत्र भारत में संविधान निर्माण के दौरान राष्ट्रभाषा के निर्धारण का समय आया तब हिंदी का विरोध हुआ। विरोध का प्रमुख कारण का अन्य भाषा भाषियों के मन यह उनकी भाषा को कम महत्व दिए जाने की भावना के कारण। हिंदी पट्टी के तथाकथित हिंदी प्रेमियों के अतिशय उत्साह और प्रदर्शनों के कारण दक्षिण भारत के लोगों में अपने भाषाओं को लेकर चिंता जागृत हो गई। यथा -

भाषा और भाषा के बीच की दरार में

उत्तर और दक्षिण की तरफ़

फन पटकता हुआा

एक दोमुँहा विषधर

रेंग रहा है

रोज़ी के नाम पर

रोटी के नाम पर

जगह-जगह ज़हर

फेंक रहा है

और... और वह देखो कि-आऽऽ है

प्रांतीयता का चेहरा लगाए हुए

कोई घुसपैठिया है?

सांस्कृतिक विविधता भारत का वैशिष्टय है। अलग-अलग वेशभूषा, खान-पान, रीति-रिवाज वाले देश में सभी का अपना महत्व है। भिन्नता भारत की कमजोरी नही उसकी शक्ति और मुख्य निधि है। भौतिक और सामाजिक रूप, भाषा, रीति रिवाज, धर्म की भिन्नता होने पर भी कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक एकता के सूत्र में बंधे राज्य ही भारत हैं। यह एकता है सांस्कृतिक एकता, जिसने भारत की विविधता को अपने में समोकर अभिन्न रूप प्रदान किया है। भारत की संस्कृति की अपनी विशिष्टताएं है, जो उसे विश्व के अन्य देशों से पृथक करती है, लेकिन इस विविधता का प्रभाव भारत की सांस्कृतिक एकता पर नहीं पड़ता है परंतु कुछ

विघटनकारी मानसिकता वाले मौकापरस्तों ने अपने हितलाभ के लिए भाषाई आधार पर देश को बांटन का कुप्रयास किया। धूमिल की कविता में सांस्कृतिक एकता की अनुपम झांकी देखने को मिलती है-

ओ, भाषावार हमलों से हलकान मेरे भाई!

क्या तुम्हें अब भी

उसी का भरोसा है,

जिसके अधिकार में

हमारी लिट्टी है,

चावल है

इडली है

दोसा है?

हाय! जो असली कसाई है

उसकी निगाह में

तुम्हारा यह तमिल-दुख

मेरी इस भोजपुरी-पीड़ा का

भाई है

भाषा उस तिकड़मी दरिंदे का कौर है

बोध प्रश्न

- धूमिल की कविता में सांस्कृतिक विविधता किस प्रकार नजर आता है?

23. प्रौढ़ शिक्षा

शिक्षा और पढ़ाई से परिवर्तन हो सकता है इस बात को ध्यान में रखते हुए सरकार ने बच्चों की पढ़ाई को नजरंदाज करते हुए प्रौढ़ों को पढ़ाने की कसरत की और 'प्रौढ़ शिक्षा अभियान' को सारे देश में चलाया। कुछ सफल पर ज्यादा जगहों पर कागजी खानापूर्ति। हमारे देश में किसान, मजदूर और गरीब हमेशा अज्ञान रूपी अंधेरी गुफाओं में ठोकरें खा रहे हैं। शिक्षा का लाभ उठाने से और बच्चों की पढ़ाई पर भी विशेष ध्यान देने से परिवर्तन की आस बनती है। धूमिल ने 'प्रौढ़ शिक्षा' कविता में आम आदमी के अज्ञान पर आघात करते हुए अकड़ने का आवाहन किया है -

"काले तख्ते पर सफेद खडिया से

मैं तुम्हारे लिए लिखता हूं - 'अ'

और तुम्हारा मुख
किसी अंधी गुफा के द्वार की तरह
खुल जाता है – 'आऽऽ'• • •
इसलिए मैं फिर कहता हूं कि "हर हाथ में
गीली मिट्टी की तरह 'हां-हां' मत करो
तनो
अकडो
अमरबेलि की तरह मत जिओ
जड़ पकडो
बदलो अपने आपको बदलो।"

24. पटकथा

'पटकथा' संसद से सड़क तक कविता संग्रह की अंतिम तथा सबसे लंबी कविता है। इस कविता में भारत की स्वतंत्रता के प्रारंभ से सातवें दशक तक विभिन्न परिस्थितियों यथा- राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि का बहुत ही व्यापक चित्रण प्राप्त होता है। संसदीय लोकतंत्र, चुनावी राजनीति, जनमानस की की विवशता, मध्यवर्गीय कुकृत्यी चरित्र आदि को जिस दृष्टि से धूमिल ने देखा वैसा उनसे पहले शायद ही किसी ने देख्रा हो। इस कविता में स्वतंत्रता के प्रति धूमिल को राजनेताओं के बदलने के लिए आशान्वित देखा जा सकता है परंतु स्थितियां दिन प्रति दिन खराब होते हुए ही दिखाई देती है इस पर धूमिल का आक्रोश भारतीय जनमानस पर आता है क्योंकि अन्याय, भ्रष्टाचार, शोषण से जनता पर कोई असर नहीं हो रहा है और चुपचाप सहते जाने पर धूमिल को खीज आती है, इस पर जनता का लताड़ने लगते हैं। कवि ने व्यंग्यात्मक लहजे में करारी लताड़ लगाई है। जहां सम्पूर्ण कविता में ओज और व्यंग्य का परिलक्षति होता है वहीं कविता के अंत धूमिल निराश एवं हताश लगते हैं क्योंकि उन्हें देश में हर तरफ कायर ओर अकर्मण्यण लोग दिखाई देते हैं तब वे कह उठते हैं -

''नहीं अपना कोई हमदर्द
यहां नहीं है।मैंने एक एक को
परख लिया है।
मैंने हरेक को आवाज दी है
मगर बेकार.....मैंने जिसकी पूंछ
उठाई है उसको मादा
पाया है।''

पाठक को झंकृत करने देनेवाली शैली में धूमिल का आक्रोश बहुत ही मुखर हो इस कविता में फूटता है -

''यद्यपि यह सही है कि मैं
कोई ठंडा आदमी नहीं हूं
मुझमें भी आग है
मगर वह
भभक कर बाहर नहीं आती
क्योंकि उसके चारों तरफ चक्कर काटता
एक पूंजीवादी दिमाग है
जो परिवर्तन चाहता है
मगर आहिस्ता आहिस्ता
कुछ इस तरह कि चीजों की शालीनता बनी रहे'

देश में जनतंत्र के नाम आज भी जनता को छला ही तो जा रहा है इसी की पटकथा को धूमिल ने संसद से सड़क तक में सत्तर के दशक में ही लिख दिया था। व्यवस्था के प्रलोभनों से कभी कोई दल तो कभी दूसरा कोई राष्ट्र के नाम पर तो कोई विकास के नाम पर जनता को अपने तिलिस्म में चकरघिन्नी बनाए हुए है। धूमिल ने तिलिस्म से बाहर आकर आमजनों को आजादी के जो वायदे, मूल्य, मायने और सपनों को न सिर्फ याद दिलाया बल्कि हो रही दुदर्शा का आभास भी कराया –

मैंने इंतजार किया
अब कोई बच्चा
भूखा रहकर स्कूल नहीं जाएगा
अब कोई छत बारिश में
नहीं टपकेगी । .....
मैं इंतजार करता रहा
इंतजार करता रहा
इंतजार करता रहा
जनतंत्र, त्याग, स्वतंत्रता
संस्कृति, शांति, मनुश्यता
ये सारे शब्द थे
सुनहरे वादे थे
खुशफहम इरादे थे।''

सन् 1967 में चौथे आम चुनाब के साथ ही कई राज्यों में कांग्रेसी इतर सरकार बनी। नाना प्रकार के झंडे फिजाओं में फहराने लगे। नेताओं के पृथक-पृथक गुट, नस्लें, रूप, रंग, चाल, चरित्र और चेहरों का परिलक्षण होने लगा। ऊपर से भले ही अलग दृष्टिगत होते थे परंतु सब में एक बात सामान्य एवं समान थे और वो थी सत्ता की भूख। जनता बुरी तरह छली जा रही थी

और नित नए तमाशे देखकर और भी ठगा हुअ महसूस कर रही थी। यह धूमिल की पटकथा है- भूख, बेचैनी, गुस्से, यथार्थ और सपने के बीच बनती हुई- समाजवाद से लेकर नक्सलबाड़ी तक आती-जाती हुई, संविधान से लेकर संसद तक सवाल खड़े करती हुई और अंतत: एक वेधक उदासी में विसर्जित होती हुई-

'मेरे सामने वही चिर-परिचित अंधकार है

संशय की अनिश्चयग्रस्त ठंडी मुद्राएं हैं

हर तरफ़

शब्दवेधी सन्नाटा है।

घृणा में

डूबा हुआ सारा का सारा देश

पहले की ही तरह आज भी

मेरा कारागार है।

घूमिल की दृष्टि में गाँव शहर का पड़ोसी था। या यह कहना ज़्यादा सटीक होगा कि शहर उनके लिए गाँव का पड़ोसी था। उन्हें शहर से ख़ास चिढ़ थी-नफ़रत की हद तक। वे कहते हैं-

उसे मालूम है कि शब्दों के पीछे
कितने चेहरे नंगे हो चुके हैं
और हत्या अब लोगों की रुचि नहीं-
आदत बन चुकी है
वह किसी गँवार आदमी की ऊब से
पैदा हुई थी और
एक पढ़े लिखे आदमी के साथ
शहर चली गयी

जनचेतना के प्रबल समर्थक एवं पैरोकार धूमिल का जब तथाकथित आज़ादी का सपना टूटा तो कवि का अंतर्मन तड़ा उठा वे मन की टूटन को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि

"मुझे अच्छी तरह याद है-
मैंने यही कहा था
मेरी नस-नस में बिजली
दौड़ रही थी
उत्साह में
खुद मेरा स्वर
मुझे अजनबी लग रहा था

मैंने कहा-आ-जा-दी"

बोध प्रश्न

- 'घूमिल की दृष्टि में गाँव शहर का पड़ोसी था' - ऐसा क्यों सिद्ध कीजिए।
- 'देश में जनतंत्र के नाम आज भी जनता को छला ही तो जा रहा है' - ऐसा क्यों कहा सिद्ध कीजिए।

25. मकान

प्रस्तुत कविता नगरों की मकान व्यवस्था और उनमें रहने वाले लोगों के जनजीवन को बहुत ही बारीकी से प्रस्तुत किया गया है। कहने को तो वे मकान होते हैं और उनमें एक साथ कई जिंदगियां पलती हैं परंतु सुख से ज्यादा उन्हें प्रतिपल नर्क भोगना पड़ता है। वस्तुत: मकान यहां भारत देश के प्रतीक के रूप में प्रयोग मे लाया गया है और यह कविता देश के विगड़े हालात की गहराई तक पड़ताल करती है। मकान में आदमी को पालतू बनाया जाता है तथा इसकी छत के नीचे षडयंत्रों को रचा जाता है। कविता में छत आवरण है जो वास्तविक दृश्य को छुपाने का कार्य करती है। मकान प्राप्त होते ही व्यिक्त उस सुख के आगे देश एवं समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों की अनदेखी कर सुख की नीद सोने लगता है।

14.4 पाठ सार

'संसद से सड़क तक' काव्य संग्रह के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि धूमिल की कविताएं आजादी के बाद के भारत की सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के आकलन, चिंतन-मनन की कविताएं हैं। धूमिल ने हिंदी कविता में से नकारात्मकता को हटा कर उसे एक नयी भावभूमि पर खड़ा करते हुए न सिर्फ़ एक नयी दिशा प्रदान की, बल्कि उसे सकारात्मक बनाकर एक नवीन कलेवर देकर नया व्याकरण भी दिया। साधारण से शब्द और मुहावरे उनकी कविता में आकर असाधारण प्रभावयुक्त हो जाते हैं।

14.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं -

1. साठोत्तरी कविता का स्वर निषेधात्मक रहा, उसमें नकार का बोध अधिक दिखाई देता है।
2. धूमिल ने साठोत्तरी कविता को अभिव्यक्ति की नवीन भाव भंगिमा से समृद्ध किया।
3. धूमिल की कविता में सपाट बयानी के रूप में ग्रामीण कृषक संस्कार साफ-साफ़ झलकता है
4. धूमिल की कविता में सपाट बयानी के रूप में प्रस्तुत ग्रामीण कृषक संस्कार स्पष्ट परिलक्षित होता है।
5. धूमिल न सिर्फ सामाजिक परिस्थितियों और राजनीति के लिए चिंतित थे, बल्कि वे कविता और कवि कर्म के प्रति भी सजग थे। इसका स्पष्ट उदाहरण उनकी कविता विषयक कविताओं में मिलता है।

14.6 शब्द संपदा

1. अर्जियाँ = आवेदन
2. जरायमपेशा = अनेक अपराधों के जरिए अपनी जीविका चलाते हो
3. रोजनामचा = दैनिकी

14.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. 'संसद से सड़क तक' में स्वतंत्रता के पश्चात समाज में आए मोहभंग का चित्रण कीजिए।
2. संसद से सड़क तक' में शामिल की गई कविताओं का संक्षिप्त परिचय देते हुए किसी एक कविता पर आलोचनात्मक टिप्पणी कीजिए।
3. सुदामा पांडे धूमिल की कविताओं की सपाट बयानी पर प्रकाश डालते हुए मोचीराम पर आलोचनात्मक टिप्पणी कीजिए।
4. 'संसद से सड़क तक' की मोचीराम कविता आधुनिक सामाजिक वैमनस्य का वास्तविक चित्रण है। इस कथन की पुष्टि कीजिए।
5. साठ के दशक के बाद की कविता में धूमिल के व्यवस्था विरोधी स्वर की उदाहरण सहित समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'संसद से सडक तक' की प्रमुख कविता पर आलोचनात्मक टिप्पणी लिखिए।
2. 'पटकथा' कविता पर आलोचनात्मक विवेचन प्रस्तुत कीजिए।
3. मकान कविता शहरी जनजीवन का चित्रण कराने में किस तरह से सहायक है स्पष्ट कीजिए।
4. मोचीराम कविता के माध्यम से समाज के प्रति दृष्टि का विवेचन कीजिए।
5. धूमिल की काव्य संबंधी भाषा का स्पष्ट कीजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में किस भाषा की भूमिका सबसे ज्यादा रही? ( )

   (अ) अंग्रेजी (आ) हिंदी (इ) तमिल (ई) मराठी

2. भारतीय संस्कृति में वसंत ऋतु किस का प्रतीक है? ( )

(अ) खुशियों (आ) गम (इ) बेचैनी (ई) जोश

3. साध्य-साधना करने के लिए प्रेरणा प्रदान करना धूमिल की किस कविता का मूल उद्देश्य है?

(अ) सच्ची बात (आ) मोचीराम (इ) शांति पाठ (ई) शहर में सूर्यास्त ( )

4. धूमिल के अनुसार देश में किस की संख्या बढ़ चुकी है? ( )

(अ) देश प्रेमियों (आ)चमचों (इ) नेताओं (ई) मूर्खों

I. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए -

1. ..... उस युग में भी और आज भी है और कल भी रहेगा।
2. 'मोचीराम' कविता ..... शैली में लिखी गई है।
3. गरीब और आम आदमी .....न सहे, आवाज उठाए, आक्रोश करे।
4. धूमिल को ..... वादी कवि माना जाता है।

II. सुमेल कीजिए -

1. भुखमरी, बेरोजगारी की समस्या	(अ) शांति पाठ
2. भ्रष्टाचार एवं अराजकता की समस्या	(आ) नक्सलबाड़ी
3. स्त्री अपमान	(इ) एकांत कथा
4. जनता की अनुकूलता की स्थिति	(ई) एक आदमी

14.8 पठनीय पुस्तकें

1. कटघरे का कवि धूमिल : डॉ. गणेश तुलसीराम अष्टेकर
2. समकालीन बोध और धूमिल का काव्य : डॉ. हुकुमचंद राजपाल
3. दूसरे प्रजातंत्र की तलाश में धूमिल : डॉ. कुमार कृष्ण
4. धूमिल काव्य यात्रा : डॉ. मंजु अग्रवाल

इकाई : 15 मुक्तिबोध : एक परिचय

रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 उद्देश्य
15.3 मूलपाठ : मुक्तिबोध : एक परिचय
15.3.1 जीवन परिचय
15.3.2 रचना यात्रा
15.3.3 रचनाओं का परिचय
15.3.4 गध साहित्य
15.4 पाठ सार
15.5 पाठ की उपलब्धियाँ
15.6 शब्द संपदा
15.7 परिक्षार्थ प्रश्न
15.8 पठनीय पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में मुक्तिबोध बहुमुखी प्रतिभा संपन्न साहित्यकार माने जाते है। अपने समय में वे आकंठ डूबकर कार्य करते थे। प्रत्येक मानव अपने जीवन की परिस्थितियों और सामाजिक परिवेश से प्रभावित होता है। साहित्य पर भी इसका प्रभाव देखा जाता है। साहित्यकार भी इन स्रोतों से विशेष प्रभाव ग्रहण करता है और उसको अपनी रचना प्रक्रिया में लाता है। मुक्तिबोध जैसे जागरूक और क्रांतिकारी साहित्यकार के संबंध में यह बात और भी सच है जिसने जीवन की परिस्थितियों को चुनौतियों के रूप में स्वीकार किया। उनके साथ जूझने का संकल्प किया और जिसमें सामाजिक परिवेश से अनुभव प्राप्त करके उसे क्रांतिकारी विचारों के रूप में प्रस्तुत किया हो। आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास का कोई भी ऐसा जानकार नहीं होगा जो कि मुक्तिबोध के नाम से परिचित न हो। कविता, कहानी, उपन्यास और आलोचना जैसी विधाओं में लिखने वाले कुछ लेखकों में से एक थे। मुक्तिबोध हिंदी साहित्य आंदोलन की दिशा तय करने वाले एक युग प्रवर्तक लेखक थे। प्रतिभा के धनी मार्क्सवादी दर्शन से प्रभावित साहित्यकार थे। उन्होंने सर्वहारा वर्ग की त्रासदी को अपने अनुभव के साथ जोड़ा है। सामाजिक विषमता की त्रासदी उनके काव्य में उभरती रही है। इनकी काव्य में पूंजीवादी व्यवस्था का विरोध पाया जाता है। आक्रोश तथा शोषितों के प्रति सहानुभूति दिखाई देती है।

15.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप -

1. गजानन माधव मुक्तिबोध के जीवन और संघर्ष से परिचित हो सकेंगे।

2. कवि गजानन माधव मुक्तिबोध के व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
3. गजानन माधव मुक्तिबोध की रचना यात्रा से परिचित हो सकेंगे।
4. हिंदी साहित्य में मुक्तिबोध के महत्त्व को समझ सकेंगे।
5. गजानन माधव मुक्तिबोध का साहित्य में स्थान को जान सकेंगे।

15.3 मूल पाठ : मुक्तिबोध : एक परिचय

15.3.1 जीवन परिचय

तार सप्तक के पहले कवि गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म 13 नवंबर 1917 ई. में ग्वालियर (मध्य प्रदेश) राज्य के मुरैना जिले में श्योपुर नामक गाँव में एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण परिवार में हुआ। मुक्तिबोध के परदादा वासुदेव जलगांव (खानदेश) से नौकरी के लिए ग्वालियर आए थे और यही बस गए। मुक्तिबोध के पिता माधव राव गोपाल राव मुक्तिबोध ग्वालियर स्टेट में सब इंस्पेक्टर थे। इस संदर्भ में डॉ.माचवे कहते हैं - मुक्तिबोध के पिता माधवराव बड़े दबंग आदमी थे। ईमानदार और न्यायप्रिय। पुलिस विभाग आरंभ से ही भ्रष्टाचार के लिए बदनाम रहा है, लेकिन उसमें रह कर भी उन्होंने हमेशा अपनी ईमानदारी का परिचय दिया था।

मुक्तिबोध की माता पार्वती बाई हिंदी क्षेत्र ईसागढ़ (बुंदेलखंड, शिवपुरी) के एक समृद्ध किसान परिवार से थी। मेहनती वातावरण में पड़ी हुई और उस ज़माने में छठी कक्षा तक शिक्षा प्राप्त थी। विद्यार्थी जीवन में अपनी योग्यता के कारण उन्हें ₹100 का पुरस्कार भी मिला था। मुक्तिबोध अपनी माता के बारे में लिखते हैं- "प्रेमचंद की सूरत देख, मेरी माँ बहुत प्रसन्न मालूम हुई। वह प्रेमचंद को एक कहानीकार के रूप में बहुत चाहती थी। उसकी दृष्टि से यानी उसके जीवन में महत्व रखने वाले सिर्फ दो ही उपन्यास लेखक हुए हैं-एक प्रेमचंद और दूसरे हरि नारायण आप्टे। मेरी मां जब प्रेमचंद की कृति पड़ती तो उसकी आंखों में बार-बार आँसू छल छलाते से मालूम होते और तब उन दिनों मैं साहित्य का एक जड़मती विद्यार्थी मात्र मैट्रिक का एक छोकरा था- प्रेमचंद की कहानियों का दर्द भरा मर्म मुझे बताते बैठती। प्रेमचंद के प्रति मेरी श्रद्धा व ममता करने का श्रेय मेरी मां को है।"

गजानन माधव मुक्तिबोध बचपन से ही प्रतिभाशाली बालक थे। माता पिता को उनसे बहुत अपेक्षाएँ थी। तथा उन्हें अच्छे स्कूल में पढ़ाया गया। उनकी आरंभिक शिक्षा उज्जैन, विदिशा, अमभरा, सरदारपुर आदि स्थानों पर हुई। पिता के पुलिस सब इंस्पेक्टर होने के कारण उनका तबादला होते रहता था जिसकी वजह से मुक्तिबोध की पढ़ाई का सिलसिला टूटता जुड़ता था। परिणाम स्वरूप मुक्तिबोध को जीवन में पहली बार असफलता का सामना करना पड़ा। सन 1930 में उज्जैन में मिडिल परीक्षा में मुक्तिबोध असफल हुए। जिसे मुक्तिबोध अपने जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना मानते हैं। यहीं से उनके जीवन को महत्वपूर्ण मोड़ मिला। उन्होंने धीरे-धीरे साहित्य सृजन करना शुरू किया। इंटरमीडिएट की परीक्षा पास करने के बाद उन्होंने धीरे-धीरे काव्य रचना करना आरंभ कर दिया था। यहीं से एक प्रतिभाशाली, गुणवान कवि का उदय होता नजर आता है। मुक्तिबोध अपने आसपास के सामाजिक तथा राजनीतिक

वातावरण को समझ रहे थे। यह वह वातावरण था जहाँ आम आदमी को बगैर पूछताछ के जेल में ठूंस दिया जाता था। अंग्रेजों ने जुल्म की सारी हदें पार कर दी थी। देश के युवा वर्ग में अंग्रेज सरकार के खिलाफ असंतोष लहरें मार रही थी। उन युवाओं में से एक मुक्तिबोध भी थे। उन्होंने शोषण का पूरी ताकत के साथ विरोध किया वे शोषक वर्ग का तख्ता पलटना चाहते थे। भारत में चारों ओर अंग्रेजों के खिलाफ आंदोलन हो रहे थे। और सजाओ की कहानियां उसकी जिज्ञासा को प्रखर करती।"

मुक्तिबोध का परिवार छोटा सा था। जिसमें उनके तीन भाई (शरचंद्र मुक्तिबोध, वसंत मुक्तिबोध तथा चंद्रकांत मुक्तिबोध) और माता-पिता रहते थे। मुक्तिबोध के परिवार की बात करने पर पता चलता है कि मुक्तिबोध एक मध्यवर्गीय परिवार में लाड प्यार से पले बड़े हुए थे। इस लाड प्यार के चलते उनके स्वभाव में जिद्दी पन के भी दर्शन होते हैं। जो उनके साहित्य में भी झलकता है। इस जिद्दी पन के चलते उन्होंने परिवार के मर्जी के खिलाफ प्रेम विवाह किया। शमशेर बहादुर सिंह लिखते हैं- "20-21 साल का यह सरल भावुक और जिज्ञासु युवक एक ढहती परंपरा और आने वाले युग के बीच खड़ा अपने चारों ओर देख रहा था। उपेक्षितों, दलितों के लिए उसकी सहानुभूति तेजी से बढ़ रही थी कि उसे आमूल हिलाता अचानक उसके जीवन में आया प्रेम। एक जनून गहरा और सुंदर और स्थाई।"

राष्ट्रीय देश भक्ति युक्त था। इस कार्य के लिए कर्मठ सहयोगी की आवश्यकता थी, मुक्तिबोध ने हर्षित मन से वेतन की चिंता ना करते हुए यह कार्य स्वीकार किया। कुछ दिनों बाद मुक्तिबोध को शुजालपुर मंडी छोड़कर उज्जैन जाना पड़ा क्योंकि विवाह हो गया था और घर के लोग नवविवाहित वधू को घर रखना चाहते थे। अतः मुक्तिबोध ने अगस्त 1939 में उज्जैन में दौलतगंज मिडिल स्कूल में नौकरी शुरू की। सितंबर 1942 में मुक्तिबोध उज्जैन मिडिल हाई स्कूल में अध्यापक बने। अध्यापन कार्य के साथ-साथ मुक्तिबोध ने सन 1942 के मध्य में उज्जैन में प्रगतिशील संघ की स्थापना की। 1945 में ही उज्जैन से बनारस गए और वहाँ हंस पत्रिका के संपादन में लगे। नवंबर 1964 से डीएन जैन हाई स्कूल में अध्यापक हो गए। मुक्तिबोध ने दैनिक जय हिंद में भी कुछ समय तक काम किया स्थिति कुछ जम नहीं सकी और अंततः उनको जबलपुर छोड़ना पड़ा। सन 1956 में मुक्तिबोध 'नया खून' का संपादक कार्य करने लगे। यहीं से उनका पत्रकार जीवन आरंभ होता है जीवन के इस उतार-चढ़ाव, मानसिक तनाव तथा हद से ज्यादा काम और अपनी तबीयत से बेखबर रहने के कारण मुक्तिबोध की तबीयत बिगड़ती चली गई। साहित्यिक वर्ग द्वारा मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री को तार भेजकर मुक्तिबोध की चिकित्सा शासकीय स्तर पर करवाई गई अंततः 11 सितंबर 1964 को रात के 9:00 बजे अंतिम सांस ली।

बोध प्रश्न

- मुक्तिबोध के पिता किस प्रकार के व्यक्ति थे?

15.3.2 रचना यात्रा

मुक्तिबोध का पूरा साहित्य भारतीय जनमानस के एक विप्लव का साहित्य है। मुक्तिबोध ने सन् 1935 से नियमित रूप से काव्य रचना आरंभ कर दी थी । विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में जैसे - 'वाणी', 'धर्मयुग', 'हिन्दुस्तान', 'कर्मवीर', "वसुधा', 'समता', 'कमला' आदि में उनकी रचनाएँ प्रकाशित होने लगी थीं। मुक्तिबोध का लेखनकाल 1935 से होने के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में यह काल अत्यंत महत्वपूर्ण काल था। मुख्य रूप से 1935-40 तक छायावाद का उत्कर्ष का काल था। इस समय छायावाद प्रगति की चरम सीमा पर था। इसी समय छायावादी कवियों की श्रेष्ठतम कृतियाँ साहित्य जगत के सम्मुख आई। 1935 का काल, छायावाद की उत्कर्षावस्था का समय था, लेकिन दूसरी ओर इस काव्य के विरुद्ध प्रतिक्रियात्मक स्वर भी उठने लगे थे। छायावादी काव्य वास्तविक जीवन से विमुख होता जा रहा था, एक प्रकार से कविता जीवन के यथार्थ से विच्छिन्न हो गयी थी। इस प्रकार मुक्तिबोध की रचना की शुरूआत संधिस्थल से ही प्रारंभ होती है। अर्थात् एक ओर छायावादी काव्य परंपरा का अंत और दूसरी ओर प्रगतिशील काव्य परंपरा का आरंभ हो रहा था। स्वयं मुक्तिबोध 'तार सप्तक' के वक्तव्य में लिखते है - "मालवा के विस्तीर्ण मनोहर मैदानों से घूमती हुई क्षिप्रा की रक्त-भव्य आँखे और विविध-रूप वृक्षों की छायाएँ मेरे किशोर कवि की आद्य सौन्दर्य-प्रेरणा थी। उज्जैन नगर के बाहर का यह विस्तीरण निसर्ग लोक उस व्यक्ति के लिए उसकी मनोरचना में रंगीन आवेग ही प्राथमिक है, अत्यंत आत्मीय था।" मुक्तिबोध ने साहित्य की अनेक विधाओं में अपनी लेखनी चलाई।

बोध प्रश्न

- मुक्तिबोध किस युग के कवि माने जाते हैं?

15.3.3 रचनाओं का परिचय

कविता संग्रह

मुक्तिबोध मूलतः जनवादी कवि थे। उन्होंने अपने जीवन में अधिक कविताएँ ही लिखी किन्तु उनकी सभी रचनाएँ प्रकाशित नहीं हुई। इतना ही नहीं उनकी कुछ रचनाएँ नष्ट भी हो गयीं लेकिन उनके रहते उनका कोई काव्यसंग्रह प्रकाशित न हो सका। उनकी मृत्यु के बाद श्रीकान्त वर्मा ने सन् 1964 में मुक्तिबोध की रचनाओं का संग्रह कर 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' नामक शीर्षक से प्रकाशित किया। इन संग्रहों के अतिरिक्त उनकी हस्तलिखित कविताएँ, पांडुलिपियाँ भी मिली जो पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई, कुछ शेष रह गईं। इन्हीं का संग्रह हमें 'भूरी-भूरी खाक धूल' के अंतर्गत 1980 में संकलित किया हुआ दिखाई देता है। समूचे आधुनिक हिन्दी काव्य के इतिहास में मुक्तिबोध ही अकेले ऐसे कवि हैं जिन्होंने कविता को नया आयाम और सैद्धांतिक दृष्टि प्रदान की है।

तार सप्तक

मुक्तिबोध सचेत, सजग तथा मानवीय कवि हैं, साथ ही साथ वे आलोचक भी है। सन् 1935 से 40 तक की उनकी कविताएँ छायावाद और प्रगतिवाद की संधिरेखा की कविताएँ हैं इसी कारण मुक्तिबोध का छायावादी काव्य परंपरा के प्रति झुकाव दिखाई पड़ता हैं। 'तार सप्तक' में मुक्तिबोध की अठारह कविताएँ संकलित हैं। इन कविताओं को देखने के पश्चात् स्पष्ट हो जाता है कि मुक्तिबोध पर छायावादी काव्य परंपरा का गहरा प्रभाव है। छायावाद के सौन्दर्य एवं प्रेमपक्ष के साथ ही कल्पना उनके भी अपनी रचना में महत्व दिया है। इन प्रारंभिक कविताओं में उनके अन्वेषी मन का संकेत मिलता है। उनकी तार सप्तक के अंतर्गत संकलित महत्वपूर्ण कविताएँ निम्नलिखित हैं- 'आत्मा के मित्र मेरे', 'दूरतारा', 'खोल आँखे', 'अशक्त', 'मेरे अंतर', 'मृत्यु और कवि', 'नूतन अहं', 'विहार', 'पूंजीवादी समाज के प्रति', 'नाश देवता', 'सृजन क्षण', 'अंतरदर्शन', 'आत्म-संवाद', 'व्यक्तित्व और खंडहर', 'मैं उनका ही होता', 'हे महान', 'एक आत्म-वक्तव्य' आदि कविताओं में कवि का अन्तर्द्वन्द्व मुखरित हुआ दिखाई देता है ।

चाँद का मुँह टेढ़ा है

सन् 1964 में श्रीकान्त वर्मा द्वारा मुक्तिबोध का प्रथम संकलन प्रकाशित हुआ जिसके अंतर्गत मुक्तिबोध की परिपक्व तथा प्रौढ़ रचनाएँ दृष्टिगोचर होती है। इस काव्यसंग्रह में मुक्तिबोध की अट्ठाईस कविताएँ संग्रहीत की गई हैं। मुक्तिबोध ने जीवन के ठोस यथार्थ को चित्रित कर अँधेरे पक्ष को उजागर किया है। इस सन्दर्भ में श्रीकान्त वर्मा लिखते हैं- "किसी ओर कवि की कविताएँ उसका इतिहास हैं। जो इन कविताओं को समझेंगे उन्हें मुक्तिबोध को किसी रूप को समझने की जरूरत नहीं पड़ेगी।" मुक्तिबोध और उनकी कविता के बारे में आलोचकों व कवियों के अलग अलग मत है। डॉ. कान्ति कुमार ने लिखा है कि - "मुक्तिबोध के कवि-कर्म की तुलना हम लोहार की उस लोहशाला से कर सकते हैं जहाँ भट्ठी में भरे अंगारे दहक रहे हैं; चिनगारियाँ उड़ रही हैं, धौकनी चल रही है, निहाई पर दहकता हुआ लोहखंड संडसी से पकड़कर हथौड़ी से पीटा जा रहा है और निश्चित आकार में ढाला जा रहा है। मुक्तिबोध कविता के लुहार है और उनका कविता संसार जीवन की लोहारशाला है।"

शमशेर बहादुर सिंह का मत है कि - "मुक्तिबोध की कविताओं में सदैव एक साथीपन का भाव है। सबसे बड़ी बात उनमें यह है कि उनके अंदर मस्तिष्कहीन कोरी भावुकता नहीं है। उनके भावों के ज्वार के पीछे विचारों को दीर्घ दोहन है।"

'चाँद का मुँह टेढ़ा है' के अंतर्गत अधिकतर कविताएँ लम्बी है, इसके अतिरिक्त जो कविताएँ इस संकलन में नहीं आ सकी हैं उनमें भी अधिकतर कविताएँ लम्बी हैं। 'भूल-गलती', 'ब्रह्मराक्षस', 'दिमागी गुहान्धकार का ओराँग-उटांग', 'लकड़ी का घना रावण', 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'एक भूतपूर्व विद्रोही का आत्म-कथन', 'एक अरूप शून्य के प्रति', 'काव्यात्मन फणिधर', 'चकमक की चिनगारियाँ', 'जब प्रश्नचिन्ह बोखला उठे', 'एक स्वप्न कथा', 'चम्बल की घाटी में',

'अंधेरे में' आदि कविताओं का लक्ष्य आत्मसंघर्ष है, जिसे फैण्टेसी के प्रयोग से जिए और भोगे गए वास्तविक जीवन-चित्र को कल्पना के रंगों से प्रस्तुत किया है।

भूरी-भूरी खाक धूल

मुक्तिबोध के प्रथम संकलन के लगभग पन्द्रह वर्ष बाद 'भूरी-भूरी खाक धूल' का प्रकाशन अशोक बाजपेयी के संपादन में हुआ। मुक्तिबोध की कविताओं का यह द्वितीय संकलन है' जिसमें संकलित कविताओं का रचनाकाल 1948 से लेकर 1964 तक का है। प्रस्तुत संकलन के अंतर्गत 46 कविताएँ संकलित की गई हैं। प्रस्तुत संकलन की कविताओं में भी चित्रात्मकता है एवं स्वप्नचित्रों को उजागर किया गया है। ये स्वप्नचित्र मुक्तिबोध की अभिव्यक्ति के मुख्य साधन है। जनता के संवेदन सत्यों के चित्रों के मुक्तिबोध ने इस संकलन में रखा है। डॉ. संतोषकुमार तिवारी के शब्दों में - "इनमें घनीभूत रात की स्याह के घेरे में प्रकाश का शतदल है। यदि इनमें मुक्तिकामी पैरों की मोच का स्वर है तो ईमान की गरम फेंक और संघर्ष की श्वास भी है। एक जन साधारण का टूटा फाउन्टेन पेन कुल मिलाकर यही लिख सकते हैं कि जो कुछ मेरा है, वह तुम्हें प्यारा है।"

'भूरी-भूरी खाक धूल' के अंतर्गत अनेक कविताएँ संकलित हैं। इन कविताओं के द्वारा मुक्तिबोध ने जीवन की जटिलता, दुरूहता, भयावहता, द्विधाग्रस्तता के चित्रों को सामने लाने का सफल प्रयास किया है।

बोध प्रश्न

- 'चाँद का मुंह टेढ़ा है' कविता संग्रह में कितनी कविताएँ संकलित हैं?

15.3.4 गद्य साहित्य

मुक्तिबोध कवि होने के साथ ही साथ गद्यकार भी हैं। वैसे मुक्तिबोध कवि पहले है, उनकी रुचि काव्य में ही अधिक थी। गद्य लेखन तो एक परिस्थिति की मांग थी। मुक्तिबोध का गद्य साहित्य भले ही किसी भी कारण से सृजन किया गया हो, लेकिन वह अत्यंत उच्चकोटि का है। निःसंदेह कह सकते हैं कि मुक्तिबोध गद्य में आलोचक, कहानीकार, उपन्यासकार, डायरी लेखक तथा इतिहासकार आदि के रूप में हैं। उनकी गद्य कृतियाँ इस प्रकार हैं-

नयी कविता का आत्मसंघर्ष एवं अन्य निबंध

मुक्तिबोध ने मूलतः कवि होते हुए भी गद्य साहित्य का सृजन किया। उनकी सहज रूचि काव्य की ओर होने के कारण उन्होंने नयी कविता का आत्मसंघर्ष एवं अन्य निबंध में 'नयी कविता के' को दृष्टि में रखकर अपने काव्य सिद्धांतो का प्रतिपादन किया है। 'नयी कविता का आत्मसंघर्ष एवं अन्य निबंध' यह तेरह निबंधों का संग्रह हैं। इसमें कवि ने अपने युग की नूतन काव्यधारा में आत्मसंघर्ष उजागर किया है। "काव्य में तत्त्व-समृद्धि तथा तत्व परिष्कर के लिए भी वास्तविक जीवन के विविध जीवनानुभवों से संपन्न होंगे तथा इस विक्षुब्ध उत्पीड़ित

मानवता के (वायवीय नहीं, पूर्ण) आदर्शों से एकात्म होंगे। इसके बिना तत्त्व-समृद्धि और तत्त्व परिष्कार की समस्या अधूरी रह जायेगी।"

मुक्तिबोध आज के कवि को तीन क्षेत्रों में एक साथ संघर्ष करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं- तत्त्व के लिए संघर्ष, अभिव्यक्ति सक्षम बनाने के लिए संघर्ष और दृष्टि विकास के लिए संघर्ष। नयी कविता में लेखकों के दो वर्ग दृष्टिगोचर होते हैं। एक वर्ग वह है। जो समाज के शोषकों एवं उत्पीड़कों के विरुद्ध है और गरीब मध्यमवर्गीय जनता से उनका लगाव है और कुछ ऐसे भी जो राजनैतिक रूप से सचेत कवि हैं, जो लेखकों को समाज के उत्पीड़कों के विरुद्ध आवाज उठाते नहीं देते अथवा उन्हें ऐसे कार्य में हतोत्साहित करते रहते हैं। आज की कविता में जीवन के मूल तथ्यों के चित्रण का अभाव है, कवि मानव-समस्याओं के प्रति उदासीन है। मुक्तिबोध इसके मूल में समाज में फैली अवसरवादी प्रवृत्ति को देखते हैं - "आज शिक्षित मध्य वर्ग में जो भयानक अवसरवाद छाया हुआ है आत्म स्वातंत्र्य के नाम पर जो स्वहित, स्वार्थ, स्वकल्याण की जो भागदौड़ मची हुई है, मारो-खाओ हाथ मत आओ का जो सिद्धांत सक्रिय हो उठा है उसके कारण कवियों का ध्यान केवल निर्ज मन पर ही केन्द्रित हो जाता है। आज की कविता, वस्तुतः पर्सनल सिच्युएशन की, स्वस्थिति की, स्व-दशा की कविता है, किन्तु अब जिन्दगी का यह तकाजा है कि वह अपनी इस निजी समस्या को वर्तमान युग की मानव समस्याओं के रूप में देखे और चित्रित करे।" मुक्तिबोध ने अपने आलोचनात्मक निबंधों में एक ओर नयी कविता की न्यूनताओं का उल्लेख किया है तो दूसरी ओर नयी कविता का विरोध करनेवाले पुरातनवादी की संचुकित जीवन-दृष्टि की कड़ी आलोचना की है। मुक्तिबोध साहित्य के साथ-साथ साहित्यकार के जीवन के सर्वांगीण अध्ययन का आग्रह करते हैं और कृति मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर बल देते हैं। उनकी आस्था प्रगतिशील भावधारा की परंपरा में है जिसकी एक लीक नयी कविता में चली आयी है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि उनकी आलोचना का आधार मार्क्स की द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद की धारणा पर आधारित है।

समीक्षा की समस्याएँ

गजानन माधव मुक्तिबोध हिन्दी साहित्य में न सिर्फ कवि बल्कि वे एक समीक्षक, चिन्तन के रूप में भी अनन्य साधारण महत्व रखते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में संकलित निबंध इससे पूर्व पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए थे, ततपश्चात मुक्तिबोध रचनावली में संकलित हुए। सन् 1982 में मुक्तिबोध ने 'राजकमल प्रकाशन' से इस कृति को प्रकाश में लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। इस संकलन में संग्रहित निबंध सन् 1946 से 1964 तक के अर्थात् उनके अंतिम समय तक के निबंध है। 'समीक्षा की समस्याएँ' उक्त पुस्तक के पूर्व यह निबंध 'नया खुन', 'सारथी', 'राष्ट्रभारती', 'ज्ञानोदय', 'वसुधा', 'आलोचना', 'कल्पना', 'माध्यम' आदि पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं। मुक्तिबोध ने अपनी काव्यधारा को बरकरार रखने के लिए समीक्षा के क्षेत्र में अपनी पैनी दृष्टि से उल्लेखनीय कार्य किया है। अपने ज्वलंत काव्य व्यक्तित्व को रचनारत रखते हुए उन्होंने अपनी पैनी आलोचनात्मक दृष्टि से आलोचना-साहित्य को उसका उल्लेखनीय हिस्सा इस पुस्तक में सम्मिलित है। गजानन माधव मुक्तिबोध के 'समीक्षा की समस्याएँ' के अंतर्गत

'अन्धायुग : एक समीक्षा' यह अत्यंत महत्वपूर्ण आलोचनात्मक निबंध है उक्त निबंध में निबंधकार ने सामाजिक पक्ष पर प्रकाश डाला है। सामाजिक ह्रास आज के युग की एक महत्वपूर्ण वास्तविकता है।

'जो कुछ भी देखता हूँ : एक समीक्षा' इस आलोचनात्मक निबंध के अंतर्गत मुक्तिबोध ने एक विशेष जीवन-दशा के अंतर्गत अनेक जटिल क्षणों के रेखाचित्र उपस्थित किए हैं। साथ ही साथ महत्वपूर्ण चीज के रूप में काव्य में खरेपन को उजागर किया है। स्वयं मुक्तिबोध कहते है कि - "ज्यों-ज्यों पाठक समग्र के निकट आता जाता है, उसके अंतःकरण में छवियाँ बनाने लगती है और वे आगे-आगे अधिकाधिक आकर्षक होकर झलमलाने लगती है तथा अंत में पाठक उनकी सहायता से कवि के पूर्ण अंतः व्यक्तित्व का एक स्व-कल्पित मस्तिष्क चित्र बनाने में सफल हो जाता है।"

'लुसुन की कहानियाँ' नामक आलोचनात्मक निबंध में मुक्तिबोध ने लूसुन की कुछ कहानियों की समीक्षा की है। लुसुन चीन के नए युग के वाल्मीकि माने जाते हैं। उन्होंने अपनी मातृभूमि के ऐतिहासिक विकास के साथ-साथ सांस्कृतिक साहित्य विकास का स्वर बदल दिया। उनकी सबकी पहली कहानी 1918 में लिखी हुई 'पागल आदमी की डायरी' ने खलबली मचा दी थी। 'लुसुन की दवा', 'मेरा पुराना मकान', 'नये साल का बलिदान', 'कुंग-इचि', 'शराब की दुकान' और 'मनुष्य द्वेषी' आदि कहानियाँ महत्त्वपूर्ण कहानियाँ है किन्तु 'मनुष्य-द्वेषी' कहानी कुछ बुद्धिवादी की अँधेरे-भरी जिन्दगी की कहानी है जो आज हमारे भारतीय बुद्धिवादी की वास्तविकता के अत्यंत निकटतम दृष्टिगोचर होती है। 'मनुष्य-द्वेषी' कहानी के अंतर्गत बुद्धिवादी की 'चिंघाड' को प्रतीकात्मक रूप में स्पष्ट करने का सफल प्रयास किया है। सचमुच इस दिशा में मुक्तिबोध उच्च कोटि के समीक्षक के रूप में अपना स्थान बनाये हुए दिखाई देते हैं। यह कृति इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है।

एक साहित्यिक की डायरी

गजानन माधव मुक्तिबोध की सर्वाधिक चर्चित कृति 'एक साहित्यिक की डायरी' है। इसके अंतर्गत मुक्तिबोध के चिन्तन-मनन का प्रतिबिंब दृष्टिगोचर होता है। सर्वप्रथम यह जबलपुर से प्रकाशित होनेवाली 'वसुधा' में सन् 57, 58 और 60 में प्रकाशित हुई थी। 'वसुधा' पत्रिका में एक साहित्यिक की डायरी' के नाम से एक स्तंभ चलता था जिसके अंतर्गत मुक्तिबोध ने अपने विचार प्रकट किये, उन्हीं का संकलन इस कृति के अंतर्गत है। मुक्तिबोध के प्रबुद्ध साहित्यकार मन-मस्तिष्क में युग, जीवन, समाज, साहित्य और साहित्यकार को लेकर जो अनेकानेक प्रश्न उठते हैं, वैचारिक द्वन्द्व और बहस चलती रही है, उसी का व्यक्ति रूप है 'एक साहित्यिक की डायरी'। सबकी वास्तविकताओं को उतार कर रख दिया है। इस कृति की एक प्रमुख विशेषता व्यंग्य शैली है।

अतः 'एक साहित्यिक की डायरी' के विषय में कहा जा सकता है कि यह मुक्तिबोध की एक अमूल्य कृति है। इसमें युग के यथार्थ के समस्त बोध सामने लाये हुए स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर

होते है। इसमें मुक्तिबोध की वैचारिक प्रतिभा, सूक्ष्म विश्लेषण दृष्टि, सामाजिक परिवेश एवं परिस्थितियों का गहन ज्ञान, साहित्य के प्रति उनकी आस्था और ईमानदारी, चिन्तन-मनन आदि मुक्तिबोध को आधुनिक साहित्य के अंतर्गत एक प्रशस्त एवं अलग स्थान प्रदान करते हैं।

कामायनी : एक पुनर्विचार

समीक्षात्मक क्षेत्र में गजानन माधव मुक्तिबोध की 'कामायनी : एक पुनर्विचार' यह कृति अत्यंत महत्वपूर्ण है। छायावाद की श्रेष्ठ कृति 'कामायनी' की मुक्तिबोध ने एक पृथक दृष्टि से आलोचना की है। 'कामायनी' के संबंध में मुक्तिबोध के कुछ निबंध 'हंस' मासिक पत्रिका तथा आलोचना' में प्रकाशित हुए थे। सन् 1950 के बाद पुस्तक 'कामायनी : एक अध्ययन' नाम से मुद्रित तो हुई लेकिन प्रकाशित न हो सकी। 'कामायनी : एक पुनर्विचार' को कुल तेरह अध्यायों में लिखकर अन्ततः लेखक अपने विचारों द्वारा उपसंहार किया है। मुक्तिबोध ने 'कामायनी' के विवेचन-विश्लेषण को चुनौती देकर 'कामायनी' को प्रसाद के संबंधी बतलाकर अपनी वैज्ञानिक दृष्टि का परिचय दिया है । साथ ही साथ फैण्टसी के माध्यम से विवेचन को उजागर किया है। मुक्तिबोध स्वयं लिखते है कि - 'कामायनी का जो विश्लेषण मैंने किया है वह एक ओर प्रसाद का युग तो दूसरी ओर उनका व्यक्तित्व इन दोनों की परस्पर क्रिया-प्रतिक्रियाओं के संबंधित योग को ध्यान में रखकर की। 'कामायनी' क्या केवल एक फैण्टेसी है? जिस प्रकार एक फैण्टेसी में मन की निगूढ़ वृत्तियों का अनुभूति जीवन समस्याओं का इच्छित विश्वासों और इच्छित जीवन स्थितियों का प्रक्षेप होता है, उसी प्रकार कामायनी में भी हुआ है।"

वस्तुतः मुक्तिबोध ने कामायनी का मार्क्सवादी दृष्टि से विवेचन किया है। मुक्तिबोध ने मनु को मानव मात्र को, मन का प्रतीक न मानकर प्रसाद के मन का प्रतीक माना है।

अतः मुक्तिबोध का विवेचन-विश्लेषण कामायनी के अद्यतन विवेचन विश्लेषण के लिए एक चुनौती के रूप में सामने आया दिखाई देता है। जो हिन्दी समीक्षा-क्षेत्र में अपना एक नया निराला अस्तित्व सृजन करता है। इस समीक्षा के कारण हिन्दी समीक्षा को एक नयी दृष्टि प्राप्त हुई है। कवि ने परंपरागत मूल्यों को छोड़कर एक नयी दृष्टि के आधार पर 'कामायनी' का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। मुक्तिबोध में समीक्षा की पहुँच कहाँ तक है, इसको दिखानेवाली यह कृति है। कवि ने जन समाज की उपयोगिता की दृष्टि से इस कृति का मूल्यांकन किया है।

नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र

'नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' इस निबंध संग्रह का प्रकाशन सन् 1971 में रमेश गजानन मुक्तिबोध के यत्न से हुआ इस संग्रह में संग्रहीत निबंधो का रचनाकाल लगभग पच्चीस वर्षों में फैला हुआ है। इसलिए इस संग्रह के निबंधों में भाषा तथा कथ्य की दृष्टि से अधिक मात्रा में अंतर दिखाई देता है। संग्रह में अधिकांश निबंधो के अंतर्गत रचना प्रक्रिया के साथ ही साथ नये साहित्य में उपलब्ध जीवन विषयक दृष्टिकोण, जीवनमूल्य, समाज और साहित्य, यथार्थता, कलात्मकता, मानवता आदि प्रश्नों पर लेखक ने गहन चिन्तन-मनन में विचार व्यक्त किए हैं

किन्तु सौन्दर्यशास्त्र की दृष्टि का निर्वाह सफल नहीं हुआ है। मुक्तिबोध की दृष्टि में जीवन मूल्य और कलात्मक साहित्यिक मूल्य का स्तर मानक है। इन्हें विकसित करने का साहस, दृष्टि और निष्पक्ष विचारधारा के लिए उनका यत्न है। इस पुस्तक में पन्द्रह निबंध संग्रहित है। 'रचना का मानवतावाद' यह एक उत्तेजक, प्रौढ़ किस्म का निबंध है। साथ ही साथ छायावाद और नयी कविता शीर्षक से दो लघु लेख है। वस्तुतः इनमें नयी कविता के रूप में विधान, कथ्य बोध और प्रकृति को स्पष्ट रूप से उजागर किया है। इनमें ईमानदारी के साथ साहित्य के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है।

बोध प्रश्न

- 'एक साहितिक की डायरी' किस शैली में लिखी गई है?

15.4 पाठ सार

साहित्य सर्जन इन स्रोतों से विशेष प्रभाव ग्रहण करता है और उसको अपनी रचना प्रक्रिया में लाता है। मुक्तिबोध जैसे जागरूक और क्रांतिकारी साहित्यकार के संबंध में यह बात और भी सच है जिसने जीवन की परिस्थितियों को चुनौतियों के रूप में स्वीकार किया। तार सप्तक के पहले कवि गजानन माधव मुक्तिबोध का जन्म 13 नवंबर 1917 ई. में ग्वालियर (मध्य प्रदेश) राज्य के मुरैना जिले में श्योपुर नामक गांव में एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण परिवार में हुआ। मुक्तिबोध के परदादा वासुदेव जलगांव (खानदेश) से नौकरी के लिए ग्वालियर आए थे और यही बस गए। जीवन के साथ वे संघर्ष कर रहे थे वैसे ही मृत्यु के साथ भी लगातार 7 महीने संघर्ष करते रहे। अंततः 11 सितंबर 1964 को रात के 9:00 बजे अंतिम सांस ली।

मुक्तिबोध ने सन् 1935 से नियमित रूप से काव्य रचना आरंभ कर दी थी । विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में जैसे - 'वाणी', 'धर्मयुग', 'हिन्दुस्तान', 'कर्मवीर', 'वसुधा', 'समता', 'कमला' आदि में उनकी रचनाएँ प्रकाशित होने लगी थीं। मुक्तिबोध का लेखन काल 1935 से होने के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में यह काल अत्यंत महत्वपूर्ण काल था। मुख्य रूप से 1935-40 तक छायावाद का उत्कर्ष का काल था। प्रथम बार फंतासी का प्रयोग मुक्तिबोध के रचनाओं में देखने को मिला. अँधेरे में फंतासी शैली की रचना है। मुक्तिबोध के कविताओं में मार्क्सवादी विचारधारा का प्रभाव मिलता है. इनके प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं। चाँद का मुँह टेढ़ा, भूरी भूरी ख़ाक धूल, कामायनी एक पुनर्विचार, साहित्यिक डायरी, भूल गलती, ब्रह्मराक्ष आदि।

15.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं -

1. मुक्तिबोध के जीवन को देख कर यह पता चलता है कि इनका जीवन संघर्षों से भरा हुआ था।
2. इनकी रचनाओं पर मार्क्सवाद का प्रभाव देखा जाता हैं।
3. मुक्तिबोध एक प्रगतिशील कवि के रूप में जाने जाते है।

4. मुक्तिबोध का रचना संसार आधुनिक मध्यवर्गीय जीवन की कुंठाओं को व्यक्त करता है।
5. इनकी रचनाओं में आम आदमी के आक्रोश को दिखाया गया है।
6. मुक्तिबोध ने कविता के साथ साथ गद्य साहित्य में भी अपनी लेखनी चलाई।

15.6 शब्द संपदा

1. अँधेरा = जहाँ प्रकाश नहीं होता है
2. पुनर्विचार = बार-बार विचार करना
3. संघर्ष = आगे बढ़ने के लिए होने वाला प्रयत्न, प्रयास.
4. सौंदर्यशास्त्र = सौंदर्य संबंधी शास्त्र

15.6 परिक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. मुक्तिबोध के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
2. मुक्तिबोध के काव्य की विशेषताएँ बताइए।
3. मुक्तिबोध के रचना संसार को विश्लेषित कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. मुक्तिबोध का जीवन परिचय लिखिए।
2. मुक्तिबोध के रचनाओं का नाम बताइए।
3. मुक्तिबोध प्रगतिशील कवि हैं - स्पष्ट किजिए।

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. मुक्तिबोध का जन्म कब हुआ? ( )
   (अ) 1918 (आ) 1920 (इ) 1917 (ई) 1919
2. मुक्तिबोध कौनसे सप्तक के कवि माने जाते हैं? ( )
   (अ) चौथे (आ) दूसरे (इ) तीसरे (ई) तार या पहले
3. मुक्तिबोध किस काल के कवि हैं? ( )
   (आ) छायावाद (आ) भक्तिकाल (इ) द्विवेदी काल (ई) प्रगतिशील

II. रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए -

1. मुक्तिबोध का जन्म ..... गाँव में हुआ है।
2. अँधेरे में कविता के कवि ..... हैं।
3. मुक्तिबोध ..... धारा के कवि हैं।

III. सुमेल कीजिए -

1. चाँद का मुंह टेढ़ा	(अ) 1950
2. भूरी-भूरी ख़ाक धूल	(आ) 1935 से 1940 तक की कविता संकलित हैं
3. कामायनी : एक पुनर्विचार	(इ) 1948 से 1964 तक की कविता संकलित हैं
4. तार सप्तक	(ई) 1964

15.8 पठनीय पुस्तकें

1. हिंदी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचंद्र शुक्ल
2. कामायनी: एक पुनर्विचार : मुक्तिबोध
3. समीक्षा की समस्याएँ : रमेश मुक्तिबोध
4. नई कविता का आत्मसंघर्ष एवं अन्य निबंध : मुक्तिबोध
5. चाँद का मुंह टेढ़ा है : मुक्तिबोध
6. मुक्तिबोध के काव्य में मार्क्सवादी चेतना : परबत सिंह सामोरेकर
7. गजानन माधव मुक्तिबोध व्यक्तित्व एवं कृतित्व : डॉ. जनक शर्मा,

इकाई 16 : अंधेरे में (आलोचना)

रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 उद्देश्य
16.3 मूल पाठ : अंधेरे में (आलोचना)
16.3.1 कविता का संक्षिप्त सारांश
16.3.2 मुक्तिबोध का समय और 'अंधेरे में' की कविता
16.3.3 फेंटेसी और 'अंधरे में'
16.3.4 अंधेरे में : एक लंबी कविता
16.3.5 मध्य-वर्ग के व्यक्ति का आत्म संघर्ष
16.3.6 'अँधेरे में' का अंधकार और रक्तस्नात पुरुष
16.3.7 समीक्षात्मक अध्ययन
16.3.8 मुक्तिबोध की भाषा
16.4 पाठ सार
16.5 पाठ की उपलब्धियाँ
16.6 शब्द संपदा
16.7 परीक्षार्थ प्रश्न
16.8 पठनीय पुस्तकें

16.1 प्रस्तावना

आप गजानन माधव मुक्तिबोध (10 नवंबर, 1917-11 सितंबर, 1964) के बारे में पढ़ चुके हैं। उनकी जीवन दृष्टि और रचना प्रक्रिया से भी परिचित हैं। नाटकीयता और रहस्य के वातावरण को कविता के द्वारा प्रस्तुत करने में माहिर कवि मुक्तिबोध की कविता 'अंधेरे में' को इस इकाई में आप पढ़ेंगे। यह कविता कवि की सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना है। यह फेंटेसी पर आधारित एक लंबी कविता है। यहाँ आप इस कविता को पढ़ते हुए उसकी विशेषताओं पर विचार करेंगे। मुक्तिबोध की इस लंबी कविता से गुजरना एक काव्य यात्रा है। तरह-तरह के अनुभवों के बीच कविता कवि की न खत्म होने वाली रचनात्मकता की तलाश है। इसे कवि ने 'परम अभिव्यक्ति' का नाम दिया है। यह भी ध्यान रखेंगे कि यह कविता 50 वर्षों से अधिक समय से पढ़ी जा रही है। विद्वान इसके अनेक अर्थ लेते हैं और उनमें बहुत सा मतभेद भी देखा जाता है। आप भी जब इसे पढ़ें तो खुद भी समझने की कोशिश करें। खुद को कवि की जगह रखकर देखें। यह भी देखें कि कैसे कोई खबर या बात कविता बन जाती है और बन सकती है। इस कविता की मुँह देखी प्रशंसा करने से पहले इसको पढ़ना और समझना होगा। इस कविता को समझने के लिए आपको अपने समय की जटिल परिस्थिति को समझना होगा।

यदि यह कविता 'परम अभिव्यक्ति की खोज' है तो क्यों? इसका काव्य नायक कौन है? इसका कथ्य क्या है और उद्देश्य क्या है? क्या यह अधूरी कविता है? इस कविता की समझ विकसित करने के लिए कवि की तत्कालीन मनःस्थिति को भी समझना होगा और उसकी विचारधारा को भी जानना होगा। इस इकाई को पूर्णतः समझने के लिए इस कविता को अपने साथ रखना आवश्यक है। इसका धीरतापूर्वक पाठ करते रहना भी जरूरी होगा।

16.2 उद्देश्य

इस इकाई में आप हिंदी की श्रेष्ठ लंबी कविताओं में से एक 'अंधेरे में' का गहन आलोचनात्मक पाठ कर रहें हैं। इसके पाठ से आप -

- 'अंधेरे में' कविता के मूल कथ्य को समझ सकेंगे।
- कविता के मूल पाठ के माध्यम से कवि की मनःस्थिति को समझ सकेंगे।
- 'अंधेरे में' कविता की विवेचना और विश्लेषण कर सकेंगे।
- मुक्तिबोध की इस प्रतिनिधि कविता की विशेषताओं के आधार पर इसकी आलोचनात्मक समीक्षा लिख सकेंगे।

16.3 मूल पाठ : अंधेरे में (आलोचना)

16.3.1 कविता का संक्षिप्त सारांश

सबसे पहले इस कविता के मूल भाव को जितनी सरलता से हो सकता है, जितनी आसानी से हो सकता है, पढ़ लें। यह जो हमारी, तुम्हारी और सबकी जिंदगी है, यह बड़ी अजीब दास्तां है। कवि मुक्तिबोध ने इस जिंदगी को समझने की हमेशा कोशिश की। अपनी डायरी में लिखा, 'जिंदगी एक महाविद्यालय या विश्व विद्यालय नहीं है। यह एक प्राइमरी स्कूल है, जहाँ टाट-पट्टी पर बैठना पड़ता है। जरा सी बात पर चांटे के आघात की सारी संवेदनाएँ गालों पर झेलनी होती हैं।' इस जिंदगी की कहानी को कवि इस कविता में अपनी तरह से कहता है। वह कहता है कि यह उसकी जिंदगी है। और इस जिंदगी का अंधेरा बंद कमरा है। उस कमरे में एक आदमी घूम रहा है। थोड़ी देर के बाद वह व्यक्ति दिखाई दे जाता है। बाद में जिसकी जिंदगी बंद अंधेरा कमरा है वह इस व्यक्ति के प्रति आकर्षण महसूस करता है। लेकिन अपनी कमजोरियों से डर जाता है। जो व्यक्ति उसे दिखाई देता है, वह कहीं चला जाता है। एक जुलूस दिखाई देता है। इस जुलूस में वे सब शक्तियाँ हैं जो जन विरोधी हैं। परेशान कर रहीं हैं। शोषण कर रही हैं। उस जुलूस में शामिल लोगों को डर होता है कि इसने हमें नंगा देख लिया है और वह हमारे नंगेपन को सुबह होने पर लोगों से कह सकता है। इस व्यक्ति को पकड़ लिया जाता है। उसका सिर तोड़ा जाता है। वह व्यक्ति अपनी कमजोरियों की चर्चा करता है। वह कहता है, "मैं बड़ा कमजोर हूँ। मुझे अपनी कमजोरियों से लगाव है। मुझे अपनी असुविधाओं से लगाव है। इसलिए मैं कुछ नहीं कर सकता।" वह अपने आप से प्रश्न करने लगता है कि उसने अब तक क्या जीवन जिया है और अब तक क्या किया है। उसके बाद कहीं गोली चल जाती है। कहीं आग लग जाती है। क्रांति हो जाती है। वह व्यक्ति इस क्रांति को देखता है। उसमें शामिल होने की इच्छा होती है। उसकी

तैयारी के लिए उसे कुछ ऐसे चरित्र मिलते हैं जो इतिहास के पात्र हैं। उसको गांधी मिलते हैं। टॉलस्टाय उसको मिलते हैं। बाल गंगाधर तिलक मिलते हैं। गांधी उसे एक बच्चा दे जाते हैं। यह इस देश की जनता का प्रतीक है। वह इस देश का भविष्य है। आगे चलकर वह व्यक्ति उन लोगों को पहचान लेता है जो इस देश की क्रांति के विरोधी हैं और जिन्हें बुद्धिजीवी होने का भ्रम है। वह व्यक्ति इरादा करता है कि उसे अब तो सारी बाधाएँ, सारे गढ़, सारे मठ तोड़ने ही होंगे। इसके बाद उसे फिर वही व्यक्ति दिखाई देता है जो पहले दिखाई दिया था। लेकिन दिखाई देकर यह व्यक्ति भीड़ में खो जाता है। देखने वाला व्यक्ति उसे अपना गुरु मान लेता है।

यह कहानी इस कविता में है। कम से कम इतना तो आप शुरुआत में समझ ही लीजिए। इस कहानी को समझ लें। दूसरी बातों को बाद में इस कहानी में जोड़ लेंगे। तभी आपको यह कठिन कविता आसान लगेगी। बात कुछ ऐसी है, एक आदमी है जो अपनी जिंदगी की हकीकत को पहचानता है। अपनी कमजोरियों को जानता है। वह इस देश की आम जनता का शोषण करने वालों को पहचान लेता है। वह उन पर हमला करने की कोशिश करता है। यह कविता है जो कठिन होते हुए भी इतनी आसान है।

आप चाहें तो इस कविता को सामने रखकर उसके एक-एक चित्र को अलग-अलग देख समझ सकते हैं । यदि आप अंतिम तीन खंड भी देखें तो देख सकते हैं कि एक खंड में कवि कहता है, उसे 'तोड़ने ही होंगे मठ और गढ़ सभी'। दूसरे खंड में वह बुद्धिजीवी वर्ग की हकीकत जान जाता है, 'रक्तपायी वर्ग से नाभिनाल बद्ध ये सब लोग।' अंतिम खंड में कवि उस व्यक्ति को पकड़ने की कोशिश करता है जो शुरू में दिखाई देता है और बाद में जनता की ओर जाने की कोशिश करता है और कहता है, 'मैं उसका शिष्य हूँ / वह मेरी गुरु है।' आप इसे कठिन कविता न समझें। जटिल है, पर जीवन भी कहाँ सीधी रेखा में चलता है? यह कविता उतनी ही कठिन है जितना हमारा जीवन कठिन है और उतनी ही सरल भी है जितना सरल हमारा जीवन है, हमारे देश और समाज की परिस्थितियाँ हैं।

बोध प्रश्न

- 'मैं' और 'वह' से किस ओर संकेत है?
- कवि की प्रमुख चिंताएँ क्या हैं?

16.3.2 मुक्तिबोध का समय और 'अंधेरे में' की कविता

यदि कविता भावों का अनुवाद है तो वह कवि के जीवन और अनुभवों का निचोड़ कही जा सकती है। कविता ही कवि का परम-वक्तव्य है। कवि के व्यक्तित्व के अंदर उसके द्वारा की जा रही कल्पना, मौलिक चिंतन, आत्मा की अभिव्यक्ति, अनुभूति की पारदर्शिता और विचार तत्व आदि शामिल रहते हैं। मुक्तिबोध जटिल संवेदनाओं के कवि हैं क्योंकि उनका जीवन भी बहुत उतार चढ़ाव भरा रहा है। यह अच्छा रहेगा कि आप इनकी इस प्रतिनिधि रचना का अध्ययन करते हुए इनके जीवन और लेखन समय का ध्यान रखें। हो सके तो उसे एक बार फिर से देख लें।

मुक्तिबोध को वैसे तो लोग अब 'अंधरे में' कविता से अधिक जानते हैं। पर वे अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' के भी एक महत्वपूर्ण कवि हैं। यह कविता संग्रह 1943 में आया जिसका अर्थ है कि मुक्तिबोध स्वतंत्रता से पूर्व ही कविता लेखन में उतर गए थे। उनकी 'अंधरे में' रचना उनकी मृत्यु के पश्चात 1964 में प्रकाशित हुई। यदि आप 'तार सप्तक' की भूमिका में मुक्तिबोध का वक्तव्य पढ़ें तो अच्छा रहेगा, "मेरी हर विकास स्थिति में मुझे घोर असंतोष रहा और है। मानसिक द्वंद्व मेरे मस्तिष्क में बद्धमूल है। यह मैं निकटता से अनुभव करता हूँ कि जिस भी क्षेत्र में मैं हूँ वह स्वयं अपूर्ण है, और उसका ठीक-ठीक प्रकटीकरण भी नहीं हो पा रहा है। फलतः गुप्त अशांति मन के अंदर घर किए रहती है ।" दूसरे शब्दों में आप कह सकते हैं कि गजानन माधव मुक्तिबोध एक तो अपने समय की कविता की कमजोरियों से दुखी थे तथा दूसरी ओर वे एक बेहतर कवि बनना चाहते थे। मुक्तिबोध ने अपने मन की पीड़ा को दूर करने के लिए मार्क्सवाद की ओर झुककर देखा। वे मार्क्सवाद में गरीबों का भला देखने लगे थे। पर वे मार्क्सवादी नहीं कहे जा सकते। एक और स्थान पर मुक्तिबोध ने लिखा है, "आज का कवि एक साधारण असामान्य युग में रह रहा है। वह एक ऐसे युग में है, जहाँ मानव सभ्यता संबंधित प्रश्न महत्वपूर्ण हो उठें हैं। समाज भयानक रूप से विषमता ग्रस्त हो गया है। चारों ओर नैतिक ह्रास के दृश्य दिखाई देते हैं। नोच-खसोट, अवसाद, भ्रष्टाचार का बाजार गर्म है। कल के मसीहा आज के उत्पीड़क हो उठें हैं। मानव संबंध टूट फूट गए हैं। समाज में शोषकों और उत्पीड़कों और उनके साथियों का ज़ोर बढ़ रहा है।" आप देख सकते हैं कि कवि अपनी कविताओं द्वारा अपने जैसे आम इंसान या विशेषकर मध्यवर्गीय व्यक्ति के मन की चिंता को व्यक्त करना चाहते हैं। 'अंधेरे में', डॉ. नरेंद्र मोहन के शब्दों में, 'पोयम इनक्लूडिंग हिस्ट्री' है और तथ्यों, घटनाओं या आकड़ों के रूप में यहाँ आत्मिक स्मृतियाँ ऐतिहासिक स्मृतियों में गुंथ गई हैं ।

जैसा कहा गया कि मुक्तिबोध की यह रचना उनके जीवन काल में प्रकाशित नहीं हुई थी। हाँ, वे इस रचना को प्रकाशन के लिए भेज चुके थे और अपने मित्रों को सुनाकर उनकी राय से प्रसन्न ही हुए थे। इनका संपूर्ण काव्य 'मुक्तिबोध रचनावली' के 6 खंडों में 1980 में प्रकाशित हुआ था। एक दूसरा काव्य संग्रह भी है जिसका नाम भी आपको अजीब लगेगा। यह कविता संग्रह 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' है। इसमें 28 कविताएँ हैं जिसमें से एक 'अंधरे में' है। ये सारी कविताएँ कवि का जीवन-वृतांत है ।

आपको पहले यह जान लेना चाहिए कि इस कविता के रचनाकार गजानन माधव मुक्तिबोध मध्य प्रदेश के निवासी थे और इस कविता का लेखन लगभग 50 वर्ष पहले हुआ था। तब मुक्तिबोध नागपुर में रहते थे। वहाँ शुक्रवारी में तिलक की मूर्ति के पास की गली में वे रहा करते थे। एक बार एक्सप्रेस मिल के मजदूरों पर जब गोली चली तब वे घटनास्थल पर मौजूद थे। उन्होंने वहाँ हिंसा और रक्तपात देखा तो इतने विचलित हुए कि कुछ ही समय बाद यह कविता लिखकर उन्होंने पहले तो अपने मित्रों को सुनाई और फिर प्रकाशन के लिए हैदराबाद की 'कल्पना' नामक मासिक पत्रिका को भेज दी। मुक्तिबोध की यह प्रसिद्ध कविता 'अँधेरे में' 1957 से 1962 के बीच लिखी गई थी। 'मुक्तिबोध रचनावली' के संपादक नेमिचंद्र जैन के अनुसार

1962 में मुक्तिबोध ने इस कविता में अंतिम संशोधन किया था। 1964 के 'कल्पना' के नवंबर अंक में यह कविता 'आशंका के द्वीप: अँधेरे में' शीर्षक से प्रकाशित हुई। बाद में केवल 'अँधेरे में' नाम से इसे 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' में शामिल किया गया। यदि इन पचास वर्षों की यात्रा से पूर्व यह देखा जाए कि 'अँधेरे में' एक प्रदीर्घ कविता है जिसका आयाम बेहद विस्तृत है। 1291 पंक्तियों की यह कविता 8 खंडों में विभाजित है। यह स्वाभाविक है कि संरचनात्मक जटिलता के कारण इस कविता के कई पाठ या अर्थ भी बनते हैं। सन उन्नीस सौ तिरसठ में आग्न्येश्का सोनी को एक पत्र में मुक्तिबोध ने लिखा था कि उनकी इस कविता में एक आशंका है, अँधेरी आशंका का वातावरण, हमारे देश में कहीं ऐसा न हो।

'अँधेरे में' गजानन माधव मुक्तिबोध द्वारा आधी शताब्दी पहले लिखी गई एक लंबी कविता है। पिछले पचास सालों में आपातकाल, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, उस पर सेंसरशिप, जगह-जगह दंगें, आगजनी, फासिस्ट शक्तियों का होता विस्तार और इस सबसे त्रस्त आम जन की दिन-दिन बढ़ती बदहाली की गूँज 'अँधेरे में' कविता में बराबर सुनाई देती है। इन स्थितियों ने ही इस कविता को कभी इतिहास नहीं बनने दिया बल्कि यह वर्तमान को भी भेदती हुई भविष्य बयाँ करती कविता है। कविता में आज के मनुष्य की बदहवासी और निरुपायता को स्पष्ट रूप से महसूसा जा सकता है। 'अंधेरे में' एक ऐसी लंबी कविता है जो अपना प्रतिमान स्वयं है। यह न तो किसी पूर्व कथा पर आधारित है, न केवल अपने जीवन के ऊहापोह से गुजरती है। यह एक ऐसी कथा है जो खुद सामाजिक संदर्भों से कथा गढ़ती है। आत्मसंघर्ष और सामाजिक संघर्ष के सूत्र इस कविता में एक साथ जुड़ गए हैं और कविता को जटिल, गहरी और बहुआयामी बनाते हैं। इस कविता को समझने के लिए आप यह सूत्र साथ रख सकते हैं- 'अँधेरी आशंका का वातावरण' क्या आज भी आपको कहीं दिखाई देता है, विचार करें। क्या आपको इस कविता में रहस्य और नाटकीयता का वातावरण दिखाई देता है?

'अंधेरे में' गजानन माधव मुक्तिबोध द्वारा रचित एक लंबी कविता है। यह कविता आज भी पाठकों और आलोचकों के लिए चुनौती है। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है' काव्य संग्रह में संकलित इस आखिरी कविता को अपनी-अपनी दृष्टि से पहचानने की कोशिश आलोचकों ने की है। अनेक आलोचकों व गंभीर पाठकों ने मुक्तिबोध की इस कविता - महाकाव्यात्मक लंबी कविता में अनेक अर्थ पाए हैं। मैनेजर पांडेय इसे 'समग्र कविता' कहते हैं तो कवि मंगलेश डबराल इसे 'सामूहिक यातना और कष्टों की कविता' मानते हैं। अशोक वाजपेयी, कविता के प्रारंभिक श्रोताओं में से एक, ने इसमें 'आपातकाल' का पूर्वाभास पाया। रामविलास शर्मा को इसमें 'एक ओर विकृत मनोचेतना के रहस्यवाद का प्रभाव' दिखाई दिया, दूसरी ओर सात्र के खंडित व्यक्तित्व के अस्तित्ववाद का । नामवर सिंह के लिए कविता भाषिक एवं साहित्यवादी अस्मिता की खोज है और शमशेर बहादुर सिंह के लिए देश के आधुनिक जन इतिहास का स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात का एक दहकता इस्पाती दस्तावेज। कोई इसमें 'लंदन की रात' देखता है और कोई 'जापानी फिल्म का जंगल' और कोई खंडित 'रामायण'। कोई इसे टी.एस. एलियट की 'द वेस्ट लैंड' से मिलाकर देखता है और कोई जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' से। कोई इंद्रनाथ मदान की

तरह कहता है कि यह कविता पूरी होना नहीं चाहती, किनारे लगना नहीं चाहती। राजेश जोशी इसमें उत्तर औपनिवेशिक विमर्श देखते हैं और प्रभाकर माचवे इसमें 'गुएर्निका इन वर्स'। चित्रकार अशोक कौशिक लिखते हैं कि जिस तरह गुएर्निका को समझने के लिए चित्रकला की परंपरागत कसौटियाँ अक्षम थीं उसी तरह का मामला 'अंधेरे में' कविता के साथ है। विश्वनाथ त्रिपाठी इस कविता में संवेदनाओं का सर्वाधिक सार्थक रचनात्मक काव्य उपयोग पाते हैं, और रामस्वरूप चतुर्वेदी के लिए 'अँधेरे में' से गुजरना एक काव्य यात्रा है। नंदकिशोर नवल की दृष्टि में यह कविता वस्तुतः लहरीली थाहोंवाली नीली झील में कांपता एक अरुण कमल है यानी फासीजम के विरुद्ध लिखी गई एक क्रांतिकारी कविता। इस कविता और मुक्तिबोध की अन्य कविताओं में अंतर्सूत्र खोजते विष्णु खरे जहाँ यह कहते हैं कि इस कविता में मुक्तिबोध एक 'समिंग अप' कर रहे थे वहीं आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'समिंग अप' की मुद्रा में कहा था - 'मुक्तिबोध जीवन भर एक ही कविता लिखते रहे, 'अँधेरे में' उसका अंतिम पाठांतर है।'

मुक्तिबोध ने छायावाद की सीमाएं लांघकर, प्रगतिवाद से मार्क्सवादी दर्शन लेकर, प्रयोगवाद के अधिकांश हथियार संभालकर सब वादों और पार्टियों से ऊपर उठकर एक स्वतंत्र कवि के रूप में मानवतावादी भावना को आगे बढ़ाया। "यह कविता देश के आधुनिक जन-इतिहास का एक दस्तावेज है और इसमें अजब और अद्‌भुत रूप से व्यक्ति और जन का एकीकरण है।" आलोचक और कवि शमशेर बहादुर सिंह के इन शब्दों में एक चुनौती भी है कि पाठक को कविता के बिंब और संकेतों आदि को समझना चाहिए।

बोध प्रश्न

- मुक्तिबोध की इस कविता-रचना की पृष्ठभूमि क्या है?
- अनेक कवि और आलोचक इस कविता के बारे में जो कहते हैं, उसमें अपना विचार जोड़कर लिखें?

16.3.3 फेंटेसी और 'अंधरे में'

'अंधेरे में' मुक्तिबोध के लिए और मुक्तिबोध का चलाया हुआ मुहावरा है। यह उस जटिलता को अभिव्यक्त करता है जिसे कवि कठिनाई से कह पाता है। यह शब्द कवि की आकांक्षा, कुंठा और व्यथा को वाणी दे सका है। यह एक ऐसी फेंटेसी भी निर्मित करता है जिसमें कल्पना की विचित्रता, भूत-प्रेत-जादू-टोना, रहस्य और भय आदि का चित्रण होता है। उदाहरण देखें - तिलिस्मी खोह का शिला द्वार, खुलता है धड़ से ... 'अँधेरे में' कविता का आरंभ बहुत नाटकीय और रहस्यपूर्ण ढंग से फेंटेसी के सहारे होता है। कवि का 'मैं' "जिंदगी के कमरों में अंधेरे में लगाता है चक्कर"।

'अंधेरे में' एक फेंटेसी है। फेंटेसी का शाब्दिक अर्थ 'अति कल्पना' है। आप इसे ख्यालों के पुलाव पकाना या घोड़े दौड़ाना भी कह सकते हैं। मुक्तिबोध की कविता का यह प्रमुख लक्षण

और गुण है। वे कल्पना को या अति-कल्पना को मानसिक स्तर से बौद्धिक स्तर तक ले जाकर अपने पाठक को डाल देते हैं। यह कविता आशंकाओं और जनाकांक्षाओं, स्वप्नों और संभावनाओं से बुनी गई एक विराट स्वप्न फैंटेसी है।यह कविता कल्पना और यथार्थ का मेल करके लिखी गई है। इस मेल को फेंटसी कहते हैं।

यह कविता परम अभिव्यक्ति की खोज में एक फेंटेसी (कल्पित कथा) बुनती है। यह कविता एक ऐसे अँधेरे की पड़ताल करती है जो देश की स्वतंत्रता के बाद की सामाजिक व्यवस्था के कारण देश भर में फैला है। इस कविता की फेंटेसी जटिल है क्योंकि इसमें एक स्वप्न टूट जाने के बाद दूसरा स्वप्न शुरू होता है। स्वप्न के भीतर स्वप्न चलता है और इसका जागरण भी भ्रम है। यह जटिल है क्योंकि इसकी फेंटेसी तीन बातों पर केंद्रित है - फ़ासिज़्म की आशंका, काव्य नायक का आत्मालोचन और आत्मसंघर्ष।

यह फेंटेसी की ही ताकत है कि अनेक तरह के चमत्कार इस कविता में दिखाए जाते हैं और कहीं न कहीं उन पर विश्वास होता चलता है। जो कुछ अविश्वनीय लगता है, उसे भी कल का सत्य मानकर पढ़ने का मन होता है। मुक्तिबोध का कहना ही है, 'मैं विचरण करता हूँ एक फेंटेसी में / यह निश्चित है कि फेंटेसी कल वास्तव होगी।'

मुक्तिबोध के यहाँ इस फेंटेसी के अनेक पक्ष और आयाम हैं। मुक्तिबोध की काव्य संरचना फेंटेसी शिल्प में ही अभिव्यक्त होती है। 'अंधेरे में' कविता को ही देखें तो फेंटेसी अपने क्रम में सदा एक सी नहीं रहती। पहले इस बारे में अशोक चक्रधर के वक्तव्य को देखें, 'पहले वे कविता में फेंटेसी के माध्यम से एक वातावरण बनाते हैं, वस्तुस्थिति को रूपायित करते हैं, यहाँ बिंबों की बहुलता एवं वर्णनाधिक्य होता है। तदनंतर कविता में कर्ता उभरता है। कर्ता कवितागत वस्तुगत यथार्थ से परिचय करता या कराता है। कवितागत वस्तु-यथार्थ और कर्ता-पक्ष में प्रतिक्रियाएँ होती हैं और एक कथ्य सामने आने लगता है। प्रतीक और प्रतीकाभासों से कविता के अर्थ खुलने लगते हैं। यहीं पर कविता की स्थितियों पर कवि द्वारा बाहर से दिए गए वक्तव्य दिखाई देते हैं एवं फेंटेसी का वही क्रम आरंभ होने लगता है। कथ्य जहाँ पूरा होने लगता है, कविता समाप्त हो जाती है।'

वे अपनी कल्पना के लोक का निर्माण करने के लिए कुछ टोटके और शब्दों का निरंतर प्रयोग करते हैं। कुछ शब्द जो एकदम आपके सामने आ जाते हैं, वे हैं, तहखाने, एटम बम, गुंबद, नक्शे, वीराने, हड्डियाँ और कंकाल आदि। वे बाहरी जगत से कुछ शब्दों और परिस्थितियों को उठाकर हमें एक ऐसी अंधेरी गुफा में ले जाते हैं कि इन शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। चीर परिचित शब्दों से अपरिचित माहौल का विस्तार पाठक को एक ऐसी फेंटसी में ले जाता है जिसका आर-पार नहीं होता। मुक्तिबोध फेंटसी से बचना नहीं चाहते। वे उसके प्रति आकर्षित रहते हैं और कुछ इस प्रकार कहते हैं, 'दूर जंगल के गुमनाम खड्डे में या किसी वीरान टावर की अंधेरी भीतरी गोलाइयों के बीच में पुराने रोशनीघर की भीतरी मीनार में प्रवेश करने के पीछे फेंटसी का ही आकर्षण है।

जिस प्रकार जॉर्ज ऑरवेल की रचना 1984 में फेंटेसी के सहारे एक ऐसे भविष्य की झांकी दिखाई गई थी जिसमें फ़ासिज़्म होगा, उसी प्रकार इस कविता में कवि को यही आशंका है कि कहीं ऐसा न हो जाए। आपको इस कविता को पढ़ते समय खुद यह निर्णय लेना होगा कि कवि का वह दुःस्वप्न कहीं साकार तो नहीं हो रहा।

बोध प्रश्न

- फेंटेसी के रूप में 'अंधेरे में' का विश्लेषण कीजिए।

16.3.4 अंधेरे में : एक लंबी कविता

हिंदी की कई लंबी कविताओं (असाध्य वीणा, राम की शक्तिपूजा, पटकथा और मुक्तिप्रसंग आदि) में से एक 'अंधेरे में' का अपना ऐतिहासिक महत्व है। सबसे पहले तो लंबी कविता के गठन को देखें। अनेक प्रसंगों और वर्णन चित्रों के कारण लंबी कविता लिखना आसान नहीं होता। लंबी कविताओं की संरचना एपिक फॉर्म की संरचना होती है। इसमें इतिहास होता है और होता है प्रतीक, मिथक और बिंबों का समूह। आप के लिए पहले यह जानना जरूरी होगा कि लंबी कविता आखिर क्या होती है। नरेंद्र मोहन लंबी कविता की छोटी पर पूर्ण परिभाषा देते हुए कहते हैं, "विभिन्न मनोदशाओं और संदर्भों से जुड़े दीर्घकालिक तनाव से स्पंदित कविता जिसमें नाटकीयता रहती है उसे लंबी कविता कहते हैं।" कविता की लंबाई तो किसी कविता को लंबी कविता बनती ही है, पर यही एक गुण नहीं हो सकता। लंबी कविता लंबी तो होगी ही पर वह कई छोटी कविताओं का विस्तार नहीं हो सकती। लंबी कविता यहाँ बड़ी के अर्थ में नहीं। बड़ी तो छोटी-लंबी, दोनों प्रकार की कविताएँ हो सकती हैं। कई आलोचकों, जैसे कॉडवेल की मान्यता है कि महान कविताएँ लंबी ही होती हैं। छोटी कविता मूलतः प्रगीत कविता है, जबकि लंबी कविता नाटकीय कविता है। लंबी कविताएँ ऐसी प्रबंधात्मक रचनाएँ होती हैं जो न महाकाव्य की श्रेणी में आती हैं और न खंड काव्य की। मुक्तिबोध की अनेक कविताएँ ऐसी ही हैं। मुक्तिबोध के अनुसार कविता 'परम स्वाधीन' और 'कालयात्री' रचना है। अतः उसका अंत कवि के द्वारा संभव नहीं। जीवन यथार्थ के समानांतर लंबी कविता असमाप्त समाप्ति पर कहीं भी रुक जाती है। मुक्तिबोध ने अपनी डायरी में लिखा था कि वे छोटी कविताएँ नहीं लिख पाते, क्योंकि जो छोटी होती हैं वे वस्तुतः छोटी न होकर अधूरी होती हैं। "नहीं होती, कहीं भी खत्म कविता नहीं होती" कहकर मुक्तिबोध ने मानो लंबी कविता के पक्ष में अपना मत दिया है।

लंबी कविता के लिए जिस 'दीर्घकालिक सर्जनात्मक तनाव' की जरूरत होती है, वह इस कविता में बखूबी दिखाई देता है। नाटकीयता के साथ-साथ कवि-व्यक्तित्व की विविध मनोदशाओं का चित्रण भी इस कविता में होते चलता है। कविता का आरंभ जिंदगी के अंधेरे कमरों से होता है। इन कमरों में कोई प्रकाशमय व्यक्तित्व टहलता है। यह अंधेरा सामाजिक विसंगति और विरूपता का है। यह अंधेरा कवि के अवचेतन मन का है। यह प्रकाशमय व्यक्तित्व सामाजिक मूल्य और रचना धर्मिता का प्रतीक है। कवि की चरम या परम अभिव्यक्ति का प्रतीक भी है। यहाँ एक मोड आता है। इस अजीब मोड से कमरे का अंधेरा विश्व में फैला दिखाई देता

है। कविता के प्रत्येक खंड में वह प्रकाश पुरुष आता जाता रहता है। कभी दिखाई देता है और कभी नज़र से ओझल हो जाता है । वह कभी भी आ जाता है। अंधरे और उजाले के तनाव की इस यात्रा में एक स्वप्न लगातार आता है। एक फेंटेसी लगातार छाती है। कई महापुरुष आते जाते हैं। अंधरे में जुलूस भी दिखाई देता है जिसमें तिलक, गांधी, टालस्टाय आदि महापुरुष आते हैं। वास्तव में यह जुलूस शहर के अवचेतन से उपजा हुआ उसी का विसंगतिग्रस्त रूप है। इस जुलूस में शहर के अनेक धनी मानी व्यक्ति-मंत्री, कवि, उद्योगपति और यहाँ तक कि डाकू भी हैं । ये सब अपने असली रूप में हैं। इनके असली रूप को देखने वालों की हत्या कर दी जाती है। अगले दिन सुबह होने ही वाली है कि जन क्रांति के दमन के लिए मरहस्न लगा दिया जाता है। कवि जान बचाकर भागता है । दृश्य बदलता है और बंदूकें गरजती हैं। कवि भागकर एक गुफा में जा चिपटा है। कवि के मन में दर है। तभी वहाँ फिर प्रकाश पुरुष आता है। यह गुफा उसका अवचेतन मन है। तभी उसे बोरा औढ़े जनता के प्रतीक गांधी दिखाई देते हैं। गांधी की बांह में एक बच्चा है। बच्चा देश का भविष्य है। यकायक बच्चा गायब हो जाता है। उसकी जगह कुछ फूल आ जाते हैं और फिर अचानक वे फूल बंदूक में बदल जाते हैं। इस बंदूक को आप जनता की विद्रोह शक्ति और आंदोलन का प्रतीक कह सकते हैं। यह सत्ता की बंदूक भी है। इस परिवेश में एक कलाकार मरा हुआ है, मरा नहीं बल्कि मारा गया है। यह कलाकार का परिचित है। परिचित क्या वह स्वयं है। कवि को भय है। वह अपने सहचरों की तलाश में इधर उधर दौड़ता है। वह कुछ लोगों से घिर जाता है। वे उसे यातना देते हैं। उसकी तलाशी लेते हैं। उसकी तलाशी में जो खतरनाक चीज़ मिलती है वह है उसके विचार। इन विचारों की सेक्रेटरी है आस्था और सरगना है आत्मा। कवि की आस्था और आत्मा को निकालकर उसे विचारशून्य करने का प्रयास होता है। कवि को लगता है कि ऐसी विकट परिस्थिति में उसे अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाने ही होंगे। तभी वह आत्मसाक्षात्कार कुसके विचार बहुत तीव्र गति से एक दूसरे से टकरा रहें हैं। वह महसूस करता है कि कहीं गोली चली और कहीं आग लगी है। फिर उसका यह स्वप्न टूटता है। और उसे वही व्यक्ति दिखाई देता है। वह कवि की अपनी आंखोजी समृद्धि का परम उत्कर्ष है। कवि उसका शिष्य है। वह उससे बार-बार आलोक प्राप्त करता है। पर उससे रु-ब-रु नहीं हो पाता। वह सोचता रहता है। क्या उसका यह आत्म-संघर्ष सदा चलता रहेगा?

इसीलिए मैं हर गली में
और हर सड़क पर
झांक झांक देखता हूँ एक चेहरा
प्रत्येक गतिविधि
प्रत्येक चरित्र
व हर एक आत्मा का इतिहास

बोध प्रश्न

- लंबी कविता के रूप में 'अंधरे में' की समीक्षा कीजिए।
- अभिव्यक्ति के ख़तरों से आप क्या समझते हैं?

16.3.5 मध्य-वर्ग के व्यक्ति का आत्म संघर्ष

अंधरे में कविता में मध्यम-वर्ग के व्यक्ति का जो आत्म संघर्ष है वह इस कविता की हर पंक्ति में है। आदमी एक ओर तो समाज की व्यवस्था और उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष करना चाहता है दूसरी ओर वह अपनी आराम तलब जिंदगी को भी नहीं छोड़ना चाहता। वह अपने उस पुरुष की तरह बनना चाहता है पर हिम्मत नहीं जुटा पाता। अंधरे में कविता का यही सारांश है, यही कहना है कि हमारे समाज में एक आम आदमी के मन में सदा यह कशमकश चलती रही है। वह आदर्श और यथार्थ की बीच गोते खाता रहता है। वह इनके बीच संतुलन करने में ही लगा रहता है। वह सब कुछ पाना चाहता है। वह एक परछाई की ओर दौड़ता रहता है। यही उसकी अपनी परछाई ही तो 'रक्तालोक-स्नात-पुरुष' है। वह रहस्यमय व्यक्ति और कोई नहीं कवि की 'अब तक न पाई गई अभिव्यक्ति है।' यदि आदमी को अपनी यह परम अभिव्यक्ति मिल जाती है तो समाज में फैला हुआ अंधेरा दूर हो जाएगा। इस कविता के माध्यम से कवि मुक्तिबोध कह रहें हैं कि मनुष्य की पूर्ण संभावनाएं तभी प्रकट होंगी जब कविता सामाजिकता को ग्रहण कर ले और समाज, कविता या कला को स्वीकार कर ले।

कविता में जो अंधेरा है वह एक तो समाज में फैला हुआ अव्यवस्था का अंधकार है। दूसरे यह अंधेरा कवि के मन में छाई हुई नासमझी है जो कविता लिखने से पहले उसे अस्त व्यस्त करती है। कविता में कवि का 'मैं' और उस अज्ञात पुरुष का 'वह' आपस में एक दूसरे के आमने सामने आते हैं। पर 'मैं' और 'वह' के बीच अंधेरा है। कहा जा सकता है कि मुक्तिबोध को जो आशंका है और जिसके द्वीप उसे दिखाई पड़े थे वे पूरी तरह से समाप्त नहीं होते। कवि का संशय लगातार बना रहता है। कविता के लंबे-लंबे आठ खंडों में कवि की समस्या है - समाज की उथल पुथल के बीच अपनी रचना की प्रेरणा की पहचान। वे 'हर गली में', 'हर सड़क पर' और 'हर एक चेहरे में' झांक कर देखते हैं।

बोध प्रश्न

- 'अंधरे में' के अंधरे से आप क्या समझते हैं?
- कवि क्या खोज रहे हैं?

16.3.6 'अँधेरे में' का अंधकार और रक्तस्नात पुरुष

इस कविता में जो अँधेरा है, अँधेरे का जो वर्णन है, वह एक तो उनके चारों ओर फैला अँधेरा है, दूसरे उसके कारण उनका कवि-मन सदा आतंकित करता रहता है। वे इस रहस्यपूर्ण अंधकार में भटकते रहते हैं। इससे बाहर निकलने की कोशिश में लगे रहते हैं। यह कविता मनुष्य द्वारा अंधकार में उजाला खोजने की चिंता, इच्छा और प्रयत्न को प्रस्तुत करती है। कविता अंधकार में भटकते लोगों को जीवन का परम तत्व खुद ही खोज लेने की प्रेरणा देती है। कविता का "मैं" अर्थात काव्य नायक कवि स्वयं है, पर वास्तव में वह "भारत" है। आम हिंदुस्तानी है जो बेचैन, परेशान और चिंतित है। देश की आजादी के बाद के एक आम हिंदुस्तानी की परेशानियों

से भरा यह "मैं" है। उसका शरीर घायल है। उसकी आत्मा दुखी है। उसके चेहरे पर बँटवारे का दर्द है। वह तन और मन का दुखी इंसान अंधेरे में चक्कर लगाता घूमता फिर रहा है। वह दीवारों पर अपना पूरा इतिहास लिखता चला जाता है। नामवर सिंह भी यह कहते हैं कि यह काव्य नायक मुक्तिबोध का प्रतिरूप नहीं है और न इसे मुक्तिबोध समझने का भ्रम ही होना चाहिए। यह कवि की काव्य सृष्टि है - बल्कि काव्य सृष्टियों में से एक। इस चरित्र को प्रबुद्ध, प्रेरित और सक्रिय करके उसकी आस्था को दृढ़ करने के लिए ही मुक्तिबोध ने यह आत्मपरक ढंग अपनाया है। वे 'मैं' के द्वारा अपने पूरे वर्ग-मध्य वर्ग की आत्मभर्त्सना करते हैं। कवि मुक्तिबोध ने इस व्यक्ति के विचारों को कविता के रूप में प्रस्तुत किया है। यह प्रस्तुति या अभिव्यक्ति एक लंबी रहस्यमयी कविता के रूप में धीरे-धीरे अपने पाठकों पर प्रभाव डालती है। पाठक प्रभावित होकर समझने लगता है कि यहाँ अभिव्यक्ति के दो अर्थ हैं - एक तो कविता और दूसरे एक रहस्यपूर्ण व्यक्ति।

यह 'रक्तालोकस्नात पुरुष' इस काव्य नायक के अलावा एक दूसरा चरित्र है। कविता की शुरुआत उसी के वर्णन से ही तो होती है। वह ही तो लगातार काव्य-नायक की जिंदगी के अंधेरे कमरों में चक्कर लगता रहता है, जैसे किसी तिलिस्मी खोह में गिरफ्तार हो। काव्य नायक परेशान है और जानना चाहता है कि यह पुरुष कौन है। उसकी परेशानी का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वह उसकी उपस्थिति को अपनी जिंदगी के अँधेरे कमरों में ही नहीं महसूस करता बाहर भी करता है। क्या यह पुरुष 'वह' है जो 'मैं' का ही प्रतिरूप है? क्या 'वह' 'मैं' की अस्मिता है? क्या 'वह' कोई अलौकिक पुरुष है या वह मजदूर है और मजदूरों की संगठित शक्ति तथा सर्वहारा चेतना का प्रतीक है। बहुत से प्रश्न हैं जो इस कविता के पाठ से नहीं बल्कि उस पर विचार करते हुए स्पष्ट होते हैं। नन्द किशोर नवल ने मुक्तिबोध की कविता के इस पुरुष को 'मजदूर' माना है और तर्क दिया है कि यह बिलकुल स्वाभाविक था कि उनकी कविता का नायक, जो कि मध्य वर्गीय सचेत बुद्धि जीवी है, फासिस्ट हुकूमत के काल में उसकी सबसे प्रबल विरोधी शाकित मजदूर-वर्ग को पहचान कर उससे एकता स्थापित करने के लिए बेचैन हो उठे और सर्वहारा चेतना को आत्मसात कर अपने व्यक्तित्व को बदल डालना चाहे। स्पष्ट है कि यह काव्य नायक एक आत्म संघर्षरत चरित्र है, न व्यक्तित्व विभाजित और न आत्म निर्वासित। यह पुरुष हो न हो सर्वहारा चेतना का प्रतीक है।

'अंधेरे में' कविता में शुरुआत में ही पहाड़ी के उस पार अंधेरे वातावरण में शांत शीतल जल में कोई छाया सी उभरती है। तिलिस्मी खोह का दरवाजा खुलता है और उसमें से निकलता एक रहस्यमय पुरुष है। उसे देखकर कवि को लगता है कि यह फटेहाल, घायल, भयावह, विपन्न और लगातार मुस्कान बिखेरता पुरुष उसकी परम और अव्यक्त अभिव्यक्ति है। उसे देखकर कवि अचेतन स्थिति में चला जाता है। वह खुद को अशक्त और कमजोर पाता है। वह अपने उस "प्रिय" से कतराता है। वह उसके पीछे पीछे पर्वत और गुफाओं को पारकर शिखरों पर जाने से घबराता है। वह अपनी परेशानियों और दुख-दर्द के साथ अपने उसी गड्ढे में पड़ा रहना चाहता है। दूसरे शब्दों में कविता के माध्यम से कवि भारत भर के आम आदमियों की सामाजिक स्थिति

पर चिंता प्रकट करता है। संघर्ष और क्रांति के द्वारा वह अपनी और उनकी स्थिति में बदलाव करना चाहता है। उसने यह संकल्प लिया कि वह उन सभी मठों और गढ़ों को तोड़ डालेगा। वह अपनी अभिव्यक्ति को अंधेरे से बाहर लाकर रहेगा। अंततः वह यह कर भी पाता है। वह अपने ख्यालों से निकलकर क्रांति के लिए बाहर निकल आए लोगों के समूह में जब इस अभिव्यक्ति को जाकर उनमें घुलते मिलते एकाकार होते देखता है तो उसे संतोष होता है। जन-कवि कविता के शिल्प में अपनी अभिव्यक्ति को जन रव में मिलते देख कविता की सार्थकता पर संतोष व्यक्त करता है।

बोध प्रश्न

- 'रक्तालोकस्नात पुरुष' कौन है?
- कवि उससे भयभीत क्यों है?

16.3.7 समीक्षात्मक अध्ययन

जैसा आपने पढ़ा कि इस कविता का पहला शीर्षक था "आशंका के द्वीप : अंधरे में"। कवि को एक रात अँधेरे में आशंका के द्वीप दिखाई देते हैं। यह आशंका या डर देश में फासिस्ट हुकूमत कायम होने की है। इस तरह यह मूल शीर्षक कविता को बेहतर ढंग से अभिव्यक्त करता था। कवि ने खुद कहा था, उसमें एक आशंका है, अंधेरी आशंका का वातावरण है - कहीं हमारे भारत में ऐसा-वैसा न हो।"

इस कविता का नायक कौन है? कोई कहता है कि इस कविता का नायक स्वयं कवि है। मुक्तिबोध हैं। कहते हैं कि कवि मुक्तिबोध सीजोफ्रेनिया नामक एक मानसिक रोग से ग्रस्त थे। इसका एक लक्षण विभाजित व्यक्तित्व है। 'अंधेरे में' कविता के काव्य नायक का आत्म संघर्ष इस विभाजित व्यक्तित्व का ही परिणाम है। यदि हम राम विलास शर्मा के इस विचार को न मानें कि मुक्तिबोध विभाजित व्यक्तित्व का शिकार थे और यह मानें कि इस कविता का काव्य नायक इस देश का मध्यम वर्गीय बुद्धिजीवी युवक है। या इस वर्ग का प्रतिनिधि है। उसे देश की दशा का पता है। वह देश के सामने खड़ी चुनौतियों का सामना करने को तैयार है। वह अपना रास्ता खुद खोज लेता है। जैसे जैसे समाज में वर्ग-संघर्ष बढ़ता जाता है, सचेत मध्यवर्गीय बुद्धि जीवी का आत्म संघर्ष भी बढ़ता है क्योंकि उसी अनुपात में उसका दायित्व बोध गहन होता जाता है। तो इस कविता का एक भिन्न पाठ सामने आता है। 'अंधरे में' का काव्य-नायक स्वयं कहता है, "जितना ही तीव्र है द्वंद क्रियाओं घटनाओं का / बाहरी दुनिया में / चलता है कि द्वंद की /फिक्र से फिक्र लगी हुई है।"

इसी तरह कविता में प्रकट हुआ 'रक्तालोकस्नात पुरुष' रहस्यमय सत्ता है। जिसकी खोज कवि कर रहें हैं वह उनकी संभावनाओं, निहित प्रभावों, प्रतिभाओं की परम आवस्था है। 'मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव है'। यह पुरुष कवि की खोई हुई अस्मिता है जिसकी खोज में वह लगा है। काव्य नायक आत्म निर्वासन का शिकार है और वह अपनी 'अस्मिता' को खोज रहा है। डॉ

नामवर सिंह का मत है कि अँधेरे में का काव्य नायक आत्म निर्वासन का शिकार है, रक्तालोकस्नात पुरुष खोई कोई हुई अस्मिता है, जिसकी खोज में वह लगा है। इस तरह दोनों एक ही हैं।

'अंधेरे में : परम अभिव्यक्ति की खोज' नामक निबंध में नामवर सिंह इस कविता की अंतिम पंक्तियों का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए लिखते हैं, "निस्संदेह इस कविता का मूल उद्देश्य है अस्मिता की खोज, किंतु कुछ अन्य व्यक्तिवादी कवियों की तरह इस खोज में किसी प्रकार की आध्यात्मिकता या रहस्यवाद नहीं, बल्कि सड़ी गली गतिविधि राजनीतिक परिस्थिति और अनेक मानव-चरित्रों की आत्मा के इतिहास का वास्तविक परिवेश है। आज के व्यापक सामाजिक संदर्भों में जीने वाले व्यक्ति के माध्यम से ही मुक्तिबोध ने 'अँधेरे में' कविता में अस्मिता की खोज को नाटकीय रूप दिया है।"

अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे
तोड़ने ही होंगे मठ और गढ़ सब

इन पंक्तियों में जिस अभिव्यक्ति के खतरे उठाने की बात कही गई है, वह केवल शब्दों की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि कर्म की भी अभिव्यक्ति है। यहाँ अभिव्यक्ति से अभिप्राय कविता भी है और क्रांति भी।

बोध प्रश्न

- इस कविता का नायक कौन है, उसका रक्तालोकस्नात पुरुष से क्या संबंध है?
- अस्मिता की खोज क्या है और क्यों आवश्यक है?

16.3.8 मुक्तिबोध की भाषा

डॉ केदारनाथ सिंह के शब्दों में, 'मुक्तिबोध की कविताएँ अपने समय के जीवित इतिहास को कविता में बदलने का कठिन चुनौती का सामना करने वाली कविताएँ हैं। इसलिए वे स्मृतिगर्भा भाषा का प्रयोग करते हैं। 'निश्चय ही 'अंधेरे में' की भाषा जटिल और कठिन है, स्मृति-गर्भा है। आत्मालाप शैली में लिखी गई यह कविता इस प्रकार की है जैसे कवि ने उसी क्रम से लिख दिया है जिस क्रम से उसके विचार उठे थे। अभिव्यक्ति के खतरे उठाते हुए वे लिखते हैं। उनकी भाषा में इसलिए खुरदरापन और अनगढ़ता रह गई है। नए-नए शब्दों, विस्तृत अनुभव जगत के शब्दों से कविता बनी है। वाक्यों की तोड़ मरोड़, नए चित्रों की सर्जना, प्रतीकों-उपमानों की भरमार, छंद, लय, अलंकार, सौंदर्य तत्व आदि के प्रयोग में मुक्तिबोध अलग-थलग दिखाई देते हैं। उनकी कविता में भाषा का एक जंगल है, करीने से तराशा हुआ बाग नहीं।

मुक्तिबोध की कविताएँ विशिष्ट भाषा संस्कृति को प्रस्तुत करने वाली हैं। इस भाषा में जब शब्द बदलता है तो 'रक्तिम' से 'रक्ताल', 'अँधियारे' से 'अंधियाला', 'रुग्ण' से 'रोगीला' और

'अचानक' से 'अचक' हो जाता है। हिन्दी, उर्दू, अँग्रेजी, मराठी, गुजराती, सभी भाषाओं से कवि शब्द लेते हैं। वे शोधक, सेक्रेटरी, मुकाम, चिकित्सक, बावड़ी, नक्शे और कंदील जैसे तमाम शब्दों का प्रयोग करते हैं। वे बड़बड़ाहट, छटपटाहट, धाँय-धाँय, सरसर, थू-थू, पिचपिच जैसे शब्द लेकर आते हैं। कवि के तद्भव प्रयोग, या कहना चाहिए खामोश तद्भव प्रयोग, जैसे 'तलक', 'पिराते', 'कुठरी', 'भीत' और 'दलिद्धर' आदि कविता में ऐसे प्रयोग किए गए हैं कि वे अपनी तद्भवता घोषित नहीं करते। यही नहीं कवि ने अपनी भाषा को अधिक समर्थ बनाने के लिए 'जमाना साँप का काटा', 'मछलियाँ फँसाना', ' अपना गणित करना', ' सिट्टी पट्टी गुम होना', आदि मुहावरों और 'आत्मा से अर्थ मर गया, मर गई सभ्यता' जैसी सूक्तियों का प्रयोग करते हैं।

मुक्तिबोध ने अपनी कविताओं में एक अनूठे शिल्प का प्रयोग किया है। यथार्थ को सम्पूर्ण रूप से चित्रित करने के लिए लंबी रचनाओं की सृष्टि करना, अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाना, फेंटेसी का प्रयोग करना और अनगिनत आरोप लगाए जाने की पीड़ा भोगना, पुराने बिंबो को नए अर्थ देना और नए बिंब निर्मित कर क्लिष्ट कवि होने का भार ढोना, नए प्रतीकों का गठन करना, भाषा को व्याकरण का दास न बनाकर व्याकरण को उसके पीछे हाँकने की कोशिश करना और परंपरा की दृष्टि से व्याकरणिक भूलों का शिकार होना, किसी की भाषा के शब्द उठाकर अपनी कविता के बीच रख देना कुछ ऐसे तत्व हैं जो मुक्तिबोध की कविता में सहज रूप से देखे जा सकते हैं ।

मुक्तिबोध के शिल्प में फेंटेसी की महत्वपूर्ण भूमिका है। यदि कोई उनके फेंटेसी प्रयोग को समझ ले तो वह कवि के काव्य में दुरूहता और जटिलता की शिकायत न करेगा। कवि के लिए फेंटेसी एक झीना पर्दा है जिसमें जीवन तथ्य झांक- झांक उठते हैं। इसी ताने बाने से सब कुछ दिखाई देता है। 'अंधेरे में' कविता को देखें तो फेंटेसी अपने वर्णन क्रम में एक सार नहीं रहती। वर्णन, सम्बोधन, बिंब और प्रतीक, वातावरण निर्माण और फिर से फेंटेसी और बिंब का प्रयोग करके वे 'हॉरर' या 'भय' का एक ऐसा वातावरण बनाते हैं कि पाठक अवाक हो जाता है।

मुक्तिबोध की कविता में बिंब या बिंबों का लयात्मक प्रयोग है। कवि अपने विवरण वर्णन के द्वारा एक समग्र बिंब प्रस्तुत करते हैं। वे एक सम्पूर्ण बिंब - समग्र बिंब प्रस्तुत करते हैं। बीच-बीच में कवि पूरक और गांठ दार बिंब भी देते हैं जो एक झटके के साथ आते हैं और अपनी चमक से चकाचोंध कर देते हैं। प्रायः थोड़ी थोड़ी देर में लंबी कविताओं में ऐसे बिंब आते हैं। उदाहरण के लिए, 'अंधेरे में' में से कुछ पंक्तियाँ देखें, "राह के पत्थर-ढोको के अंदर/ पहाड़ों के झरने/तड़पने लग गए/ मिट्टी के लोंदे के भीतर/ भक्ति का उद्रेक / भड़कने लग गया / धूल के कण में / अनहद नाद का कंपन / खतरनाक मकानों की छत से / गाडर कूद पड़े धम्म से / घूम रहे खंभे / भयानक वेग से चल पड़े हवा में / दादा का सोंटा भी करता है दाँव-पेंच / नाचता है हवा में / गगन में नाच रही कक्का की लाठी / यहाँ तक कि बच्चे की पें-पें उड़ती/ तेज़ी से लहराती घूमती है हवा में / सलेट –पट्टी / एक-एक वस्तु या एक-एक प्राणाग्नि बम है / ये परमास्त्र है, प्रक्षेपास्त्र है,

यम है / शून्याकाश में से होते हुए थे / अरे, अरि पर ही टूट पड़े अनिवार / यह कथा नहीं है , यह सब सच है, हाँ भाई / कहीं आग लग गई, कहीं गोली चल गई।"

इस कविता का बिंब विधान इतना घना है कि अर्थ एक बिंब में न होकर उनके बिंबों के गठन में है। भावों की अभिव्यक्ति के लिए मुक्तिबोध ने भाव बिंबों का बड़ी कुशलता से प्रयोग किया है। 'अंधेरे में' कविता से 'करुण' और 'भयानक' दो भाव बिंबों का उदाहरण देखें- 'मैं अपने कमरे में / यहाँ पड़ा हुआ हूँ / आँखें खुली हुई हैं / पीटे गए बालक सा मार खाया चेहरा / उदास इकहरा / स्लेट पट्टी पर खींची गई तस्वीर / भूत जैसी आकृति / वह मैं हूँ / - करुण

तालाब के आसपास में वन वृक्ष / चमक चमक उठते हैं हरे-भरे अचानक / वृक्षों के शीश पर नाच-नाच उठती हैं बिजलियाँ / शाखाएँ, डालियाँ, झूमकर झपटकर / चीख- एक दूसरी पर पटकती है सिर की अकस्मात - वृक्षों के अंधरे में छिपी हुई किसी एक / तिलिस्मी खोह का शिला द्वार / खुलता है धड़ से / - भयानक

देखा जा सकता है कि मुक्तिबोध के शिल्प पक्ष की शक्ति बिंब योजना में निहित है। आप देख सकते हैं कि कवि मुक्तिबोध की भाषा की चाल कुछ अलग सी है । उनकी रचना को देखकर ऐसा लगता है जैसे एक पुराना खंडहर हो , खूब फैला हो । पर चारों ओर मुर्दनी सी छायी हो।

बोध प्रश्न

- इस कविता की भाषा की चार विशेषताएँ लिखो।

16.4 पाठ सार

यह कविता न तो मुक्तिबोध ने अपने व्यक्तित्व की खोज के लिए लिखी थी। न यह किसी मानसिक दबाव में लिखी गई थी। बल्कि यह कविता इस देश में आ सकने वाले फासिज़्म के खतरे को ध्यान में रखते हुए लिखी गई थी। यही आशंका थी। यही चिंता थी। इसी आक्रोश की अभिव्यक्ति इस कविता में है। भाषा, संप्रदाय, जेंडर आदि के प्रश्न हैं जो आज की राजनीति और समाज में हैं। कवि ने भविष्य दृष्टा की तरह आज को देख लिया था।

मुक्तिबोध की काव्ययात्रा भयंकर अँधेरे से शुरू जरूर होती है लेकिन यह खत्म होती है प्रकाश के चरम बिन्दु पर। यह एक ऐसी स्वप्न कथा है जिसमें एक के बाद एक दृश्य आते चले जाते हैं और यह कथा अत्यंत जटिल, विरल और विस्तृत हो जाती है। अँधेरे में जो कुछ दिखाई भी देता है वह मन की दबी हुई इच्छाएँ ही नहीं हैं, ये आत्मसंभवा शक्ति का प्रतीक भी हैं। इसी लिए उसका सामना करने में कवि खुद तो डरा हुआ है ही, और भी सब कवि और साहित्यिक चुप हो रहते हैं।

'अँधेरे में' में जो स्वप्न कथा या फेंटेसी है वह आत्म दर्शन की ऐसी प्रक्रिया से युक्त है जिसमें कई रहस्य खुलते हैं। कवि को जो दिखाई देता है वही वैसा नहीं होता। उसके कुछ अर्थ

होते हैं और हमें उन अर्थों को इस कविता में देखना चाहिए। उनके अभिप्राय को समझने के लिए ध्यान पूर्वक पढ़ना होगा। यह भी याद रखना होगा कि जब कवि इस स्वप्न को देख रहे थे और या उसे प्रस्तुत कर रहे थे तब उनकी मानसिक स्थिति कैसी थी। आपको यह याद रखना होगा कि मनुष्य की जो इच्छाएँ दमित रह जाती हैं। वे सब उसके अवचेतन में चली जाती हैं। वही बाद में दूसरी तरह से स्वप्न में दिखाई देती हैं। कवि की सम्पूर्ण भावनाओं और ज्ञान का तनाव एक रहस्यमय पुरुष के रूप में बार-बार उसका पीछा करता है। कवि की अंतरात्मा ही उससे अनेक प्रश्न पूछती है।

मुक्तिबोध की इस प्रतिनिधि और प्रिय लंबी कविता के पाठकों को यह कविता परम अभिव्यक्ति की खोज, अपनी अस्मिता या सामाजिक अस्मिता की तलाश, अपने को आम आदमी मानने और समझने का उपक्रम आदि लगती है। यह भी स्पष्ट है कि मुक्तिबोध आत्म संघर्ष और आत्म साक्षात्कार के कवि हैं। लेकिन अंधेरे में जिस आत्म साक्षात्कार की बात है वह 'खुद' से आगे जाकर 'खुदी' तक पहुँचने तक ले जाता है। यह आत्म साक्षात्कार से जगत साक्षात्कार तक ले जाता है। वे वहाँ तक जाना चाहते हैं जहाँ उन्हें उनकी खोयी हुई परम अभिव्यक्ति मिल सके। यह अभिव्यक्ति कोई मामूली नहीं है। यह 'परम अभिव्यक्ति' है। यह अस्मिता है। इस कविता में कवि अपनी अस्मिता को जनसाधारण में मिलाकर अपने 'खुद' को विलय करके वास्तविक मुक्ति प्राप्त करना चाहता है। अपनी अन्य कविताओं के समान ही मुक्तिबोध ने 'अंधरे में' कविता में भी कोई उपसंहार या समाधान नहीं दिया है। वे क्रांति के महत्व और क्रांतिकारी परिस्थितियों से सिर्फ परिचय कराते हैं किन्तु क्रांति का मार्ग नहीं बताते। तलाश की समस्या तो है पर कोई रास्ता नहीं। वे पाठकों के सामने अपना आग्रह रखते हैं। समाज की उत्पीड़न करने वाली शक्तियों से सचेत करते हैं और उसके प्रति विद्रोह करने वाली ताकतों से सहानुभूति रखते हैं। इस दृष्टि से इस कविता का पाठ संभव है। मुक्तिबोध जो कुछ कहना चाहते थे, उनके मन की पीड़ा, उनके जो निष्कर्ष हैं वो सारे के सारे 'अंधरे में' कविता में दिखाई देते हैं। इसलिए यह कविता सदा के लिए प्रासंगिक बनी रहेगी। हर समय और समाज का सच रहेगी। जो भी कुछ कहेगा उसे अभिव्यक्ति के खतरे कवि के समान उठाने ही होंगे। यह कविता अँधेरे से उजाले की ओर ले जाने के लिए लिखी गई थी, डराने के लिए नहीं। उदासीनता और लाचारी से नहीं, तमाशबीन बनकर नहीं बल्कि जागृत होकर, खड़े होकर अपनी बात कहनी होगी ।

16.5 पाठ की उपलब्धियाँ

इस इकाई के अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं-

1.'अंधेरे में' कविता मुक्तिबोध की प्रतिनिधि लंबी कविता है जो अपनी पहचान खुद है।

2. इस कविता का आशय, उसके प्रमुख सरोकार, उसकी विशेषताएँ, भाषा-शैली आदि का परिचयात्मक विवरण, विवेचन और विश्लेषण करना अत्यंत चुनौती पूर्ण है।

3.अँधेरे में' के अंतर्गत कवि अपने भावों की अभिव्यक्ति करने की पुरजोर कोशिश करता दिखाई देता है।

4. इस कविता में कवि चाहता है कि पाठक कवि के मन में फैली हुई आशंका और घबराहट को देख लें और यह भी जान लें कि जो उसने स्वप्न देखा वह कभी सच न हो।

5. कवि अपने देश और समाज को अँधेरे में नहीं देखना चाहता, वह सब जगह उजाला देखना चाहता है।

16.6 शब्द संपदा

1. अस्मिता = अपने पन का भाव, हक, अपनी सत्ता का भाव
2. आध्यात्मिकता = भौतिकता से परे जीवन का अनुभव कर पाना
3. नाभिनाल बद्धता = गहरे जुड़े हुए
4. रहस्यवाद = वह भावनात्मक अभिव्यक्ति जिसमें कोई व्यक्ति या रचनाकार उस अलौकिक, परम, अव्यक्त सत्ता से अपना प्रेम प्रकट करता है
5. संवेदना = अनुभूति, सहानुभूति

16.7 परीक्षार्थ प्रश्न

खंड (अ)

(अ) दीर्घ श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 500 शब्दों में दीजिए।

1. अंधरे में कविता के आधार पर मुक्तिबोध द्वारा वर्णित आत्माभिव्यक्ति के संकट पर प्रकाश डालिए।
2. अंधरे में कविता के आधार पर 'रक्तालोकस्नात पुरुष' का शब्द चित्र प्रस्तुत कीजिए।
3. लंबी कविता के तत्वों के आधार पर 'अंधरे में' कविता का उदाहरण सहित विवेचन कीजिए।
4. फेंटेसी के लक्षणों के आधार पर 'अंधेरे में' कविता की विवेचना कीजिए।
5. 'अंधरे में' कविता मध्यवर्ग की अस्मिता की खोज का प्रयास है। स्पष्ट कीजिए।
6. 'अंधरे में' कविता में अभिव्यक्त ट्रेजडी का विश्लेषण कीजिए।

खंड (ब)

(आ) लघु श्रेणी के प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 200 शब्दों में दीजिए।

1. 'अंधेरे में' कविता के अंधरे पर प्रकाश डालिए।

2. 'अंधरे में' कविता के 'मैं' की व्यथा का वर्णन कीजिए।
3. अंधरे में कविता में अंधेरा किसका प्रतीक है?
4. फेंटसी का आत्मान्वेषण से क्या संबंध है?
5. अंधेरे में कविता का मूल प्रतिपाद्य स्पष्ट कीजिए।
6. 'अब अभिव्यक्ति के खतरे उठाने ही होंगे' से मुक्तिबोध का क्या कहना है?

खंड (स)

I. सही विकल्प चुनिए -

1. निम्नलिखित में से 'अंधरे में' कविता के संबंध में असत्य कथन का चयन कीजिए। ( )
   (अ) अंधरे में कविता को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ ।
   (आ) इस कविता का प्रकाशन 1964 में हुआ ।
   (इ) इस कविता का पूर्व और पूर्ण शीर्षक ' आशंका के दीप: अंधेरे में" था ।
   (ई) यह कविता फेंटेसी युक्त लंबी कविताओं में से एक है ।
2. निम्नलिखित में से असंगत आलोचक व उनके कथन का चयन कीजिए ( )
   (अ) अस्मिता की खोज – नामवर सिंह
   (आ) यह कविता पूरी नहीं होना चाहती – हजारी प्रसाद द्विवेदी
   (इ) लहरीली थाहों वाली नीली झील में काँपता कमल – नन्द किशोर नवल
   (ई) आपातकाल का पूर्वाभास – अशोक वाजपेयी
3. 'अंधरे में' कविता देश के आधुनिक जन इतिहास का स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात का एक दहकता इस्पाती दस्तावेज है।" यह कथन किसका है? ( )
   (अ) राम विलास शर्मा (आ) शमशेर बहादुर सिंह (इ) अज्ञेय (ई) बच्चन सिंह
4. 'रक्तालोकस्नात पुरुष' का अर्थ है? ( )
   (अ) खूनी कातिल (आ) खून से नहाया हुआ व्यक्ति
   (इ) कवि का भूत (ई) काव्यनायक का आदर्श प्रतिरूप
5. 'अंधरे में' कविता नहीं है – ( )
   (अ) फंटेसी (आ) रहस्य (इ) तिलस्म (ई) आनंद

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

1. 1942 में तार सप्तक ..... के विरोध में आया ।

2. 'इसमें अज़ब और अद्‌भुत रूप से व्यक्ति और जन का एकीकरण है।" व्यक्ति है …….. और जन है सर्वहारा का प्रतीक ……..।
3. कविता के तीसरे खंड के जुलूस में …….. हैं, पर ……..नहीं।
4. 'अंधेरे में' कविता में अंकित 'मृतदल की शोभायात्रा' वास्तव में एक …….है।

III. सुमेल कीजिए -

1. अंधेरे में	(अ) 1964
2. चाँद का मुँह टेढ़ा है	(आ) 1943
3. गजानन माधव मुक्तिबोध	(इ) 1917
4. तार सप्तक	(ई) 2004

16.8 पठनीय पुस्तकें

1. चाँद का मुँह टेढ़ा है : गजानन माधव मुक्तिबोध
2. निराला और मुक्तिबोध चार लंबी कविताएँ : नन्द किशोर नवल
3. मुक्तिबोध रचनावली -2 : नेमी चंद्र जैन
4. 'अंधेरे में' - इतिहास : बच्चन सिंह (संपादित)